अपनी बात

जैन-जगत् के एक ज्योतिर्धर आचार्य के अन्तःस्रोत से निःसृत काव्य-वाणी का संयोजन करके मुनि श्री हीरालालजी ने धुंधले और मिटे जा रहे काव्य-चिह्नों को श्रद्धा से, श्रम से, सतर्कता से समेट कर सेफ (Safe) में रख लेने का एक भगीरथ प्रयत्न किया है। और 'सन्मति ज्ञान-पीठ' ने उन्हें प्रकाश में लाकर अपनी उदार तथा असाम्प्रदायिक दृष्टि का सक्रिय परिचय दिया है।

इतना तो अवश्य कहना होगा कि कविता केवल आकाश में उड़ने का नाम नहीं है। वस्तुतः वही "कविता" कविता है जो सब ओर से जन-जीवन का स्पर्श करे, सोई हुई मानवता के भाग्य जगाए, जीवन की सच्ची राह बताए। आचार्य श्री जी की अन्तर्वाणी इसी कसौटी का खरा नमूना है। वह हमें जीवन की विडम्बना से बचाती है और जीवन की स्वस्थ और सही राह बताती है।

प्रस्तुत संकलन के प्रकाशन के लिए जिन महानुभावों ने द्रव्य-सहायता प्रदान की है, हम हृदय से उनका आभार मानते हैं।

आशा है, सहृदय पाठक प्रस्तुत रत्न-माला का हृदय से स्वागत करेंगे और आचार्य-वाणी का रसास्वादन करके अधिक से अधिक लाभ उठाएँगे।

रतनलाल जैन

मंत्री, सन्मति ज्ञान-पीठ, आगरा।

पृष्ठाङ्क

(१)

(२)

(३)

(४)

(५)

पूज्य श्री खूबचन्दजी महाराज की संक्षिप्त

जीवन-झाँकी

"वाग्जन्मवैफल्यमसह्यशल्यं, गुणाद्भुते वस्तुनि मौनिता चेत्"

—महाकवि हर्ष

विश्व के इस विराट् पुष्पोद्यान के आँगन में प्रतिदिन लाखों-करोड़ों निर्गन्ध फूल खिलते हैं और मुरझा जाते हैं। उनसे प्रकृति की सुन्दरता और मोहकता में कोई परिवर्तन नहीं होता। बहुतों के सम्बन्ध में तो संसार यह भी नहीं जानता कि वे कब खिले और कब मुरझा गये! न जनता की आँखों ने उनका खिलना जाना और न मुरझाना। वे केवल कहने मात्र को फूल थे। उनके अन्दर जन-मन-नयन के आकर्षण के लिए अपनी कोई गन्ध नहीं थी, खुशबू नहीं थी।

पर गुलाब का फूल जब डाल पर खिलता है तो क्या होता है? वह आँख खोलते ही अपने दिव्य सौरभ दान से प्रकृति की गोद को सुगन्ध और सुवास से भर देता है! हज़ार-हज़ार हाथों से सुगन्ध लुटाकर भूमण्डल के कण-कण को महका देता है।

इसी प्रकार इस धराधाम पर न मालूम कितने मानव जन्म लेते हैं और मरते हैं। संसार न उनका पैदा होना जानता है और न मरना। वे स्वार्थ-वासना के पतंगे और भोग-विलास के कीड़े संसार की अँधेरी गलियों में कुछ दिन रेंगते हैं और आखिर काल-लीला के ग्रास हो जाते हैं। उनके जीवन का अपना कोई ध्येय नहीं होता, कोई लक्ष्य नहीं होता। उनका जीवन इस साढ़े तीन हाथ के पिंड या अधिक से अधिक एक छोटे-से परिवार की सीमा तक ही महदूद रहता है। इसके आगे वे न सोच सकते हैं और न समझ सकते हैं।

परन्तु, कुछ महामानव धरतीतल पर गुलाब का फूल बन कर अवतीर्ण होते हैं। जिनके आँख खोलते ही घर-परिवार का बगीचा खिल उठता है। समाज का सूना आँगन मुस्कराहट से भर जाता है और राष्ट्र

प्रसन्नता तथा आशाओं की हिलोरें लेने लगता है। वे स्वयं जागरण की एक गहरी अँगड़ाई लेकर सोई हुई मानवता के भाग्य जगाते हैं। उनको पाकर मानव-जगत् एक नयी चेतना, एक नयी स्फूर्ति का अनुभव करता है।

पूज्य श्री खूबचन्दजी महाराज ऐसी ही एक चमकती हुई आत्मा थे, जो २२ वर्ष की इठलाती हुई तरुणाई में भोग-विलास और धन-वैभव को ठोकर मारकर त्याग-वैराग्य तथा संयम के पुण्य पथ पर चले। उनके साधना-जीवन का हर पहलू इतना स्वच्छ, निर्मल और उज्ज्वल था कि आज भी बरबस वह हमें अपनी ओर आकर्षित कर रहा है।

उनका जन्म गेंदीबाई की कोख से कार्तिक शुक्ला ८ वि० सं० १९३० को निम्बाहेड़ा (मालवा) में सेठ टेकचन्द ओसवाल के घर हुआ। जब उन्होंने पृथ्वी तल पर आँखें खोलीं तो धन-वैभव उनके चारों ओर बिखरा पड़ा था। कीर्ति और यश उनके आँगन में छुम-छुम खेलते थे। सुख-समृद्धि उन्हें पालना झुलाते थे। एक भरे पूरे और सम्पन्न वातावरण में उनका लालन-पालन हुआ। वे बचपन से सौम्य और शान्त स्वभाव के धनी थे। १६ वर्ष की उम्र में अठाना गाँव के सेठ देवीचन्दजी की सुशीला कन्या साकरबाई के साथ उनका पाणिग्रहण संस्कार सम्पन्न हुआ। पत्नी बड़ी धर्मशीला, पतिपरायण, सुन्दरी एवं आज्ञाकारिणी थी।

बाल्य काल से ही खूबचन्दजी को सत्संग करने और सन्त-वाणी सुनने का बड़ा शौक था। साधु सन्तों के आगमन का समाचार सुनकर उनका मन-मयूर नाच उठता था। मदमाता यौवन भी उनकी धर्म-चेतना और साधु संग के चाव को मन्द न कर सका। आसपास कहीं भी सन्त-समागम होता तो वे सब काम-काज छोड़कर दौड़े जाते और उपदेशामृत का पान करके फूले न समाते।

शादी के चार वर्ष बाद यानी २० वर्ष की भरी जवानी में सन्त-वाणी श्रवण कर उनके अन्तर्मन में वैराग्य की एक लहर जागी। जिस दीवानी जवानी मे झूम कर कुछ मनचले युवक अपनी यह वासना-मूलक बेसुरी तान छेड़ा करते हैं कि :—

"ऐश कर दुनिया में गाफिल, जिन्दगानी फिर कहाँ !
जिन्दगानी गर मिली भी, नौजवानी फिर कहाँ।"

परन्तु, हमारे चरित नायक पर मदमाते यौवन का नशा अपना वह विकृत रंग न चढ़ा सका। वहाँ तो उसे अपना दीवाना रूप छोड़ कर यह सुहावना राग ही अलापना पड़ा :—

"कुछ कर लो नौजवानो ! उठती जवानियाँ हैं।
खेतों को दे लो पानी यह बह रही है गङ्गा।"

भोग-विलास के सारे साधन चारों ओर अपनी मादकता बिखेर रहे थे ! पत्नी प्रेम पुजारिणी के रूप में चरणों की चेरी बनी हुई थी। चहुँ ओर से मन को गुदगुदा देने वाला परिवार का प्यार और स्नेह बरस रहा था। इतना होते हुये भी उनका मन संसार की वासनाओं और प्रपचों से उत्तप्त हो उठा ! अन्तर्हृदय मे वैराग्य की जलती हुई चिनगारी सुलग उठी ! आखिर, मन मे ठान ही तो ली कि वासना के जाल को तोड़ कर, आत्म-चिन्तन एवं साध्वाचार की धूनी रमा कर, सयम तथा तपश्चरण के तपते हुए अग्नि-पथ पर फौलादी कदम बढ़ा कर, सोई हुई आत्म-शक्तियों को जगा कर, अब मुझे जीवन की ऊँचाइयों को पार करना है। वस्तुतः ऐसी भरी-पूरी स्थिति में ही त्याग-भावना का उदय होना सच्चा त्याग है। जिसके लिये हमारे शास्त्रकार ऊर्ध्वबाहु होकर स्पष्ट घोषणा कर रहे हैं :—

"जेय कंते पिए भोए, लद्धे विपिट्ठी कुव्वई।
साहीणे चयई भोए, सेहु चाइत्ति वुच्चइ।"

मन में साहस की बिजली भर कर जब उन्होंने अपनी बात माता-पिता के सामने रखी तो सारे परिवार मे एक तूफान-सा आ गया। एक भागा दौड़ी-सी मच गई। सब आ-आकर लगे कहने और समझाने—"रहने दो इन वैराग्य की बातों को ! तुम अभी बच्चे हो, अक्ल के कच्चे हो ! साधुता का मार्ग कितना कठोर और काँटों से भरा है—यह तुम्हारी समझ से बाहर की चीज है। वहाँ तो हर घड़ी कठिनाइयाँ जीवन को चारों ओर से घेरे खड़ी रहती हैं। होश ठिकाने आजायेंगे जब चलोगे उस तपस्या के मार्ग पर !"

पर, उनके वैराग्य की तस्वीर का रग इतना कच्चा न था जो एक फूँक से ही उड़ जाता ! साधु-जीवन की कठोरताओं को सुनकर ही काफूर हो जाता। परिवार वालों की इन बहका देने वाली बातों का उनके मन पर तनक भी असर न हुआ। पिता ने समझाया। माता ने हुलसाया ! पत्नी ने अपना मोहक जाल बिछाया ! पर, मजाल जो वे अपने सकल्प से जरा भी विचलित हो जायँ। जब घर वालों ने देखा कि हमारे सब हथियार भोंटे हो गये हैं, सब दलीलें और युक्तियाँ व्यर्थता में विलीन हो गई हैं, तो उन्हें एक उपाय सूझा। वह यह कि चाहे कुछ भी हो, हम इसे मुनि-दीक्षा लेने की अनुमति नहीं देंगे। बिना अनुमति के यह कर भी क्या सकता है ! डूबते हुओं को तिनके का सहारा मिल गया।

लेकिन, खूबचन्दजी भी अपने ढंग के खूब ही थे। दिन पर दिन उनके मन में यह भावना जोर पकड़ती गयी कि "जिस सयम के मार्ग पर चलने का दृढ़ सकल्प कर लिया है, जिस प्रकाश को आत्मसात् करने के लिए मन बेतरह लालायित हो उठा है। उसकी प्राप्ति के लिए अब कोई कसर न उठा रखूँगा। पीछे कदम हटाने का नाम न लूँगा। अब तो मजिल पर पहुँच कर ही दम लेना है। सचमुच सच्चा वीर और साहसी कठिनाइयों के सामने सीना तान कर खड़ा हो जाता है। पीछे हटना उनकी शान के खिलाफ है; आगे बढना उनका जन्मजात अधिकार है:—

"न पीछे हटाया कदम को बढ़ाकर।
अगर दम लिया भी तो मंजिल पे जाकर ॥"

आज्ञा न मिलने के कारण दो वर्ष तक घर में ही तपस्या का जीवन चलता रहा। आत्म मन्थन होता रहा। अन्त में परिवार वालों को उनके वज्र साहस और अचल धैर्य के सामने झुकना पड़ा। आखिर, बालू की दीवारें गगा की धवल धारा को कब तक रोके रह सकती हैं। कृत-प्रतिज्ञ वीर के मनः सकल्प को कैसे मोड़ा जा सकता है :—

"क ईप्सितार्थ स्थिर निश्चयं मन,
पयश्च निम्नाभिमुखं प्रतीपयेत् ।"

मजबूर होकर घर वालों को कहना पड़ा—"अच्छा, जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा करो। अब तुम्हें रोकना व्यर्थ है। तुम्हारी ज्योति वह ज्योति है, जिसे कोई बुझा नहीं सकता। जिस राह पर चलने का तुमने पक्का इरादा कर लिया है, उस पर आगे बढने के लिए हमारी तरफ से खुली आज्ञा है।"

अनुमति का स्वर कानों में पड़ते ही उनका मन हर्ष विभोर होकर उछलने लगा। हृदय में आनन्द का क्षीर सागर ठाठें मारने लगा। दरअसल ऐसे दृढ़प्रतिज्ञ वीर ही सयम की कठोर राह के राहगीर बन सकते हैं, जिनका मन मेरु बाधाओं के प्रबल झंझावातों से जरा भी कम्पित नहीं होता। क्योंकि सयम का मार्ग कोई फूलों का बिछौना नहीं है। यह तो तलवार की नंगी धार पर धावन करने का असिधारा व्रत है। जिस पर कनक-कामिनी के जाल को तोड़ने वाले विरले वीर बाँके ही चल सकते हैं, कायर नहीं :—

"रमणी के चंचल नैनों का या लक्ष्मी-वैभव का जाल।
तोड़ सका है इस पृथ्वी पर विरला ही माई का लाल।"

अस्तु, अनुमति मिलते ही श्री खूबचन्दजी ने आषाढ शुक्ला ३ सं० १६५२ को चन्द्रवार के दिन नीमच शहर में वादी-मान-मर्दक पंडित नन्दलालजी महाराज के चरणों में बड़ी धूम धाम और समारोह के साथ जैनेन्द्री दीक्षा धारण की। उनके बाद धर्मशीला पत्नी ने भी संयम के मार्ग पर चल कर छाया की तरह पति का अनुसरण किया।

वैराग्य मूर्ति श्री खूबचन्दजी ने मुनि दीक्षा लेने मात्र से अपने आपको कृतकृत्य नहीं समझा। जीवन के समुन्नयन एवं उद्रेचन की तीव्र भावना ने उन्हें सब ओर निष्क्रिय तथा पंगु बनकर नहीं बैठने दिया। उनका अन्तरात्मा बोल उठा कि "ज्ञान के प्रकाश के बिना आचार चमक नहीं सकता, बिना ज्ञान के आचरण अन्धा है, आगे बढ़ने में असमर्थ है। ज्ञान की मशाल के अभाव में कहीं भी ठोकर खाकर गिर सकता है। जब तक तेरे पास आचार-कवच और ज्ञान की मशाल न होगी, तब तक जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य की ओर निर्भयभाव से गति प्रगति नहीं की जा सकती। ज्ञान सरोवर गुरुदेव की चरण शरण में आकर यदि ज्ञान की प्यास न बुझा सका तो इससे बढ़कर भाग्यहीनता क्या होगी?" गुरुदेव के सामने मन के भाव प्रकट किये तो गुरु ने गम्भीर मुद्रा में कहा--"वत्स! तुम्हारा विचार बिल्कुल ठीक है। बिना ज्ञान के तो मनुष्य पशु है। ज्ञान प्रकाश लिये बिना साधक एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता। पहले ज्ञान है और बाद में आचार है —

"पढमं नाणं तओ दया"

गुरुदेव की अन्तर्वाणी ने शिष्य के हृदय में विद्युत् का काम किया। विनय भाव से गुरु चरणों में बैठकर ज्ञान साधना का श्री गणेश किया। जैनागमों और अन्य ग्रन्थों का डटकर अध्ययन तथा चिन्तन-मनन किया। नम्रता, विनय भाव और कठोर पुरुषार्थ के कारण उनका ज्ञान दिन दूना रात चौगुना चमकता चला गया। इने गिने वर्षों में ही वे एक अच्छे, पण्डित, चोटी के आगमज्ञ और विद्वान् बन गये।

आपका जीवन बड़ा ही तपोमय था। आप प्रतिवर्ष अढाई मास का तपश्चरण अवश्य कर लिया करते थे। बहुत दिनों तक १२ घण्टे का मौन व्रत भी चलता रहा। आपका संयत जीवन, त्याग वैराग्य का ज्वलंत नमूना था। स्वभाव इतना शान्त और मधुर था कि जो एक बार भी आपके सम्पर्क में आ जाता, वह वैराग्य-भावना तथा शान्त स्वभाव की अमिट छाप लिये बिना न लौटता। आपकी व्याख्यान शैली तथा उपदेश-पद्धति बड़ी ही वैराग्यमय, रोचक और ओजपूर्ण थी। साथ ही कण्ठ एवं स्वर

की मधुरता और सरसता जन-मन को मुग्ध कर देती थी। सत्य और अहिंसा का डंका बजाते हुये जिधर से भी आप निकल जाते, हजारों की संख्या में जनता आपके दर्शनों के लिये उमड़ पड़ती। आपकी उपदेशधारा इतनी प्रभावशालिनी और चुभनी हुई थी कि उससे प्रभावित होकर जयपुर-नरेश श्री माधोसिंह तथा अलवर-नरेश श्री जयसिंह ने महापर्व संवत्सरी के दिन अगता हमेशा के लिये रखाया सचमुच आपकी वाणी में जादू का असर था।

जिन-वाणी का अमृत-पान करते हुये, जन-जीवन को जगाते हुये, गाँव-गाँव में अहिंसा, सत्य, दया, दान, शील और सन्तोष आदि जीवन-सिद्धान्तों की दुन्दुभी बजाते हुये भारत के मालवा, मेवाड़, मारवाड़, दिल्ली, आगरा, मेरठ, पंजाब आदि प्रान्तों और नगरों में आपका बड़ा शानदार और तूफानी भ्रमण हुआ। सब ओर जनता ने आपका हार्दिक स्वागत किया और आपकी वाणी का सुधा-पान करके अपने को धन्य-धन्य समझा। आपकी आचार-निष्ठा, शान्तिप्रियता एवं स्वभाव की मृदुता के इतर सम्प्रदाय वाले विरोधी तत्व भी कायल थे और सादर सभक्तिभाव आपके चरणों में शीश झुकाकर अपना हार्दिक सम्मान व्यक्त करते थे।

संसार-क्षेत्र में जो सम्बन्ध पिता और पुत्र का है, वही सम्बन्ध संयम क्षेत्र में गुरु शिष्य का है। इसी भावना से अनुप्राणित होकर एक चिन्तनशील आचार्य का कहना है कि—"पुत्ताय सीसाय सम भवित्ता"—अर्थात् पुत्र और शिष्य बराबर होते हैं। हमारे चरित नायक को भी पुत्र स्थानीय पण्डित कस्तूरचन्दजी, पंडित केसरीमलजी, पंडित सुखलालजी, पंडित हर्षचन्दजी और पंडित हजारीमलजी पाँच योग्य शिष्य रत्न प्राप्त हुये थे, जिन्होंने अपने विनीतभाव, ज्ञान-निष्ठा एवं जीवन की सरसता के द्वारा उदा गुरु की महत्ता को गौरवान्वित किया।

सम्प्रदायों के रूप में अलग अलग बिखरी हुई समाज की शक्तियों को संगठित करने, एकता का रूप देने और उदारवृत्ति से मिल जुल कर रहने के आप प्रमुख और प्रबल पक्षपाती थे। आज के प्रगतिशील युग में कोई भी समाज पारस्परिक, सहयोग और संगठन के बिना संसार की समस्याओं के आगे टिक नहीं सकता—यह महास्वर आपकी वाणी में गूँजता रहता था। यही कारण था कि जब सं० १९९० में अजमेर में होने वाले अखिल भारतीय मुनि सम्मेलन की चर्चा आपके सामने आई तो आपका हृदय हर्षातिरेक से गद्गद् हो उठा। अत्यन्त प्रसन्न भाव से सम्मेलन में पधारने की स्वीकृति देकर अपने हृदय की उदारता और

विशालता का प्रत्यक्ष परिचय दिया और मार्ग की कठिनाइयों से जूझते हुए ठीक समय पर पधार कर मुनि-सम्मेलन के रंगमञ्च की शोभा को चार चाँद लगा दिये। आपने अपने सम्प्रदाय की ओर से सफल प्रतिनिधित्व किया। मुनि-सम्मेलन में आने वाले मुनि-मण्डल पर आपके स्वभाव-माधुर्य तथा शान्त प्रकृति की अमिट छाप पड़ी।

मौन भाव से संघ-सेवा, कर्तव्य-पालन तथा निष्काम संयम-निष्ठा—यही आपके जीवन का उज्ज्वल आदर्श था। मान-प्रतिष्ठा या पद-लिप्सा की भूख आपको छू तक न गई थी। पर खिला हुआ फूल कहीं पत्तों में छिपा रह सकता है? आपके सद्गुणों की मधुर सुगन्ध ज्यों ही समाज के आँगन में फैली तो प्रतिष्ठा अपने आप पीछे फिरने लगी। पीछे दौड़ने वालों से प्रतिष्ठा छाया की तरह कोसों दूर भागती है, और पीठ देकर चलने वालों की वह चरण-चेरी बन कर रहती है—यह एक माना हुआ सार्वभौम सिद्धान्त है। कविता की भाषा भी यही कहती है :—

"भागती फिरती थी दुनिया जब तलब करते थे हम।
अब जो नफरत हमने की वह बेकरार आने को है॥"

अस्तु, सं० १९९१ में आपके समुज्ज्वल व्यक्तित्व और दायित्व-निर्वाह की अपूर्व क्षमता पर मुग्ध होकर संघ ने आपको आचार्य पद प्रदान करके अपना हृदय-सम्राट् स्वीकार किया और समाज का नेतृत्व आपके हाथों में सौंप कर अपने को भाग्यशाली समझा। आपने संघ की इस बोझिल जवाबदारी को भी बड़ी धीरता, गम्भीरता, कर्तव्य बुद्धि और निर्मल भाव से जीवन के अन्तिम क्षणों तक सफलतापूर्वक निभाया।

आपका हृदय इतना उदार और विशाल था कि सम्प्रदाय के आचार्य होते हुए भी साम्प्रदायिकता से आप बिल्कुल अलग थलग थे। *आपकी इस उदारवृत्ति से दूसरे सम्प्रदाय भी बड़े प्रभावित थे।* इसका प्रत्यक्ष दर्शन तो तब हुआ जब सं० १९९३ में नारनौल श्री संघ ने पूज्य श्री पृथिवीचन्द्रजी के आचार्य-पद-महोत्सव पर पधारने की आपसे विनम्र विनती की और आचार्य श्री जी ने बिना ननुनच किए प्रसन्न मन से अविलम्ब स्वीकृति प्रदान करके उसे सक्रिय रूप दिया। जब आप नारनौल पधारे तो वहाँ की जनता प्रसन्नता से नाच उठी वहाँ के स्वागत समारोह का दृश्य बड़ा ही भव्य था। आचार्य श्री की जय-जय ध्वनि से आकाश गूँज रहा था। तत्रस्थ मुनिराजों और श्रावक-वर्ग ने आपको अपने बीच पाकर हर्षातिरेक की अनुभूति की। नारनौल का जन-वर्ग आपके वैराग्यमय

जीवन, सरल सौम्य स्वभाव और प्रभावशील व्याख्यान शैली से अत्यन्त प्रभावित हुआ।

दिल्ली श्रीसंघ के भावपूर्ण आग्रह तथा भक्ति भाव से प्रेरित होकर आचार्य श्री जी दिल्ली में कई वर्ष विराजमान रहे। आपकी नम्र और प्रभावोत्पादक वाणी से स्थानीय श्रीसघ में धर्म की अच्छी जागृति रही। वहाँ का युवक वर्ग भी आपकी शान्त और जादू भरी वाणी पर मुग्ध था।

ब्यावर सघ की विनम्र विनती को ध्यान में रखते हुए आपका विहार दिल्ली से ब्यावर की ओर हुआ। परन्तु उधर पहुँच कर आपका शारीरिक स्वास्थ्य कुछ ठीक नहीं रहा। जीवन की गोधूलि वेला म भी आप इतने कर्मठ और धर्मनिष्ठ थे कि स्वाध्याय, ध्यान, चिन्तन आदि में अपनी ओर से कोई कमी न रखते थे। समाज इस ढलते हुए, अस्ताचल की ओर खिसकते हुए सूर्य के प्रति यही मगल कामना करता रहा कि यह महान् सूर्य अभी कुछ दिनों और जगमगाता रहे। पर, विधि को यह मन्जूर न था। स० २००२ चैत्र शुक्ला तृतीया को पार्थिव शरीर का आवरण छोड़ कर जैन-जगत् की वह जलती हुई ज्योति समाज की आँखों से ओझल होगई।

भौतिक शरीर से न सही, पर यश शरीर से आचार्य श्री जी जन मन में आज भी जीवित हैं। जीवन की सही दिशा की ओर मूक सकेत कर रहे हैं। हमारा कर्तव्य है कि भक्ति भाव से उस महान् ज्योति के दिव्य गुणों को कोटि-कोटि नमन करें और उनके बतलाये मार्ग पर चल कर जगमग जीवन ज्योति जगाएँ।

—मुनि सुरेशचन्द्र शास्त्री, साहित्यरत्न

———

स्तवन

[१]

चतुर्विंशति जिन-गुणगान

(तर्ज—आज रंग[1] वरसे, २ म्हारा नेमकुंवर विन जिवड़ो तरसे रे)

शुभ फल पावोरे, चौवीस जिनन्दजी का नित गुण गावो रे ॥
धर्म जिनेश्वर चन्दा प्रभुजी, ऋषभ प्रथम अवतारी रे।
महावीर कुन्थु जिन जपतां, जय-जय कारी रे ॥ १ ॥
शान्ति नाम से साता वरते, अनन्त सुपार्श्व ध्यावे रे।
सुमतिनाथ प्रभु पार्श्व परसतां पाप पलावे रे ॥ २ ॥
रिष्टनेमि श्री मुनिसुव्रतजी, विमल-विमल गुणधारी रे।
पद्म प्रभु अभिनन्दन, आवागमन निवारी रे ॥ ३ ॥
श्री श्री सम्भव नमि मल्लि, महाराज पाप मल हरिया रे।
वासुपूज्य शीतल जिन सुख, शिवपुर का वरिया रे ॥४॥
सुविधिनाथ श्री अजित प्रभु पच्चीस भावना पाली रे।
अरहनाथ श्रेयांस अचल पद लियो सम्भाली रे ॥ ५ ॥
इण विध जाप जपै जिनवर का, पेट तणे परभावे रे।
अरति भय दुःख दूर टले, [2]कमला घर आवे रे ॥ ६ ॥
फरिदकोट पूज्य [3]मुन्नालालजी, नव ठाणा से आया रे।
महामुनि नन्दलाल तणा शिष्य, जिन गुण गाया रे ॥७॥

---

१ वरण किया—गाथा। २ लक्ष्मी। ३ पूज्य हुक्मीचन्दजी म० के सम्प्रदाय के एक आच

[२]

वीर-गुण-गान

(तर्ज—संग चलूंजी पिया)

मत भूलो कदा रे मत भूलो कदा, वीर प्रभु के गुण गावो सदा ॥
ज्यों-ज्यों भाव प्रभु प्रगट किया, गणधर सूत्रों में गून्थ लिया ॥ १ ॥
प्रभुजी की वाणी को आज आधार, सुन सुन सफल करो अवतार ॥ २ ॥
जल से नहाया तन मैल हटे, प्रभुजी की वाणी से पाप कटे ॥ ३ ॥
तुरत फुरत सब विपत टले, जिहाँ तिहाँ वंछित आश फले ॥ ४ ॥
मुनि नन्दलालजी हुकुम दिया, जद रावलपिंडी चौमासा किया ॥ ५ ॥

---

[३]

जिन-गुण

(तर्ज—पूर्ववत्)

जिनराज ऐसा रे जिनराज ऐसा, निस दिन म्हारे मन में बसा ॥
जगत में जहाज सहाज[1] जगदीश, शत्रु मित्र पर राग न रीश ॥ १ ॥
गुण तो अनन्त दीठा नेण ठरे, इन्द्रादिक सुर पाँय परे ॥ २ ॥
वाणी तो वरसे ज्यों अमृत धार, भव जीव सुणे जांके हर्ष अपार ॥ ३ ॥
जिहाँ तिहाँ विचरे श्री भगवान, धर्म को उद्योत करे जिम[2] भान ॥ ४ ॥
माँडलगढ़ में मुनि नन्दलाल, तस शिष्य जोड़ बनाई रसाल ॥ ५ ॥

---

[४]

जिन-वाणी

(तर्ज—पूर्ववत्)

जिनवाणी ऐसी रे जिनवाणी ऐसी, कुमति गई ने म्हारे सुमति बसी ॥
सुनत मिटत दुष्ट कर्म अरी, जो भव[3] जीव सुने भाव धरी ॥ १ ॥

१ सहायक । २ सूर्य । ३ भव्य ।

जोजन वाणी परकाशे जिनराज, इन्द्रादिक आवे सुणवा के काज ॥२॥
सुन सुन उत्तम जीव अनेक, उतर गया भव-सागर देख ॥३॥
काम क्रोध मद लोभ की झाल[1], शीतल होय सुनता तत्काल ॥४॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य जान, गायो चित्तौड़ में करिये प्रमान ॥ ५ ॥

[५]
परमेष्ठी-स्तुति

(तर्ज.—अवधू सो जोगी गुरु मेरा)

आछो आनन्द रंग बरसायो, मैं तो देख सभा हुलसायो ॥
अरिहन्त नमूँ पद पहले, भव जीवां ने शिवपुर मेले,[2]
लोकालोक को स्वरूप बतायो ॥ १ ॥
दूजे पद श्री सिद्ध ध्याऊँ, कर जोड़ी ने शीश नमाऊँ।
जनम मरणको दुःख मिटायो ॥ २ ॥
आचारज तीजे पद सोहे, चारों तीरथ के मन मोहे।
ज्ञान ध्यान में चित्त रमायो ॥ ३ ॥
उपाध्याय मेरे मन भावे, कई सन्तों को ज्ञान भणावे।
जां की बुद्धि को पार न पायो ॥ ४ ॥
सर्व साधुजी गुण का दरिया, जाने पाप सहु परहरिया।
मोकूँ मुक्ति को पंथ बतायो ॥ ५ ॥
ये तो पाँचों ही पद भज भाई, नित एक चित्त ध्यान लगाई
कारज सिद्ध हुवे मन चहायो ॥ ६।
नन्दलाल मुनि गुणधारी, तस शिष्य कहे हितकारी
मैं तो मंगलिक आज मनायो, ॥ ७।

[६]
गौतम-गुणगान

(तर्ज—रे जीवा ! जिनधर्म कीजिये)

गौतम गणधर वंदीए, पूरण लब्धि-भंडार।
चौवीसमां वर्धमान के, चेला चतुर सुजान ॥

१ ज्वाला। २ मेले—स्थापित करे।

सब साधां में शिरोमणि, ऊगा जगत में भान ॥ १ ॥
चवदे पूर्वना[1] पाठीया, ज्ञान चार बखान।
तपस्या करी चित निर्मली, नहीं मन्न[2] गिल्यान ॥ २ ॥
परवत में मेरु बड़ो, सीता[3] नदियाँ के माँय।
स्वयंभूरमण दधियाँ[4] बिषे, ऐरावत[5] गज माँय ॥ ३ ॥
सब रस में इक्षु रस बड़ो, दान में बड़ो अभय दान।
सम अनेक हैं ओपमा, कहाँ लग करूँजी बखान ॥ ४ ॥
सर्व बाणूं[6] वर्ष नो आऊखो, दश जुग रया घर माँय।
पीछे पद्मा गुरु भेटिया, चौबीसमां जिनराय ॥ ५ ॥
तीस बरस छद्मस्त[7] रया, पीछे केवल ज्ञान।
द्वादश बर्ष नो पालने, पाया पदनिर्वान ॥ ६ ॥
अनन्त सुखां में विराजिया, माता पृथ्वी के नंद।
'खूबचन्द' कहे थारा नाम से, भयो मगन आनन्द ॥७॥

[७]

सुधर्मा गणधर का स्तवन

(तर्जः—संग चलूंजी पिया)

कर कुमति विदा २ स्वामी सुधर्माजी ने वंदूं सदा ॥
वीरजी के विराज्या परथम पाट, सुधी बताई[8] जाने मुगति की बाट ॥ १ ॥
सो वर्ष की आऊंखो पाया ताम, पच्चास वर्ष रहीया गृहवास ॥ २ ॥
संजम लिये धारनी के अंगजात, गुरु भेट्या जाने त्रिलोकी नाथ ॥ ३ ॥
मति श्रुत अवधि मनपर्यव ज्ञान, चवदा पुरव विद्या को प्रमान ॥ ४ ॥
बयालीस वर्ष ध्याता निर्मल ध्यान, प्रकट हुओ पीछे केवलज्ञान ॥ ५ ॥
रूप दीपे जांको जगमग ज्योत, देवता से पण अधिक उद्योत ॥ ६ ॥
जम्बू सरिखा जांके शिष्य है विनीत, रात दिवस जांको चरणां में चित ॥ ७ ॥
वाणी प्रकाशी जैसे अमृतधार, सूत्र रचा जांको आज आधार ॥ ८ ॥
आठ वर्ष केवल परवर्ज्या[10] पाल, मुगति विराज्या पीछे दीनदयाल ॥ ६ ॥

---

१ द्वादशांगी के बारहवें अंग का एक भाग। २ मन। ३ भरत क्षेत्र की चौदह नदियों में से सातवीं। ४ उदधि-समुद्र। ५ इन्द्र ईश्वराज का हाथी। ६ बानवे। ७ आयुष्य। ८ अल्पज्ञ। ६ सीधी। १० प्रव्रज्या-दीक्षा।

पाट विराजे जाँके जम्बू अणगार, परम वैरागी घणो कियो उपकार ॥ १० ॥
चम्मालीस वर्ष पाल्यो केवलज्ञान, ते पण पाया प्रभु शिवपुर स्थान ॥ ११ ॥
सुधर्मा स्वामी ने जम्बू अणगार, चरण नमूं जांके वारम्बार ॥ १२ ॥
'खूबचन्द' कहे मेरे गुरु नन्दलाल, तिण प्रसादे गायो त्रेपन के साल ॥ १३ ॥

[८]

जिनेश्वर-जन्म की स्तुति

(तर्ज:—हरिश्चन्द्र राजाजी)

जिनेश्वर रायाजी, स्वर्ग थकी चव आवे।
प्रजा सुख पावे हो, जिनेश्वर रायाजी ॥१॥
जिनेश्वर रायाजी, गगन निर्मलो दर्शे।
घर्णो सम वर्षे हो, जिनेश्वर रायाजी ॥२॥
जिनेश्वर रायाजी, शाखाँ निपजे सारी।
पुन्याई थारी हो, जिनेश्वर रायाजी ॥३॥
जिनेश्वर रायाजी, लाभ व्यौपारी पूरा।
पंखी बोले रूड़ा हो, जिनेश्वर रायाजी ॥४॥
जिनेश्वर रायाजी, आछी वधायां आवे।
के हर्ष मनावे हो, जिनेश्वर रायाजी ॥५॥
जिनेश्वर रायाजी, शकुन मिले सब ताजा।
आदर देवे राजा हो, जिनेश्वर रायाजी ॥६॥
जिनेश्वर रायाजी, गुरु नन्दलालजी ध्याऊं।
सदा गुण गाऊं हो, जिनेश्वर रायाजी ॥७॥

---

[६]

जिन-जन्म-महिमा

(तर्ज—तू सुन म्हारी जननी आज्ञा देवो तो संजम आदरू')

जिन जन्म की महिमा, करवा ने आया देवी देवता ॥
शक्र इन्द्र ईशान इन्द्रजी, तीजा सनतकुमार।
माहिन्द्र ब्रह्म लंतक महा शुक्र, चलि इन्द्र संसार ॥

पाण[1] इन्द्र और अचू[2] इन्द्र आये, लेकर सब परिवारजी ॥ १ ॥
सहस्र चौरासी अस्सी बहोतर, सीतर साठ बखान ।
पचास चालीस तीस बीस दश, सामानिक सुर जान ॥
चार गुणा सामानिक सुर से, आतमरक्ष परमानजी ॥ २ ॥
बारा सहस्र चवदा बलि सोला, तीन परिषदा माँय ।
दो दो सहस्र कम करके ऊपर, दो दो सहस्र बढ़ाय ॥
छै इन्द्र तक इणविध लीजो, चतुर हिसाब लगायजी ॥ ३ ॥
सहस्र पाँनसे ढाई से अजी, फेर सवा सो थाय ।
दुगुणा २ तीन दफे तुम, लीजो जोड़ लगाय ॥
इतने सुर एक एक इन्द्र के, तीन परिषदा माँयजी ॥ ४ ॥
लक्ष जोजन का लम्बा चौड़ा, आयारच विमान ।
एक सहस्र जोजन को सब के, महिन्द्र ध्वजा परिमान ॥
सुघोषा महाघोषा घण्टा, पांच पांच के जानजी ॥ ५ ॥
चमरिन्द्र बलइन्दर प्रमुख, भवनपति के बीस ॥
काल और महाकाल आदि दे, व्यंतर के बत्तीस ।
चन्द्र सूर्य इन्द्र मिल हो गए चार बीस चालिसजी ॥ ६ ॥
अध लक्ष जोजन लम्बा चौड़ा, असुरां का विमान ।
धरणिन्द्रादिक अष्टादश के, सहस्र पच्चीस प्रमाण ।
व्यतरिन्द्र और रवि शशि के, सहस्र जोजन का मानजी ॥ ७ ॥
वैमानिक से आधी ऊँची, जानो असुर कुमार ।
नवनिकाय के ढाई से की, महिन्द्र ध्वजा विस्तार ॥
सौ जोजन ऊपर पच्चीस जोजन की, व्यंतर जोतिषी धार जी ॥ ८ ॥
इण विध हुओ समागम सुर को, जिन महिमा के काज ।
मेरे गुरु गुण आगर मानूं, नन्दलाल महाराज ॥
रावलपिन्डी जोड़ बनाई, सरिया[3] वंछित काजजी ।

---

१ प्राणत । २ अच्युत । ३ सिद्ध हुआ ।

[१०]

झूलना

(तर्ज:—जिनन्द जश जग में)

माताजी हुलरावे, पुतर ने राग सुनावे रे।
रतन जड़ित पालणियो, जाने रेशम सेती बनियो।
धन जननि नन्दन जनियो रे ॥१॥
सोना की सांकल बांधी, फिर पालणिया में फांधी।
जाँ के अध बीच झूमर बाँधी रे ॥२॥
कोई चकरी भंवरा लावे, कोई नृत्य करी रीझावे।
कोई घुघरियां घमकावे रे ॥३॥
कोई सिर पर टोपी मेले, कोई अधर हाथ में मेले।
ई ज्यूं ज्यूं बालक खेले रे ॥४॥
कोई कान में बाँता केवे, कोई गोदी मांही लेवे।
कोई काजल टीकी देवे रे ॥ ५ ॥
जब चमक नींद जागे, तब रमझम करता भागे।
जा की सूरत सोहनी लागे रे ॥ ६ ॥
माता अचला देवीजी का नन्दा, अश्वसेन राय कुल-चन्दा।
जाने सेवे सुर नर वृन्दा रे ॥ ७ ॥
'खूबचन्द' कहे पुन योगे, या ऋद्धि पाई संजोगे।
यह तो करनी का फल भोगे रे ॥ ८ ॥

[११]

जिनेन्द्र-प्रताप

(तर्ज—मुगत पद पाया हो भरतेश्वर मोटा राजवी)

आनन्द वरते हो जिनन्दा, थारा नाम सूं ॥
प्रभु नाम को सुमरण मोटो, जाप जप्यां मन मांय।
मन वांछित कारज सिद्ध थावे, पातक दूर पलाय ॥ १ ॥

समरथ ज्ञान शरण में आयो, अवर देव कुण जाँचे ।
आम स्वाद जिण चाख लियो तो, इमली रोचे ॥२॥
रत्नाकर मिलियो पुनयोगे, हियो बहुत हुलसावे ।
सफल काज हो गया कहो फिर, कंकर कौन उठावे ॥३॥
कृपा निधि शिवपुर के वासी, यह मेरी अरदास ।
चार तीर्थ[1] में कुशल रहे, सुख सम्पत्ति लील विलास ॥४॥
क्षीर समुद्र भरयो मुख आगे, कुण करे नाडी[3] आस ।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य कहे मुझ, प्रगटी सुख की रास ॥५॥

---

[१२]

मुनिराज

(तर्ज़:—सोरठ)

धन जग में मुनिराया, ज्याने कर लीना मन चाया रे ॥
सुमति गुपति नित डाव तिरन को, तामें चित्त रमाया रे ॥१॥
काम क्रोध मद लोभ तरसना, दूर तजी मोह माया रे ॥२॥
कर कर ज्ञान प्रकाश हिया में, वैराग्य रहे नित छाया रे ॥३॥
कर्म हणी कई शिवपुर पाया, कई सुरलोक सिधाया रे ॥४॥
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य जगमें, जिहाँ तिहाँ जश पाया रे ॥५॥

---

[१३]

वीर-मिलन की भावना

(तर्ज़:—हो गए नित हीन कितनेक कलि के मानवी)

मैं तो शिवपुर वासी वीर जिनन्दजी से मिलसूं रे ॥
तिसला दे माता के नन्दन, पिता सिद्धारथ राय ।
बहत्तर वर्ष की आयुष ज्यां की, कंचन वरणी काय ॥१॥
सुर नर के पुजनीक प्रभु रया, तीस वर्ष घर माँय ।
संजम ले फिर कर्म काट कर, मोक्ष विराजा जाय ॥२॥

---

१ पुण्य । २ साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका रूप चतुर्विध संघ । ३ तलैया

मैं इन भरत क्षेत्र के मांहि; आप मोक्ष के मॉय।
अब अन्तस को लाग्यो उमावो,[1] दर्श करूं कब आय ॥ ३ ॥
जिन रस्ते प्रभु आप पधारया, शिवपुर आसन ठायो।
वो रस्तो ढूँढ़त फिरयो स* पण, ना मुझ कणी बतायो ॥४॥
लुच्चा सौदा बहुत मिल्या मुझ, उलटी राह बताई।
निर्लोभी सतगुरु मिल्या जब, सूधी वाट दिखाई ॥ ५ ॥
अब मैं वाट कभी नहीं छोड़ूं, जल्दी जल्दी दौड़ूं।
जहाँ होगा वहाँ आन मिलूंगा, संग कदी नहीं छोड़ूं ॥ ६ ॥
नन्दलालजी महाराज प्रसादे, 'खूबचन्द' इम गावे।
प्रभु थारा प्रताप से स म्हारे, सदा नवे नन्द थावे ॥ ७ ॥

---

[१४]

वीर की क्षमा

(तर्जः—माम की निज बूंदी मिम बूंदी)

मेरे प्रभु वीरजी वीरजी, कांई क्षम्या करी भरपूर ॥
कठिन कर्म को काटवा, गया देश अनार्य सुम्हार ॥१॥
कम से कम छठ तप किया, कॉई उत्कृष्ट किया छे मास ॥२॥
मिला उड़द का बाकला, कॉई बोर[3]-कुटा को आहार ॥३॥
आप खड़ा जब ध्यान में, कॉई लम्बी भुजा पसार ॥४॥
बाल खेंच धक्का दिया, कॉई दी मार अनारज लोग ॥५॥
कुत्ता लगाया काटना, कॉई कर छुछुकार अयोग ॥६॥
देव मनुष्य तिर्यंच का, कॉई उपसर्ग सहे अपार ॥७॥
अधीक[4] द्वादस वर्ष में, कॉई उपनो केवल ज्ञान ॥८॥
दया धर्म फैलाय के, कॉई किया मोक्ष में वास ॥९॥
गुरु नन्दलालजी का हुक्म से, किया रामपुरे चौमास ॥१०॥

---

१ उत्कंठा । २ किसी ने । ३ बेरों का चूर्ण । ४ पन्द्रह दिवस अधिक ।
*'स' पादपूर्ति के लिए है ।

[१५]

गुरुदेव-दर्शन

(तर्ज— आज रंग बरसे)

आज मन भायो रे २ गुरुदेव आपका दर्शन पायो रे ॥
तारन तिरन जहाज आप, शिव मारग सूधो लीधो रे।
बहुत दिनों से होती[1] आश, भलो दर्शन दीधो[2] रे ॥१॥
कल्प तरु गुरु पारस सम छो, पूरण पर उपकारी रे।
निज गुण की चहुँ दिशि फैल रही, महिमा थारी रे ॥२॥
गुरु ज्ञान के भान अंग में, अभिमान नहीं दरशे रे।
संजम रुचि वैराग्य झलक, मुख ऊपर बरसे रे ॥३॥
आचारी पूरे ब्रह्मचारी, छो नव कल्प विहारी रे।
कहूँ कहाँ तक गुण बरणन, तुच्छ बुद्धि हमारी रे ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि की, चाहूं निरन्तर सेवा रे।
है यकीन मुक्ति का निश्चय मिलसी मेवा रे ॥५॥

---

[१६]

गुरु-गुण-गान

(तर्जः—गूंथी लावोए फूलां माळन म्हारे गेंद गजरो)

म्हारा गुरुजी गुणवन्त आछो ज्ञान सुनायो ॥
जीव यो अनादि मोह नींद में छायो।
ज्ञान को जल छांट मोकूं आप जगायो ॥१॥
प्यासीया ने ठार[3] निर्मल नीर ज्यूं पायो।
भूखा ने खीर खाँड को जिम भात[4] जिमायो ॥२॥
राग सुण ज्यूं नाग रहे बहुत घुमायो।
भादवे बरसात ज्यूं झड़ आप लगायो ॥३॥
घोर यो संसार सागर आप फरमायो।
डूबता हुए मॉय मोकूं आप बचायो ॥४॥

---

१ थी। २ दिया।
३ ठंडा करके। ४ भक्त-भोजन।

महा मुनि नन्दलालजी तस शिष्य हुलसायो।
उगणीसे तिरेसठ माँय गढ़ चित्तौड़ में गायो ॥५॥

[१७]

दीक्षार्थी को माता की शिक्षा

(तर्ज—पूर्ववत्)

सुणो लाल संजम पाल वेगा मोक्ष में जाज्यो ॥
विनय करी खूब गुरुदेव रिझाज्यो।
होय तो अपराध बारम्बार क्षमाज्यो ॥ १ ॥
सीखज्यो बहु ज्ञान परमाद घटाजो।
मेघ ज्यूं तपस्या की झड़ी खूब लगाजो ॥ २ ॥
आजज्यूं दिनरात थे वैराग्य बधाजो।
सार दया धर्म तामें चित्त रमाजो ॥ ३ ॥
फेर दूजी मात के मत कूंख में आजो।
जन्म जरा मर्ण का सब दुःख मिटाजो ॥४॥
एतली[१] तुम सीख ऊपर ध्यान लगाजो।
महामुनि नन्दलालजी सुख संपति पाजो ॥५॥

[१८]

गुरु की शोभा

(तर्ज.—गुरु निर्ग्रन्थ नहीं जोया जीव तैने गुरु)

गुरुजी विराज्या सोहे सभा में, गुरुजी विराज्या सोहे रे।
समता के सागर गुण रत्नागर सुर नर का मन मोहे रे।
ज्ञान सरोवर में करत किलोलां, पापतणां[३] मल धोवे रे ॥ १ ॥
नरनारी बहु हिल-मिल आवे, निरख निरख मुंह जोवे रे।
मधुर वचन से भव जीवों का, मिथ्याभर्म[४] सब खोवे रे ॥ २ ॥
ग्राम नगर मेरे गुरुजी पधारे, जहाँ बीज धर्म को बोवे रे।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य कहे मेरो रोम २ खुश होवे रे ॥ ३ ॥

---

१ तुम । २ एटली (गुज०) इतनी । ३ पाप का । ४ मिथ्यात्व का भ्रम ।

[१९]

पूज्य-दर्शन

(तर्ज —चेतन चेतो रे)

दर्शन करसां रे २ म्हारा पुण्य योग से पूज्य पधारया रे।
गाम नगर पुर पाटन विचरत, पूज्यजी आज पधारया रे।
सुर तरु सम मन वांछित म्हारा, कारज सारया रे॥ १॥
उपकारी, गुणधारी जाकी, सुर नर सेवा सारे रे।
भव जीवाँ ने भव सागर से, पार उतारे रे॥ २॥
कोई कहे मैं दर्शन करसां, कोई कहे सुणसां वाणी रे।
कोई कहे मैं प्रश्न पूछसा, छे बहु नाणी[१] रे॥ ३॥
कोई बैठा गज तुरी[२] ऊपरे, कोई पाला[३] जावे रे।
कोई चढ्या रथ म्याना में जाका, हिया हुलसावे रे॥ ४॥
कोई जावे कोई आवे पाछा, इमे मगे रह्यो लागी रे।
कोई कहे तू चाल मैं आयो, लेर[४] सु भागी[५] रे॥ ५॥
कोई बैठा निज मन्दिर अपने, पूज्य की भावना भावे रे।
कोई इक दृष्टि जोय रह्या, कोई शकुन मनावे रे॥ ६॥
नन्दलालजी महाराज प्रसादे, 'खूबचन्द' इम गावे रे।
धन जाको अवतार पूज्य की, सेवा पावे रे॥ ७॥

[२०]

गुरु-सेवा

(तर्ज:—क्या तन माँजता रे)

गुरुजी आपकी रे गुरुजी आपकी रे मोकूं सेवा मिली पुन योग।
क्षमावंत ज्ञानादिक गुण के तुम हो सिन्धु समान।
मिथ्या तिमिर के नाश करन को प्रगट हुवे हो भान॥ १॥
तांता तोड़ दिया तृष्णा का, नहीं किसी की दरकार।
अपने दिल में समझ लिया, कंचन पत्थर इक सार॥ २॥
मन को जीत लिया विषयों से, धर्म ध्यान में लीन।
निज आतम सम जान जगत को, अभय दान तुम दीन॥ ३॥

१ ज्ञानी। २ घोड़ा। ३ पैदल। ४ पीछे से। ५ पुण्य।

क्षण मात्र भी तुम पुरुषों का, संग करे नर कोय।
सच्चा ज्ञान मिले फिर उनको क्यों नहीं मुक्ति होय ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनीश्वर, बहु सूत्री विद्वान।
पर उपकार जान हम सब को, दी शिक्षा हित आन ॥ ५ ॥

[२१]

ज्ञानी गुरु का निर्णय

(तर्जः—फाग)

ज्ञानी गुरु बिना कौन करे निरणा ॥
कुँवर सुबाहु पचदश भव करने, आखिर मोक्ष गति वरणा ॥१॥
परदेशी नृप का हुआ निस्तारा, केशी स्वामी का भेट्या चरणा ॥२॥
मेघ[1] मुनि युगल भव गज का, न्याय सुनाय के स्थिर करणा ॥३॥
कुंडरिक पुंडरिक[2] दोनों भाई, करणी जैसा दुःख सुख भरणा ॥४॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे, लो देव गुरु परम शरणा ॥५॥

---

१ मेघकुमार मगधसम्राट् श्रेणिक के पुत्र थे और पूर्व दो भवों में हाथी थे। भ० महावीर का उपदेश सुन कर विरक्त हुए और दीक्षित हो गये। दीक्षित होने पर पहली रात्रि ही में उन्हें सोने को ऐसी जगह मिली, जहां से अन्य मुनि आते-जाते थे। ठोकरें लगती रहीं। रात भर नींद न आई। इस दशा में उन्होंने दीक्षा त्याग कर वापिस घर लौट जाने का विचार किया। प्रातःकाल भ० महावीर को अपने जाने की सूचना देने के लिए वे भगवान् के पास पहुँचे। अन्तर्यामी भगवान् पहले ही मेघ मुनि के मनोभावों को समझ चुके थे। उन्होंने पिछले दो हाथी के भवों में भोगे हुए घोर कष्टों का वर्णन करके कहा—'अब इतना सा भी कष्ट-सहन नहीं कर सकते?' यह सुन कर मुनि मेघकुमार संयम में स्थिर हो गये।

२ पुंडरीक और कुंडरीक दोनों सगे भाई थे, पुंडरीक बड़े और कुंडरीक छोटे भाई थे। पिता के दीक्षा लेने पर पुंडरीक राजा बने और कुंडरीक युवराज। कुछ दिनों बाद कुंडरीक को वैराग्य हो गया और वह साधु बन गये। मगर उनकी भोग-तृष्णा फिर जाग्रत हो गई और एक बार वे साधुओं का साथ छोड़ कर घर लौट आये। पुंडरीक ने पूछा—क्या तुम्हें राज्य भोगने की इच्छा है? कुंडरीक ने उन्हें अपना राज्य सौंप दिया और स्वयं कुंडरीक के उपकरण लेकर साधु बन आये। इस प्रकार साधु, राजा हो गया और राजा उसके बदले साधु बन गया। अन्त में कुंडरीक को भोगों में आसक्ति होने के कारण सातवें नरक में जाना पड़ा और पुंडरीक सर्वार्थसिद्ध विमान में देव हुए। वह महाविदेह क्षेत्र में मनुष्य होकर मुक्ति-लाभ करेंगे।

[२२]

ज्ञानी गुरु का उपदेश

(तर्ज—पूर्ववत्)

ज्ञानी गुरु बिना कौन कहे सांची ॥
कठिन कहे मुनि जोश में आवे, टोर[1] के नाग लगे टाँची ॥१॥
चित[2] मुनि कही ब्रह्मदत्त नहीं मानी, नर्क गयो भोगों में राची ॥२॥
जो निज सुख चाहो अहो ! मानव, करणी करो आछी आछी ॥३॥
आये हो पर भव का दुःख देखी, अब यो बाट मत लीजो पाछी ॥४॥
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य गावे, शुद्ध देव गुरु धर्म लीजो जाँची ॥५॥

---

[२३]

वीर-वाणी

(तर्ज—जुगल पद पाया हो भरतेश्वर मोटा राजवी)

आछी लागे म्हाने वीर वीर की वाणी रे ॥
सभा माय जगनाथ विराजे, विस्मयवंत दीदार।
शुभ लक्षण तन पूरण ज्ञान गुण, करुणा के भंडार ॥१॥
प्रेम सहित वाणी का प्यासा, राजादिक नर-नार।
आय आय चरणों में झुके, गुण बोले बारम्बार ॥२॥
पैंठ बोल[3] की कहे आरती, दो विध धर्म उदार।
सुर नर इन्द्र विद्याधर सुन सुन, हर्षित होय अपार ॥३॥

---

१ अतिशय कठोर पाषाण।

२ चित्त मुनि और ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती पिछले पांच भवों में भाई-भाई थे। छठे जन्म में नों अलग-अलग उत्पन्न हुए। चित्त एक सम्पन्न सेठ के परिवार में और ब्रह्मदत्त राजपरिवार जन्मे। ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती राजा हो गया। तत्पश्चात् दोनों का संयोगवश मिलन हुआ। नों एक दूसरे को पहचान गये। चित्त मुनि ने ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती को त्याग मार्ग अपनाने का नुरोध किया, मगर ब्रह्मदत्त ने अपनी असमर्थता प्रगट की। वह भोगोपभोगों में आजीवन सक्त रहा और मृत्यु के पश्चात् सातवें नरक में गया।

३ पैंसठ बोल।

महाव्रत[1] अणुव्रत[2] त्याग नेम कही, धारत है नर नार।
धर्म कथा खाली नहीं आवे, अवश्य होय उपकार ॥४॥
श्रोता चाहे वीर पाणी हम, सुनते रहें हर बार।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य दिल्ली, जोड़ करी तैयार ॥५॥

---

[२४]

संत

(तर्ज:—पंजाबी)

संतों में संत वही है, जो पालक [3]पंचाचार का ॥
आतम सम जाने पर प्राणी, झूठ त्याग बोले सत्य वाणी।
रजा बिना कुछ लहे न जाणी, तज दिया फिकर संसार का।
सब जग से निरमोही है ॥१॥
एक जगह स्थिर वास न रहना, सुन दुर्वचन कुछ नहीं कहना।
भिक्षा मांग गुजर कर लेना, दिल रखे सभी पर सार का।
चाहे राजा रंक कोई है ॥२॥
माया से मुहब्बत नहीं जोड़े, विषयों से अपना मन मोड़े।
क्रोध कपट निन्दा को छोड़े, नहीं संग करे [4]बदकार का।
दुर्मति दूर खोई है ॥३॥
दुनिया से हरदम रहे न्यारा, कुव्यसनों से करे किनारा।
ऐसा संत ईश्वर को प्यारा करे धन्धा ज्ञान विचार का।
तब सुधरे सब कोई है ॥४॥
गुरु नन्दलाल महा मुनिराया, कृपा कर ज्ञानामृत पाया।
नयाशहर में भजन बनाया, गुरु किया काम उपकार का।
हिये ज्ञान बेल बोई है ॥५॥

---

१ पूर्ण अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। २ एक देश अहिंसा आदि पांच श्रावक व्रत। ३ ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपआचार और वीर्याचार ये पांच महाव्रत ४ दुराचारी।

[२५]
गुरु महिमा

(तर्ज:—पूर्ववत्)

सब मिथ्या भर्म खोते हैं, मुनिराज ज्ञान भंडार हैं॥
छोड़ दिया गृहस्थी का नाता, जोड़े नहीं फिर प्रेम का नाता।
करते फक्त धर्म की बातां, उनका यही व्यौपार है।
नहीं बुरी नजर जोते हैं ॥१॥
राव रंक की रखते नाहीं, सब को देते साफ सुनाई।
निर्लोभी और बेपरवाही, दृग्दृष्टि बुद्धि अपार है।
समकित का बीज बोते हैं ॥२॥
शम, दम और सांच के सूरे, निशदिन रहें कपट से दूरे।
तप करके कर्मों को चूरे, जो सम्यार्थत अनगार हैं।
सुमति की सेज सोते हैं ॥३॥
दोष टाल लेते अन्न पानी, कभी न बोले सावद्य बानी।
गुरु हुकुम रखते अगवानी, फिर क्यों न सफल अवतार है।
सुर नर का मन मोहते हैं ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि हैं, जिन 'शासन में बड़े गुनी हैं।
जिस ने पहले बानी सुनी है, वह याद करे हर बार है।
पुन योगे दर्शन होते हैं ॥५॥

२

उपदेशामृत

[१]

अहिंसा

(तर्ज:—पूर्ववत्)

मत प्राणी के प्राण सता रे, कर दया धर्म का मूल है ।।
छोटे बड़े कई जीव विचारे, सबको अपने प्राण पियारे।
आतम सम लख न्यारे न्यारे, यह समदृष्टी का रूल[1] है
मरते की जान बचा रे ।।१।।

रच रच अशुभ अकृत्य कमाये, जिन से योन पशु की पाये ।
विषम स्थान गिरि जंगल मांहे, ना कोई जिन के अनुकूल है।
फिरे इत उत मारे मारे ।।२।।

कई पशु रहते बिच बन के, भूख प्यास और शीत उष्ण के।
कभी न कह सकते दुःख तन के, कौन पूछे तेरा क्या शूल है।
अब महरबान बन जा रे ।।३।।

जो था मतंग रहम दिल वाला, पाँव तले मुसले को पाला ।
मर कर हुआ नृपति घर लाला[2], जिन मत का यही असूल है।
क्यों दिल में दया विसारे ।।४।।

---

१ नियम ।२ यहां भी राजकुमार मेघकुमार की ओर ही इशारा है । पूर्वभव में वे हाथी थे हाथी ने जंगल में एक साफ-सुथरा गोलाकार मैदान बना रक्खा था । जंगल में आग लगने पर अन्य पशु अपनी जान बचाने के लिये उस मैदान में ठसाठस भर गये । एक खरगोश को वहीं टिकने की जगह नहीं मिल रही थी । उसी समय हाथी ने अपना शरीर खुजलाने के लिये पैर ऊंचा उठाया । खरगोश उसी खाली जगह में बैठ गया । हाथी जमीन पर पांव धरता तो खरगोश की चटनी बन जाती । दया से प्रेरित होकर उसने अपना पैर ऊंचा ही उठाये रक्खा और जब तक जगह खाली न हो गई, तीन पैरों पर ही वह खड़ा रहा । जब उसने पैर जमीन पर जमाना चाहा तो पैर के अकड़ जाने से वह धड़ाम से गिर पड़ा और मर गया । इस दया भाव के कारण वह राजा श्रेणिक का पुत्र हुआ ।

गुरु नन्दलाल हुकम फरमाया, अब चौमास आगरे ठाया।
जोड़ सभा में भजन बनाया, अब तुम को दया कबूल है।
तब होगी माफ खता रे ॥५॥

---

[२]

सत्य

(तर्ज:—पूर्ववत्)

क्यों असत्य मुँह से भाखे, सत्य निर्वद्य[१] बोल विचार के ॥
सत्यवादी सम बात बनावे, कर छल कपट पलट झट जावे।
उस नर की परतीत न आवे, सब निन्दे लोक बाजार के।
फिर कदर कोई नहीं राखे ॥१॥

जो नर सत्य धर्म को चाहते, उन पै कष्ट कभी नहीं आते।
सुर नर मददगार हो जाते, करे धन धन सब संसार के।
चरणों में झुकें आ आके ॥२॥

सत्य से विष अमृत हो जावे, पड़े पहाड़ से चोट न खावे।
शास्त्र में ज्ञानी फरमावे, टरे विघ्न कई प्रकार के।
जिया देख जरा अजमा के ॥३॥

हरिश्चन्द्र राजा सतधारी, बेची हाथ से तारा नारी।
जिसने भरा विप्र घर वारी, तब गया सर्व दुःख टाल के।
खुद इन्द्र स्वर्ग से आके ॥४॥

मुनि नन्दलाल साफ फरमावे, सत की महिमा सब जन गावे।
छोड़ झूठ जिनसे सुख पावे, रख याद हिया में धार के।
मेरे गुरु कहे समझा के ॥५॥

---

१ निरवद्य निर्दोष।

[३]

जुआ-निषेध

(तर्ज.—पूर्ववत)

जुआ का खेल मत खेले, यूं सन्त कहे समझाय के ॥
जुआ और सट्टा यह दोई, इन कामों में लगा जो कोई।
यह निज सम्पत बैठा खोई, कुछ लम्बी नजर लगाय के।
तू सोच हिताहित पहले ॥१॥
करते रंज दाय जब हारे, मन में खोटी नीत विचारे।
निर्दय होय मनुष्य को मारे, कोई मरते शस्तर खाय के।
कोई- डोलत फिरे अकेले ॥ २ ॥
सब दिन रात सरीखे जाते, पर सुख देख देख पछताते।
कुआचरण जिनके हो जाते, कहे अँगुली लोग बताय के।
यह कुल कपूत शठ टेले ॥ ३ ॥
पांडु पुत्र जो थे बलधारी, राज सहित द्रौपदी हारी।
नल राजा भी ले निज नारी, वह निकला राज गमाय के।
ग्रन्थों से निर्णय ले ले ॥ ४ ॥
गुरु नन्दलालजी का फरमाना, जो तूं है विद्वान सयाना।
प्रथम व्यसन के संग न जाना, कहूँ राग पंजाबी गाय के।
तेरी कीरत चहुँ दिशि फैले ॥ ५ ॥

---

[४]

सद्बोध

(तर्ज—पूर्ववत्)

नर क्यों पर जान सतावे, फिर बदला दिया न जायगा।
गेंद-दड़ी ज्यों फिरा भटकता, मनुष्य जन्म में आया अटकता।
यह दुख तुझ को नहीं खटकता, कर भला भला हो जायगा।
सतगुरु तुझे चेतावे ॥ १ ॥

अन्तर कपट मुख मीठो बोले, पर का छिद्र देखतो डोले।
जाति न्याति में विग्रह घोले, जो फूला वह कुम्हलायगा।
यों ऋषि मुनि सब गावे ॥ २ ॥
गुरु ज्ञान अमली नहीं पाया, वृथा यों ही जन्म गँवाया।
रत्न छोड़ कर कंकर उठाया, कहो मोल कहीं भी पायगा।
फिर आखिर में पछतावे ॥ ३ ॥
पर जीव की पीड़ न जाणी, दुःखी देख दिल दया न आणी¹।
पाप में आप हुवे अगवाणी, मिट्टी में मिट्टी मिल जायगा।
फिर कुछ नहीं बन आवे ॥ ४ ॥
मुनि नन्दलाल मेरे गुरु देवा, जिन शासन में सुरतरु जेवा।
तन मन से कोई करले सेवा, गुरु ऐसा ज्ञान बतायगा।
सब मिथ्याभर्म मिट जावे ॥ ५ ॥

[५]
सद्बोध

(तर्ज—पूर्ववत्)

नर क्यों पच पच मरता है तेरे कौन साथ में आयगा।
करे हिफाजत कुटुम्ब को पाले, वह भी तेरे हुकम में चाले।
चूक पड़े होंगे मतवाले, तुझे क्षण में छेह¹ दिखायगा।
क्यों पाप पिंड भरता है ॥ १ ॥
दुनिया में थोड़ा सा जीना, जिसमें बोल लाभ क्या लीना ?
सच्चे मारग को तज दीना, न जाने कहाँ धँस जायगा।
फिर कारज क्या सरता है ॥ २ ॥
सच्चे गुरु की सुने न वाणी, झूठी बात तुरत ले ताणी।
न्याय अन्याय की बात न छाणी³, तेरा यश अपयश रह जायगा।
ना परभव से डरता है ॥ ३ ॥
फूला फिरे होय लटपट में, खोया जन्म झूठी खटपट में।
कर ले अब कुछ भी झटपट में, फिर ऐसा न मौका पायगा।
तेरा क्षण-क्षण आयु खिरता है ॥ ४ ॥

---

१ लाया। २ किनारा काट जायगा। ३ छिनी।

मेरे गुरु नन्दलाल मुनि हैं, जिन शासन में बड़े गुनी हैं।
जिसने पहले वाणी सुनी है, वह हर्ष हर्ष गुण गायगा।
जो भवोदधि तरता है ॥ ५॥

[६]
संसार-सराय
(तर्ज—पूर्ववत्)

मेरी मान मुसाफिर अहो रे, क्यों सोवे बीच सराय के ॥
चार द्वार की यह सराय है, कई आय और कई जाय है।
जिनकी गिनती पहू नाय है, कहे गुरुदेव जतलाय के।
होशियार हमेशा रहो रे ॥१॥
राव रंक यहाँ सब ही आते, जो आते वह वापिस जाते।
कोई खोते और कोई कमाते, कोई पूंजी मूल गंवाय के।
वह चले गये बद हो रे ॥२॥
तेरा यहाँ पर होगया आना, आलस तज के लाभ कमाना।
सोने का है नहीं जमाना, तू भूंठा नेह लगाय के।
अनमोल वक्त मत खो रे ॥३॥
इस सराय में ठग रहते हैं, गाफिल को वह ठग लेते हैं।
खबरदार अब कर देते हैं, हम तो तुम्हें जगाय के।
गफलत की नींद मत सो रे ॥४॥
गुरु नन्दलाल मुनि हैं मेरे, न्याय बात कहें हक में तेरे।
संत पुरुषों का संग कर ले रे, दुर्लभ अवसर पाय के।
लटपट मत कोई से हो रे ॥५॥

[७]
सच्चा मेला
(तर्ज—ख्याल)

मुगति को मेलो कर लो प्रेम से, अवसर मत चूको ॥
साधु साध्वी श्रावक श्राविका, चार तीर्थ गुणधारी।
जिनकी सेवा करो तरो, भव सिन्धु रहो हुशियारी रे ॥१॥

आगम वाणी सुन हो प्राणी, मिट जावे सब साँसा।
चार गति में आवागमन का, हो रहा अजब तमाशा रे ॥२॥
दया धर्म की गोठ करो नित, भाँग भजन की पीवो।
नियम नशा की लाली लावो, इस विध जुग जुग जीवो रे ॥३॥
जो होगा पुनवान जिन्हों के, यह मेला मन भावे।
दूजा मेला माँय जाय वह गांठ को दाम गँमावे रे ॥४॥
कहे मुनि नन्दलाल तणा शिष्य सुन लेना सब भाया।
करी जोड़ अजमेर शहर सावन के महीने गाया रे ॥५॥

[८]
धर्म की दुकान

(तर्जः—ख्याल)

तुम माल खरीदो त्रिशलानन्दन की खुली दुकान रे॥
शास्तर रूप भरी पेटीयाँ, मुनिवर बड़े दलाजी।
कइ[1] वजह का माल देख लो, कर अपना मन राजी रे॥१॥
जिन वाणी को गज है साँचो जरा फर्क मत जान।
माप माप सत गुरु देवे छे, मत कर खेंचातान रे ॥२॥
जीव दया की मलमल भारी, शुद्ध मन मिसरू लीजे।
डबल जीन समता तणो सरे, चाहे सो कह दीजे रे ॥३॥
तपस्या को सचागर भारी, साडी ले सन्तोष।
ऐसा कर व्यौपार जिन्हों से, चेतन पावे मोक्ष रे ॥४॥
महा मुनि नन्दलाल तणा, शिष्य, खूबचन्द कहे सार।
काम नहीं टोटा तणो सरे नफो मिले व्यौपार रे ॥५॥

[९]
वैद्य गुरु

(तर्जः—पूर्ववत्)

ज्ञानी गुरु मिलिया वैद्य हकीमजी तुम दवा खरीदो ॥
अष्ट कर्म का रोग अभ्यन्तर जनम मरण दुःख भारी।
तुरत फुरत सब रोग मिटे लो दवा बहुत गुणकारी रे ॥१॥

---
1 तरह तरह।

छोटी बड़ी कई मीठी कड़वी तब गोली तैयार।
आँख मींच कर झटपट ले लो मत कर और विचार रे ॥२॥
समझ सयाना बार बार यह जोग मिले नहीं ऐसा।
हित मुफ्त की दवा खिलावे, कौड़ी लगे न पैसा रे ॥३॥
जिनवाणी का चूर्ण लिया कर व्याधि हरे तमाम।
जो इतना भी शौक रखे तो हुवे परम आराम रे ॥४॥
महा मुनि नन्दलाल तणा शिष्य जोड़ करी इम गावे।
ऐसा मौका आज मिला कि रोग सोग मिट जावे रे ॥५॥

[१०]

गुरु-वाणी

(तर्ज.—पनजी मूंडे बोल)

वाणी सांची रे २ म्हारा ज्ञानी गुरु कही सो हिवड़े राची रे।
अनन्त गुणी साकर से मीठी, श्री जिनवर की वाणी रे।
ठाम ठाम[1] सूत्रों के माही छाने, दया बखाणी रे ॥ १ ॥
अनन्त जीव सुन सुनने तिरिया, वली अनन्ता तिरसी रे।
कई जीव व्रतमान काल में, एक भव करसी रे ॥ २ ॥
तीन तत्त्व कोई चतुर हुवे तो, धारे असल हिया में रे।
देव अरिहन्त गुरु निर्ग्रन्थ, अरु धर्म दया में रे ॥ ३ ॥
अनन्त काल कुगुरु ने भेल्या, भ्रम जाल में फँसीयो रे।
अब के सतगुरु ज्ञानी मिल्या, मन सुमति की रसीयो रे ॥ ४ ॥
अमृत छोल हसे मन मूरख, जहर हलाहल चाखे रे।
जोग बोल दस[2] केरो मिलियो, अब कांई ताके रे ॥ ५ ॥
भांत भांत मुनिवर समझावे, चेते सो सुख पासी रे।
रखो आस्ता[3] वचन ऊपर निष्फल नहीं जासी रे ॥ ६ ॥
महामुनि नन्दलाल गुरुजी, आछो ज्ञान बतायो रे।
तिण प्रसादे 'खूबचन्द' कहे, तन मन हुलसायो रे ॥ ७ ॥

---

१ जगह जगह। २ खेत, मकान, सोना, चांदी, पशु, मित्र, जाति आदि दस बा का सुन्दर संयोग। ३ आस्था-श्रद्धा।

[११]

क्रोध-निषेध

(तर्ज़:—पूर्ववत्)

क्रोध मत कीजो रे २ इण न्याय सुजान क्षम्या कर लीजो रे ॥
परदेशी[1] नृप को रानी विष, मिश्रित आहार जिमायो रे।
खबर करी सम भाव पणे, सुर लोक सिधायो रे ॥१॥
गजसुखमाल[2] मुनि शमशाने, नेम ध्यान को लीनो रे।
सिर पर आग सही, सोमिल पर कोप न कीनो रे ॥२॥
खन्दक[3] मुनि की खाल उतारन, भूप हुकम फरमायो रे।
सञ्चित वैर चुकाय आप, मुक्ति पद पायो रे ॥३॥
कामदेवजी[4] श्रावक त्रण उपसर्ग, से चलिया नांही रे।
हदसाई सुर देव गयो, अपराध खमाई रे ॥४॥
मेतारज[5] मुनि गुणी आप, शुद्ध संजम में चित राख्यो रे।
वृथा काज मर मिट्या, कुरकट को नाम न दाख्यो रे ॥५॥
वीर प्रभु सुर नर तिर्यञ्च का, सह्या परीषह भारी रे।
मेरु जिम रह्या अचल, आप समता दिल धारी रे ॥६॥

---

१ प्रदेशी राजा पहले नास्तिक और क्रूर था। केशी स्वामी के उपदेश से वह धर्मनिष्ठ हो गया। जब वह धर्माचरण में अधिक लगा रहने लगा और भोगों से विरक्त-सा हो गया तो उसकी पत्नी ने उसे ज़हर दे दिया था। २ श्रीकृष्ण के छोटे भाई थे। एकांत में तपस्या कर रहे थे। साधु होने से पहले सोमल ब्राह्मण की कन्या से इनकी सगाई हुई थी, मगर विवाह होने से पहले ही साधु बन गये। इस कारण क्रुद्ध होकर ब्राह्मण ने गिली मिट्टी की मस्तक पर पाल बनाकर उसमें धधकते अंगार भर दिये थे। ३ खंदक मुनिकी एक राजा ने जीते जी चमड़ी, चमड़ी उधड़वाली थी। ४ भगवान् महावीर के दस मुख्य श्रावकों में से एक। एकाग्र होकर जब वे धर्म-साधन कर रहे थे तो एक देव ने उन्हें धर्म से विचलित करने के उद्देश्य से बहुत सताया था। ५ महावीर भगवान् के एक अन्त्यज शिष्य, जो घोर तपस्वी और दयालु थे। एक मास में एक बार भोजन करते थे। एक बार भिक्षा के लिए किसी सुनार के घर गये। सुनार उस समय सोने के दाने बना रहा था। दानों को बाहर पड़ा छोड़ वह भिक्षा लेने भीतर चला गया। उसी समय एक मुर्गे ने आकर वे दाने निगल लिये। सुनार ने मुनि को ही चोर समझ कर भीतर से आकर मार डाला। मुनि चाहते तो मुर्गे की बात कह सकते थे, मगर उस हालत में मुर्गा मारा जाता। उसकी प्राणरक्षा के लिए मुनि ने अपने प्राण दे दिये।

मेरे गुरु नन्दलाल मुनि की यही सिखामण खासा रे।
उगणीसे असी के साल अजमेर चौमासा रे ॥७॥

[१२]
मान-निषेध
(तर्ज—पूर्ववत्)

मान मत करजो रे २, श्री वीर प्रभु शास्तर में बरजो रे।
तन को मान घणो मन मांही, नव नव नखरा करनो रे।
काल चक्री से जोर न चाले ज्यूं घणो अपइतो रे ॥१॥
जो नर धन को मान किरो वह, धन खोई ने बैठा रे।
आरम्भ कर कर कर्म बाँध, वह नर्क में पैठा रे ॥२॥
जोबन में रंग रातो मातो, ऊंची रखनो आँखियारे।
वृद्ध भयो सब परवश पड़ियो, उडे न मखिया रे ॥३॥
विद्या बहुत पढ्यो मन चाही बुद्धि को विस्तारो रे।
दया धर्म बिन सिखया गयो यों ही हार जमारो रे ॥४॥
तीन पांच मद[१] में सुध भूल्यो, सतसगत से दूरी रे।
मातंग कुल में जन्म लेही हो गयो भंड सुरो रे ॥५॥
नीठ[२] नीठ मानव भव पायो निर अभिमानी रहिज्यो रे।
कहे मुनि नन्दलाल तणा शिष्य शिवपुर लीजो रे ॥६॥

---

[१३]
कपट-निषेध
(तर्ज—पूर्ववत्)

कपट मत कीजे रे २ थाँने न्याय बात कहूँ सो सुन लीजो रे ॥
कपट करी सीता को रावण, ले गयो लंका मांही रे।
काम कछु न सरयो जिमने अपकीरति पाई रे ॥१॥
तीजे[३] अंग चौथे ठाणे फरमान वीर जिनवर को रे।
माया गूढ़ माया से आयुष बाधे तिर्यंच को रे ॥२॥
मल्लि[४] जिन पूरव भव में, तपस्या में कपट कमायो रे।
जयन्त विमान से च्यवी वेद स्त्री को पायो रे ॥३॥

---

१ जाति, कुल, बल, विद्या, रूप आदि आठ चीजों का अभिमान । २ बड़ी कठिनाई से ।
३ स्थानांग सूत्र के चौथे स्थानक में । ४ उन्नीसवें तीर्थंकर मल्लिनाथजी ।

कपट करी कुड माप तोल कर मन में अति सुख पायो रे।
पावे सजा सरकार बीज जब वो पछतायो रे ॥ ४ ॥
नर से नारी होय कपट से नारी नपुंसक थावे रे।
गौतम पृच्छा मांही मार ज्ञानी फरमावे रे ॥ ५ ॥
यह मुनि नन्दलाल तणा शिष्य कपट[1] बुरो जग मांही रे।
उगणीसे अस्सी में जोड़ अजमेर बनाई रे ॥ ६ ॥

[१४]

लोभ-निषेध

(तर्ज —पूर्ववत्)

लोभ उलटी छे रे २ जब भलो होय कहूँ सो सुन लीजे रे।
दो माशा सुवरण से अधिको कपिल[1] लोभ बढ़ायो रे।
लोभ थकी मन फिरयो जभी केवल पद पायो रे ॥ १ ॥
जिनरिख[2] जिनपाल दोऊ मिल के पर दीप[3] सिधाया रे।
जहाज फटी समुदर में जिनरिख प्राण गमाया रे ॥ २ ॥
लोभ अपार कह्यो जिनवर ज्यूं गगन को अन्त न आवे रे।
धन्य मुनि जो लोभ त्याग जग में जश पावे रे ॥ ३ ॥
कोई लोभ वश अकृत्य कर कर मन मांही सुख पावे रे।
लोभ पाप को बाप साफ यों सब जग गावे रे ॥ ४ ॥
क्रोध, मान और माया लोभ इन चारों का संग छोड़े रे।
जब वीतरागी होय कर्म बन्धन को तोड़े रे ॥ ५ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल कहे सन्तोष सदा सुखदाणी रे।
चातुर्मास अजमेर कियो सित्तर दश मांही रे ॥ ६ ॥

---

१ कपिल ब्राह्मण राजा से दो माशा सोना लेने गया था, परन्तु मुंह मांगा पाने का वचन पाकर राजा का सारा राज्य ही मांगने की उसकी इच्छा हो गई। अन्त में उसकी चेतना ने करवट बदली। तृष्णा को अपार समझ कर वह विरक्त हो गया। २ जिनऋषि और जिनपाल भाई-भाई थे। लोभ से प्रेरित होकर अर्थोपार्जन के लिए वे परदेश गये। लौटते समय जिनऋषि ने समुद्र में ही प्राण गवा दिये। ३ दूसरा द्वीप।

[१५]

हितोपदेश

(तर्जः—पूर्ववत्)

समझ अभिमानी रे २ धारी नदी पूर ज्यों जाय जवानी रे।
मैला ख्याल जो घन जावे बागों में गोट बनावे रे।
सतन की सेवा में आवतां काम बतावे रे॥ १॥
करी कान[1] मंग्या का मान ज्यों डाभ अग्र को पानी रे।
बिजली का झलका सी सम्पति थीर बखानी रे॥ २॥
एक सरीखी टोली मिल गप्पों में वक्त गमावे रे।
प्रभु भजन निज नेम करत तुम आलस आवे रे॥ ३॥
टेढी पगड़ी टेंट घणी नित नया करे सिणगारा रे।
धर्म बिना कई गया पशु जिम हार जमारा रे॥ ४॥
कोई जीव को मति सता तूं प्याला प्रेम का पीजे रे।
दुर्लभ नर भव पाय सार सत्संगत कीजे रे॥ ५॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि तो त्याग बात फरमाई रे।
जोड़ करी अजमेर पैंष पन्द्रह के मांई रे॥ ६॥

[१६]

बुढ़ापा

(तर्ज—पूर्ववत्)

बुढापो ऐसो रे २ मैं सांच कहूँ यो है जम जैसो रे।
जोबन जब जग बन्यो रहे नित मोज करे मनमानी रे।
बुढापो आलग्यो तो फिर नहीं रहे जवानी रे॥ १॥
अञ्जन मंजन का सब नखरा देवे भुलाई भोला रे।
दाढी मूछ चोटी ने पटा करदे सब धोला रे॥ २॥
नाक झरे मुख लार पड़े सब इन्द्रियां बल हट जावे रे।
पड्यो रहे पोली में कोई नजदीक न आवे रे॥ ३॥

[1] हाथी के कान के समान चपल।

उठत बैठत हालत चालत बुड्ढा को तन कम्पे रे।
डगमग डगमग पांव पड़े मुख से कुछ जम्पे रे॥४॥
सच्चा साथी कोई न तेरे दिल में बात जमा ले रे।
जब लग जरा न आई तब लग धर्म कमा ले रे॥५॥
तन से धन से ले ले लाभ यह वक्त फेर कब आवे रे।
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि साची फरमावे रे॥६॥

---

[१७]

वधाई

(तर्ज:—पूर्ववत्)

बधाई गासांरे[1] २ आनन्द से यहां पर हुआ चौमासा रे॥
जो जो भाव शास्तर के मांही, वीर जिनन्द प्रकाशा रे।
सुन सुन के भव जीव, सफल कीनी मन आशा रे॥१॥
दया धर्म का बजा नगारा, झूंठ नहीं एक मासा रे।
चार संघ में रही खुशी, यह बात खुलासा रे॥२॥
मेरे मुख से आज दिन तक, निकली कडवी भाषा रे।
कर खमावणा सब के साथ, अति हर्ष मनासाँ रे॥३॥
सब माया मिलजुल ने रहीजो, मैं तो विहार कर जासाँ रे।
दया धर्म का शरणा से, पासो[2] सुख खासा रे॥४॥
साधु साध्वी उत्तम पुरुष की रखजो फिर अभिलाषा रे।
लीजो लाभ भक्ति का फले मुक्ति की आशा रे॥५॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि के चरणे शीष नमासाँ रे।
दिल में लग रही बहुत उमंग अब दर्शन पासाँ रे॥६॥

---

१ गायेंगे। २ पाओगे।

[१८]

जिन-वाणी

(तर्जः — पूर्ववत्)

सुन जिन वाणी रे २ मत धर्म बिना खोवे जिन्दगानी रे ॥
मनुष्य जन्म शक आरज क्षेतर, उत्तम कुल में आयो रे।
दीर्घायु तन निरोग इन्द्रिय, पूरण पायो रे ॥१॥
श्रमण माहण की सेवा करने, ज्ञानामृत रस पीजो रे।
साँची श्रद्धा धार धर्म में, पराक्रम कीजे रे ॥२॥
यह दश बातों सर्व जीव को दुर्लभ श्रीजिन भाखी रे।
खोजी हो तो कर निर्णय, शास्तर है साखी रे ॥३॥
मूढ हिताहित सुकृत दुष्कृत कबहूँ नाही विचारयो रे।
चिंतामणि सम मनुष्य जन्म सब फोक्ट हारयो रे ॥४॥
क्रूर कर्म हिंसादिक तजने भली भावना भावे रे।
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि को है फरमावो रे ॥५॥

[१६]

पाप छिपाया नहिं छिपे

(तर्ज.—पूर्ववत्)

जिन फरमायो रे २ यह गुपत पाप नहीं छिपे छिपाया रे ॥
बोयो बीज खेत में पूछों, नाम नहीं बतलावे रे।
उग बारने निकले तब, चौड़े दर्शावे रे ॥१॥
घास फूस को ढेर करीने, भीतर आग छिपावे रे।
भशक भशक बलती जलती वह बाहिर आवे रे ॥२॥
आम पाल मे दिया कहां तक छिपा छिपा कर रखसी रे।
पाक गया तब हाथों हाथ हटियों[१] पर बिकसी रे ॥३॥
लहसण आदिक बाँट मसाला स्वाद करन मन ठानी रे।
गुप चुप दियो बघार रहे नहीं बदबू छानी रे ॥४॥
या विध जुल्मी जुलम करीने खूब किया मन मीठा रे।
गुरु नन्दलाल कहे वह आखिर पड़सी फीटा[२] रे ॥५॥

१ हाट-बाजार। २ निंदित।

[२०]

नरतन से लाभ

(तर्ज—पूर्ववत्)

लाहो ले ले रे २ नर भव को टाणों नीठ मिलगो छे रे ॥
पायो लक्ष्मी पुण्य प्रमाणे म्हालो तू समझा ने रे ।
करे राज का काज बात सब दुनिया माने रे ॥१॥
कमठाणो[१] चल रह्यो रात दिन बहु विध आरम्भ कीनो रे ।
खर्च किया बहु दाम नाम जग में कर लीनो रे ॥२॥
बड़े बड़े रईसों से तूने मोहब्बत भी कर लीनी रे ।
सन्त मुनि गुणी जन की संगति पल भर नहीं कीनी रे ॥३॥
बड़ो होय फूले मत थारे कौन कौन संग आसी रे ।
धर्म दलाली करी हरी[२] जिनवर पद पासी रे ॥४॥
कहे मुनि नन्दलाल तणा शिष्य सुनजो चित्त लगाई रे ।
मारवाड़ का शहर सादड़ी जोड़ बनाई रे ॥५॥

[२१]

शील

(तर्ज—पूर्ववत्)

शील सुखदाई रे ० शुभ पाल कई गया सुगति माई रे ॥
राजमति संजम लेकर गई गिरी गुफा माईं रे ।
राख्यो शील मुनि को प्रतिबोधी[१] मोक्ष सिधाई रे ॥१॥

---

१ कारखाना। २ श्रीकृष्णजी। बाईसवें तीर्थङ्कर अरिष्टनेमि का विवाह राजीमती से होना निश्चित हुआ था। बरात रवाना हुई और तोरण तक जा पहुँची। अरिष्टनेमि ने वहाँ एक बाड़े में बन्द पशुओं को देखकर पूछताछ की तो मालूम हुआ कि बरातियों को मांस खिलाने के लिये यह पशु इकट्ठे किये गये हैं। सुनते ही अरिष्टनेमि विवाह किये बिना ही लौट पड़े और गिरनार पर्वत पर तप करने चले गये। राजीमती ने भी विवाह करना स्वीकार नहीं किया। बाद में वह भी दीक्षित हो गई।

अरिष्टनेमि के छोटे भाई रथनेमि भी साधु थे। एक बार वह अंधेरी गुफा में ध्यानस्थ बैठे थे। राजीमती गुफा को सूनी समझ कर उसमें चली गई। रथनेमि के चित्त में विकार उत्पन्न हुआ। उन्होंने भोग की याचना की। राजीमती ने कठोर शब्द कह कर रथनेमि की भर्त्सना की। रथनेमि का चित्त ठिकाने आ गया।

काम अंध रावण सीता को ले गयो लंका माईं रे।
पूरण राख्यो शील लेइ जस सुर पद पाई रे ॥२॥
पद्मनाभ[1] नृप सुर साधन कर द्रौपदि को मंगवाई रे।
चतुराई से राख्यो शील हरि लायो जाई रे ॥३॥
सुभद्रा[2] के शिर सासू ने दीनो कलंक चढ़ाई रे।
दूर कियो सुर कलंक जगत में सुयश पाई रे ॥४॥
दुर्गति टले मिले सुख साता इन में संशय नाईं रे।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य लिछी जोड़ बनाई रे ॥५॥

[२२]

कठिन कहेगा

(तर्ज:—पूर्ववत्)

कठिन कहेगा रे २ जो वे परवाही नहीं दवेगा रे।
इक्षुकार[3] नृप भृगु पुरोहित को छंड्यो धन मंगवायो रे।
वमन कियो क्यों लियो राणी यों साफ सुनायो रे ॥ १ ॥
रहनेमि[4] मुनि को चित चलियो जाग्यो विषय विकारो रे।
राजमति स्थिर कियो वचन को दे धिक्कारो रे ॥ २ ॥
राजा परदेशी[5] को जड़ मुढ कह्या केशी मुनि गुणधारी रे।
धर्म पथ में लाय आप दियो जन्म सुधारी रे ॥ ३ ॥

---

१ श्रीकृष्णकालीन घातकी खण्ड का एक राजा। इसने द्रौपदी का अपहरण करवाया था ... पाण्डवों के साथ श्रीकृष्ण ने जाकर द्रौपदी का उद्धार किया था।

२ सोलह सतियों में से एक प्रसिद्ध जैन सती।

३ भृगु पुरोहित, उसकी पत्नी और दोनों पुत्रों ने जब गृहत्याग कर दीक्षा लेने का संकल्प किया तो राजा इक्षुकार ने उसकी सम्पत्ति अपने खजाने में मंगवाली। रानी को प... चला तो उसने राजा को बहुत समझाया। निदान राजा और रानी ने भी उनके साथ संसार त्याग दिया। ४ रथनेमि, जिनका परिचय दिया जा चुका है। ५ देखो पृ० २५ प...

सेणिक नृप को मुनि अनाथी[1] दियो साफ फटकारी रे।
राजा तू भी खुद अनाथ जरा बोल विचारी रे॥ ४॥
उगणीसे अस्सी चन्द्रा में जेठ मास के मांई रे।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य दिल्ली जोड़ बनाई रे॥ ५॥

[२३]

विगाड़ चार जनों से

(तर्जः—पूर्ववत्)

चतुर विचारो रे २ ई चार जणा नहीं करे सुधारो रे।
राजा की परधान लोभ वश तुरत न्याय को छंडे रे।
झूंठा ने सांचो कर दे साचा ने दण्डे रे॥ १॥
जाति न्याति में मोटा बाजे मुखियो पंच कहावे रे।
सूंका खाय जीमण में भर भर छाबां उड़ावे रे॥ २॥
साधु होकर बैठ सभा में मुगति पथ बतलावे रे।
धनवंता को लिहाज रखे, नहीं साफ सुनावे रे॥ ३॥
मूरख वैद्य दवा नहीं जाने उनसे दवा करावे रे।
आयुष बल से बचे नहीं तो प्राण गमावे रे॥ ४॥
महा मुनि नन्दलाल तणा शिष्य शहर जावरे गावे रे।
फूटे पाप को भांडो तब चारों पछतावे रे॥ ५॥

---

१ मगधसम्राट् श्रेणिक ने एक बार वन में एक अतिशय तेजस्वी मुनि को देखा। पास जाकर पूछा—'भगवन्! आपको किस वस्तु का अभाव था कि आप साधु बने?' मुनि बोले-अनाथ था। राजा ने कहा—अच्छा, चलिये मेरे साथ, मैं आपका नाथ बनता हूं। मुनि ने उत्तर दिया—तुम स्वयं अनाथ हो, मेरे क्या नाथ बनोगे? सम्राट् ने चकित होकर कहा—शायद आप नहीं जानते, मैं मगध का सम्राट् हूं? मुनि मुस्करा कर बोले—क्या तुम्हारा साम्राज्य तुम्हें मौत से बचा सकेगा? तुम मुझे मृत्यु और रोगों से बचा सकोगे? नहीं, तो तुम स्वयं अनाथ हो। मेरे नाथ किस प्रकार बन सकोगे?

[२४]

सुधार चार जनों से

(तर्जः—पूर्ववत्)

चतुर विचारो रे २ इण चार जनों से हुवे सुधारो रे ॥
निर्लोभी परधान होय खुद सदा चैन में चाले रे।
नीतिवन्त प्रतीतवन्त प्रजा को पाले रे ॥१॥
करे जाति की हमदर्दी जो मुखिया पंच कहावे रे।
मर्यादा भंग को सुद्ध करे रिश्वत नहीं खावे रे ॥२॥
साधु बैठ सभा के मांहीं सत्यासत्य दर्शावे रे।
राजा होय चाहे रंक सभी को साफ सुनावे रे ॥३॥
वैद्यराज वैद्यक के वेत्ता बुद्धिवंत कहावे रे।
चारों कारण मिलयां तुरत ही रोग मिटावे रे ॥४॥
महामुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य जोड़ करी इम गावे रे।
साँच कहूँ यह चारों जणाँ जग में जश पावे रे ॥५॥

---

[२५]

बाई का कहना

(तर्ज —पूर्ववत्)

किण विध आऊं रे २ म्हारा घर का सब थाने हाल सुनाऊं रे ॥
देवर जेठ ननद भौजाई सब ही को मन राखूं रे।
घर में दानो सुसरो मांगे अमल तमाखू रे ॥१॥
घर मोटो छोटा नहीं मैं तो बड़ा घरों की बाजू रे।
पग में बीछों नहीं बाजना आता लाजू रे ॥२॥
घर में टाबर छोटा माँगे गेहूँ का फुलका पोऊं रे।
भोजन थाल परोसी पीछे छाछ बिलोऊं रे ॥३॥
सारो दिन धधा मे बीते पहर रात को पोढूं रे।
पहर रात की पाछी उठूं घट्टी घमोडूं रे ॥४॥

मटकी ले पनघट के ऊपर पानी भरवा जाऊं रे।
दिन दो पहर चढ़े तब तक फुरसत नहीं पाऊं रे ॥५॥
कहे मुनि नन्दलाल तणां शिष्य घर धंधा यों ही चाले रे।
बस थाई को धन्यवाद जो टाईम* निकाले रे ॥६॥

---

[२६]

पैसा का खेल

(तर्जः—आशावरी)

पैसा देखो जगत में ऐसा, यह तो काम बनावे कैसा ॥
जो जो वस्तु चाहत दिल में ते ते ही जोग मिलावे।
जो पैसा नहीं पास हुवे तो कोई नहीं बतलावे ॥१॥
राजादिक को बश कर लेवे न्याय अन्याय करावे।
बैर विरोध करावन वाला पैसा ही झूंठ बुलावे ॥२॥
द्वादश जुग में होगया ऐसा बुड्ढे का ब्याह करावे।
बिन पैसे बिन रहत फुँवारा यही तो अचरज आवे ॥३॥
बड़े बड़े विद्वान जिन्हों को देश परदेश भ्रमावे।
हँस हँस बात करावन वाला पैसा ही हेत तुड़ावे ॥४॥
पुण्य छता पुण्य बांधले प्राणी यह अवसर कब आवे।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य तुमने हितकर ज्ञान सुनावे ॥५॥

---

[२७]

काची काया

(तर्जः—मल्हार)

काची काया को रे कौन विसास
हाड़ को पिंजर चाम लपेट्यो, जीव कियो तामें वास ॥१॥
______दरपन देख देख तन निरखे, उपजावे मन हाँस ॥२॥

---

*धर्मक्रिया के लिये समय। २ मात करे।

कर कर स्नान सिंगार बनावे, करतो भोग विलास ॥३॥
मन ममता मेवा मिष्ट आरोगे, आखिर जंगल वास ॥४॥
मुनि नन्दलाल तणों शिष्य अपनो, कर कर गुण परकाश ॥५॥

[२८]

अजब तमाशा

(तर्ज:—तू सुन म्हारी अम्मी)

जिनवर फरमायो रे सुन ले तमाशो इण जीव को।
चौरासी लक्ष जोनि जीव की एक एक के मांय।
जन्म मरण कर लिया अनन्ता कहूँ तुझे समझाय रे ॥ १ ॥
स्वर्ग आठवां थकी चवी ने तिर्यञ्च भव में आय।
अन्तर्मुहूर्त[१] की आयु पालने गयो सातवीं मांय रे ॥ २ ॥
भूख प्यास की उष्ण वेदना पर वशसही अनन्त।
अब ही लाभ लूट जिन धर्म में सांच कहे छे सन्त रे ॥ ३ ॥
दीर्घ काल रुलतां हुवो सरे चहुँ गति कियो निवास।
जिहां जिहां जिन जिन भव मांही पूरण हुई न आस रे ॥ ४ ॥
उगणीसे इकसठ चौमासो कीन्हों गढ़ चित्तौड़।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य गावे जुगत बनाई जोड़ रे ॥ ५ ॥

[२९]

छैल छबीला

(तर्ज:—समझ मन करजो रात-मन में)
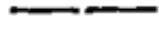
कुमति को बनियो रे छैलो, थें दियो सुमति ने ठेलो।
सुख सम्पति दातार मुनीश्वर, चेतावे देई हेलो।
धर्म काम में ढील करे मत, नीठ मिल्यो तुझ मेलो ॥ १ ॥

१ अड़तालीस मिनिट से कम और एक समय से ज्यादा का समय।

तृष्णा वश अति कूड़ कपट कर धन कीन्हों बहु भेलो।
जहाँ को तहाँ रहेगा पृथ्वी पर, जासी आप अकेलो ॥ २ ॥
मुख सेती बोले अति मीठो, मनमाँही अति मैलो।
पर को धन ठग ठग ने खावे, खरचे नहीं अधेलो ॥ ३ ॥
षटरस खावो होय रह्यो मातो, जैसे रुई को थैलो।
तपस्या कर तन को नहीं गाले तो परभव सुख किम ले लो ॥ ४ ॥
कहे मुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य सुरत सम्भाल सवेलो।
इण अवसर पर ले ले लाभ फिर सत् गुरु याद करेलो ॥ ५ ॥

[३०]

सद्‌बोध

(तर्ज:—मूं थने नहीं बिछानूं रे वीरा)

मत कर रे अनीति भाया, तुझे साँच कहे ऋषिराया।
लंकपती सीता हर लाया, तो जग में अपयश पाया ॥ १ ॥
पद्मोतर नृप द्रौपदी मंगाई, तो कर्मों से राज गंवाया ॥ २ ॥
कंस पिता को पिंजर घर दीनो, तो हरि परभव पहुँचाया ॥ ३ ॥
श्रीदाम राजा को नन्द कुमति से, जैसा ही ते फल पाया ॥ ४ ॥
इम जान प्राणी छोड़ अनीति, तुझे न्याय करी समझाया ॥ ५ ॥
मुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य गावे, तो नीति से बहु सुख पाया ॥ ६ ॥

[३१]

भाग्य

(तर्ज:—डगमग नहीं करना नहीं करना)

भाग्य बिन नहीं पावे नहीं पावे, तेरा चित ने क्यों ललचावे ॥
पुत्र के कारण पीर पैगम्बर, देवी देव मनावे।
इम करतां जो पुष्ट हुवे तो, रंक राव हो जावे ॥१॥

लोभ के काज कई दक्षिण में, कई पूरब में धावे।
अर्थ मेलवा कोई उत्तर में, कोई पच्छिम में जावे ॥२॥
सिंहल देश और बरमा देश, कोई मदरास देश सिधावे।
तृष्णा वश निज कुटुम्ब आपको, कोई याद नहीं आवे ॥३॥
पुत्र पिता और पिता पुत्र को, नार पति ने घावे।
स्वारथ जो पूरण नहीं हो तो, पर भव में पहुँचावे ॥४॥
कहे मुनि नन्दलाल तणां शिष्य, दमड़ी संग नहीं जावे।
दया धर्म हिय धार जिन्हों से, भव भव में सुख पावे ॥ ५ ॥

---

[३२]
दो मुखी दुनियां

तर्ज.—आसावरी

ऐसी दुनिया को काई पतियारो, या से बच कर रहिये न्यारो
साँच भी बोले झूंठ भी बोले, बोल बोल नट जावे।
पंचा में परतीत न जांकी सौ सौ सौगन्द खावे ॥ १ ॥
झूठी साख भरे मतिहीना, साँची कर दर्शावे।
पल में पलटतों देर न लागे, लाज शरम नहीं आवे ॥ २ ॥
ड्योढ़ा दूना करे वस्तु में, तो पण कसर बतावे।
कर कर बहुत बढ़ाव जुगत से, भोला ने भरमावे ॥ ३ ॥
मुनि नन्दलाल तणों शिष्य गावे, कई नर झूठ चलावे।
अन्त के तन्त तो न्याय चलेगा, साँच ने आँच न आवे ॥ ४ ॥

---

[३३]
काची काया का गर्व

(तर्ज:—ज्ञानी गुरु भव भूलो एक घड़ी)

जीया काँई फूले रे काची काया रे ज्ञानी फरमाया ॥
गोरो बदन सुखमाल घणेरो हाँ रे रूप मनोहर तू पाया ॥ १ ॥
माताको रुद्र ने शुक्र पिताको, हाँ रे दोहूं मिल बन्धी काया ॥ २ ॥

नौ महिना तू रह्यो मात गर्भ में हाँ रे चाम चिड़ी जिम लटकाया ॥ ३ ॥
महा अशुचि को ठाम जणी[1] में, हाँ रे थाम चश्यो कोई सुख पाया ॥ ४ ॥
जन्म लेई ने दुःख भूल गयो तू, हाँ रे नखरा करे अब सत पाया ॥ ५ ॥
नर भव पाय निरंजन जप ले, हाँ रे साँच कहे तुझे मुनिराया ॥ ६ ॥
मुनि नन्दलाल तणों शिष्य ऐसे, संगीत जोड़ करीने गाया ॥ ७ ॥

---

[३४]

ज्ञान को फटको

(तर्ज:—लाल त्रिशला को प्यारो रे)

सुनाये गुरु ज्ञान को फटको रे ॥
ज्ञान उजेलो होत हिया में, मिटे मिथ्यातम घट को रे ॥१॥
जागो जागो जिया आंख उघाड़ो, नीर वैराग्य को छिटको रे ॥२॥
अशुची पिण्ड अनित्य तन यह तो, जैसे मिट्टी को मटको रे ॥३॥
कर पर निन्दा अनादुत बोली, मक्खी जिम मत दो चटको रे ॥४॥
संध्या को भान करी काल ज्यूं[2] तारो, अथिर जोबन को लटको रे ॥५॥
तप जप दान दया मग सूधो, कभी बीच में नहीं अटको रे ॥६॥
यह सब ठाठ रैन सुपने का, रखो परभव को खटको रे ॥७॥
मुनि नन्दलाल दयाल की वाणी, सुन्या से मिटे भव भव भटको रे ॥८॥

---

[३५]

कर्मगति

(तर्ज:—पदमप्रभु पावन नाम तिहारो)

चेतन रे या कर्मन की गति न्यारी, कर सुकृत मन विचारी ॥
रावण राय त्रिखंड को नायक, ले गयो राम की नारी।
लक्ष्मण हाथे परभव पहुँचो, जाने दुनिया सारी ॥१॥

---

१ जिसमें । २ तेरा ।

अयोध्या नगरी को हरिश्चन्द्र राजा, तारादे तस घर नारी।
माथे पुगे लेय हाट में कियो, कुंवर रोहितदास लारी ॥२॥
कृष्ण नरेश्वर त्रिखंड भुगता, यादव कुल अवतारी।
अन्त समय जाय मुआ अकेला, वन कुसुम्बी मुझारी ॥३॥
पुण्डरीक राय वैराग्य धरीने, लीनो संजम भारी।
कायर होय पीछा घर माँही आया, पहुँचे नरक मुझारी ॥४॥
चन्दनराय मलयागिरी रानी, पुत्र सायर नीर भारी।
कर्म जोगे बिछुड़ो पड्यो जाके, पुण्य से सम्पति पाया सारी ॥५॥
'खूबचन्द' कहे या कर्मों की रचना, सुण लीजो नर नारी।
इम जाणी ने धर्म आराधो, सुख मिले आगे त्यारी ॥६॥

---

[३६]

भलाई

(तर्ज:—पूर्ववत्)

चेतन रे तू ले जग बीच भलाई, एहवो जोग मिले कब आई ॥
पुण्य प्रभावे सब ही सम्पति पायो, नर भव माँही।
कुछ सुकृत का काम बने तो, कर तेरी है समर्थाई ॥१॥
कृष्ण नरेश्वर पडोहो[1] बजायो नगरी द्वारका माँही।
उत्तम जन सुण संजम लीनो, देखो ज्ञाता माही ॥२॥
चरण तले सुशलया ने राख्यो[2], हस्ती का भव माँही।
शुभ परिणाम संसार घटायो, कीनो जबर कमाई ॥३॥
नेम प्रभु ने वन्दन जाता, गोविन्द मारग माँही।
ईंटों को पुंज देख बुडा का, फेरा दिया मिटाई ॥४॥
भव सागर तिरजा रे भोला, सत गुरु देत चेताई।
मुनि नन्दलाल तणों शिष्य गावे, पारसोली के माँई ॥५॥

---

[1] श्रीकृष्णजी ने एक बार घोषणा की थी कि अरिष्टनेमि भगवान् के पास जो दीक्षि होंगे, उनके कुटुम्ब के पालन-पोषण का भार मैं लूंगा।

[2] मेघकुमार के पूर्व भव का वृतान्त देखो पृ० १३

[३७]

कैसे होगा निस्तार ?

(तर्ज:—प्रभु माने आपको आधार)

कैसे तेरा होयगो निस्तार, पर भव की तुझ नाय परवा करत कुछ विचार ॥
अलप आयुष अनन्त तृष्णा, रहत मग्न मुफार ।
खूब रुच रुच बाँध लीनो, पाप को सिर भार ॥१॥
मन मते बहु ज्ञान पढ़ने, रीझवे नर नार ।
वादविवाद कर जन्म खोयो, काढ्यो नहीं कुछ सार ॥२॥
आलसी धर्म नेम करतां, पाप में हुशियार ।
जनम भर जस नाँहि लीनो, नहीं कीनो उपकार ॥३॥
महा मुनि नन्दलालजी, अति दीपता अनगार ।
कहत यों तस शिष्य निश्चय, झूंठ यो संसार ॥४॥

---

[३८]

विवेकी आत्मा

(तर्ज:—क्या तन माँजता रे एक दिन मिट्टी में मिल जाना)

विवेकी आत्मा रे २ अरे तूं अब तो निर्मल हो जा ॥
गुरु सेवा की गंगा इस में, पाप मैल का धो जा ।
भारी हो रहा बहुत दिनों से, हलका करले वो जा ॥१॥
ज्ञान रूप दर्पण के अन्दर, नित आतम को जो जा ।
बार बार सत गुरु समझावें, ऐब दोष सब खो जा ॥२॥
मुक्ति का मेवा चखे तो, ममता मही विलो जा ।
जो अब मौका चूक गया तो, खुले नर्क में रो जा ॥३॥
अमृत फल की इच्छा होय तो, बीज धर्म का बो जा ।
कर नेकी का काम बदी से, अब तो दूर चलो जा ॥४॥
सत्य धर्म की सेज बिछी है, सोना हो तो सो जा ।
कहे मुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य, मिले मोक्ष की मोजां ॥५॥

[३६]

परदेशी मानवी

(तर्ज: – पूर्ववत्)

प्रदेशी मानवी रे २ अरे तूं इधर उधर क्या जोता ॥
मेरा मेरा कहे मुँह से, कहने से क्या होता ।
बिन स्वारथ बिन कोई न तेरा, पुत्र नार क्या पोता ॥१॥
घर धंधा में लगा फिरे ज्यों, परजावत[1] का गोता ।
ठाठ पड़ा रहेगा पृथ्वी पर, कुटुम्ब रहेगा रोता ॥२॥
तन मंदिर को छोड़ जायगा, ज्यों पिंजरे से तोता ।
खड़े रहेंगे मित्र देखते, आप खायगा गोता ॥३॥
हुवा उजेला जाग नींद से, बहुत वक्त का सोता ।
सच्चा मोती छोड़ दिवाने, झूंठा पोत क्यों पोता ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि की, वाणी सुन ले श्रोता ।
नैया पार लगे एक क्षण में, सब कारज सिध होता ॥५॥

---

[४०]

सच्चा झूला

(तर्ज:—चतुर नर इण विध चौपड़ खेल रे)

चतुर नर इण विध झूले झूल रे, अरे म्हारा प्राणीयाँ ॥
भाई विनय मूल दरखत धोईये, चतुर नर ज्ञाने शाख फैलाय रे ।
अरे म्हारा प्राणीयाँ ॥१॥
भाई दग[2] डरजा की रामड़ी चतुर नर गाढी गांठ लगाय रे ॥२॥
भाई पाटकड़ी[3] समकीत भली, चतुर नर गाढा पांव ठेराय रे ॥३॥
भाई तप संजम गोड़ी कीजिये, चतुर नर दर मत श्रान लगा रे ॥४॥
भाई सन्मुख हीं दो मोक्ष को, चतुर नर सुधो ही जाजे ठेठ रे ॥५॥

---

१ कुमार का गधा । २ दग-दर्शन-ज्ञान । ३ छोटा पटिया ।

माई पच्छिम ही हो पुठलो, चतुर नर सो पण है सुरलोक रे ॥६॥
माई यह भूलो अपि भूलने, चतुर नर साधे छे मोक्ष मुझार रे ॥७॥
माई श्री श्री गुरु नन्दलालजी, चतुर नर नित नित नमो चरणार रे ॥८॥
माई 'सुखचन्द' यह्वे सौसच विपे, चतुर नर पहिला भूलो सार रे ॥९॥

---

[४१]

अर्ज

(तर्ज:—ख्याल)

अर्ज हमारी सुन लीजिये श्रीमंदर जिनजी।
विदेह क्षेत्र में आप बिराजो, मैं इण भरत मुझार।
किणविध अंतर बात सुनाऊँ, लग रही दिल मुझार हो ॥१॥
चरम जिनेश्वर हुआ भरत में, त्रिशलानन्दन वीर।
जिन के आगे था चहुं नाणी, गौतम जैसा वजीर हो ॥२॥
श्रेणिक राजा थो परमत में, नहीं त्याग पचखान।
भव अहर पहिला जिन होसी, भाख्यो श्रीभगवान् हो ॥३॥
राजग्रही को अर्जुन[१] माली, पाप किया था भारी।
छः महीना के मांयने सरे, मेल्यो मोक्ष मंझारी हो ॥४॥
परदेशी राजा का रहता, लोही खरड्या हाथ[२]।
उनको एक भव अंतरे सरे, मोक्ष कहीं साक्षात हो ॥५॥

---

१ राजगृह नगर का एक माली। कुछ गुण्डों ने उसे बांध कर उसी के सामने उसकी पत्नी से दुराचार किया। अर्जुन माली यह देख कर क्रोध से पागल हो उठा। उसके शरीर में यक्ष ने प्रवेश किया। तब सब बन्धन तड़ाक से टूट गये। उसने उन गुण्डों को और अपनी पत्नी को भी मार डाला। फिर उसने ऐसा रौद्र रूप धारण किया कि लोगों का नगर से बाहर निकलना बन्द हो गया। उसने सैकड़ों आदमियों की हत्या कर डाली। एक बार भगवान् महावीर के आने पर शीलमती सुदर्शन नगर से बाहर निकले तो वह हमला करने दौड़ा। मगर सुदर्शन के आत्म-बल के प्रभाव से यक्ष निकल कर भाग गया। अर्जुन को बोध हुआ। और उसने सुदर्शन के साथ भगवान् के पास जाकर दीक्षा ले ली। २ देखो पृ० २५

एवंता[1] कुमार लघु था, तिण हिज भव के मांय।
वीर जिनन्द सुदृष्टि करने, कीना मोक्ष पहुँचाय हो ॥६॥
कई स्वर्ग कई शिवपुर मेलया, एक भव में शिव पासी।
केवल ज्ञानी मुझ किम भूल्या, दिल में उपजे हांसी हो ॥७॥
आप कहो तु हाजिर नहीं थो, निर्णय किण विध थावे।
हाजिर रहीने निर्णय करतो, तो किम नाथ बतावे हो ॥८॥
मृगो लोढो[2] थो घर मांही, कब वह दर्शन आया।
कर दीना निस्तार वीर प्रभु, शास्तर में फरमाया हो ॥९॥
मुझे भरोसा आपको सरे, सुन हो दीन दयाल।
'खूबचन्द' की यही अर्ज है, सुख देवो दुःख टाल हो ॥१०॥

[४२]

कलियुग के मानवी

(तर्ज:—थारो धर्म बिना यह मनुष्य जन्म कांई काम को)

हो गए नीतहीन कितनेक कलु के मानवी ॥
जहाँ तक साता सर्व बात की, धर्म प्रताप बतावे।
जराक जा में कष्ट पड़े तो तुरत दसल हो जावे ॥१॥
पांच जणा मिल करे पानड़ी[3], हाथां से लिख जावे।
मांगे तो दमड़ी नहीं देवे, घुरको[4] कर नट[5] जावे ॥२॥
स्वधर्मी की सार न पूछे, उलटो अवगुण गावे।
धरयो हुओ धर्मादो सो भी आप हजम कर जावे ॥ ३ ॥
एक एक की पक्ष करे नहीं, लम्बी नजर लगावे।
धर्म काम में घाले गधोलो[6], सकत पंच बन जावे ॥ ४ ॥
झूठ बात नहीं कही जगत में, सब ही को दर्शावे।
महा मुनि नन्दलाल तणां शिष्य, कोटा शहर में गावे ॥ ५ ॥

---

१ बाल्यकाल में दीक्षित एक साधु। २ मृगा लोढा—अपने पूर्वोपार्जित पापों का फल भोगने वाला एक व्यक्ति।
३ दान की सूची। ४ घुड़क कर। ५ मुकर जाता है। ६ रोड़े अटकाता है।

[४३]

क्यों हारे !

(तर्ज—पूर्ववत्)

क्यों हारे तूं अनमोल मनुष्य भव पाय के ॥
जो जो किया नेक बद कामा, देख हिसाब लगाय के।
अकड़ मकड़ में भूल मत, अंखियों पे ऐनक लगाय के ॥१॥
सत्पुरुषों का संग किया नहीं रहा दूर शरमाय के।
कुव्यसनी से किया प्रेम, हाथों से हाथ मिलाय के ॥२॥
माया से माया जोड़ी, गरीबों की जान सताय के।
ज्यों त्यों अपना काम बनाया, झूंठी जाल फैलाय के ॥३॥
दया धर्म का ले ले लाभ यों, सन्त कहे समझाय के।
नहीं तो छोड़ बनियां ज्यूं आगे रोवेगा पछताय के ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि वो, सच्ची कहे सुनाय के।
जैपुर शहर चार सन्त मिल, कियो चौमासो आय के ॥५॥

---

[४४]

चेतावनी

(तर्जः—पूर्ववत्)

क्यों सूतो होय नचीत[१], जाग सुख पायगा ॥
यह सब ठाठ रैन सुपने का, अल्प उमर खुट जायगा।
छोड़ सराय मुसाफिर ज्यों, बिन टेम कभी उठ जायगा ॥१॥
थोड़ासा जीवन के खातिर, जो तू जुल्म कमायगा।
थाम स्वाद के काज राज तज,दियो जेम पछतायगा ॥२॥
दुनियां तो सब है मतलब की, जो इन में ललचायगा।
तेरा किया तूं भुगतेगा, जद कोई काम न आयगा ॥३॥

१ निश्चिन्त।

जो जो धर्म अमोलक तेरा, गया न पीछा आयगा।
दया धर्म बिन अहो मानव तू, भव भव गोता खायगा ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि, वैराग्य कड़ी फरमायगा।
करी जोड़ अजमेर शहर, सब मिथ्या भ्रम मिट जायगा ॥५॥

[४५]

कांई काम को !

(तर्ज.—पूर्ववत्)

थारो धर्म बिना यो मनुष्य जन्म कांई काम को ॥
सज पोशाक सैल करवाने जावे सुबह और शाम को।
धन जोबन का मद में छकियो भूल गयो प्रभु नाम को ॥१॥
सत्गुरु की परवा नहीं थांरे लोभ लाग्यो नित दाम को।
पाप कर्म मे मन दौड़े ज्यों घोड़ो बिना लगाम को ॥२॥
क्या फूले तूं देख देख तन हाड़ मांस लोही चाम को।
ऊमर भर जस नाहीं लियो थें कियो काम बदनाम को। ३॥
कुटुम्ब काज मेहनत कर कर धन भेलो[१] कियो हराम को।
निज हाथों से कभी नहीं सुकृत में काम छदाम को ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि बतलावे पथ शिव धाम को।
दया दान तप नेम पाल पद मिले तुझे आराम को ॥५॥

[४६]

कंजूस की दशा

(तर्ज:—लाखों पापी तिर गये सतसंग के प्रताप से)

मूंजी अपने हाथ से नहीं जीते जी कभी दान दे।
रात दिन जोड़े जमा नहीं जीतेजी कभी दान दे।

१ इकित।

पुत्रादिक को दान देते देख ले मूंजी कभी।
तो खुद करे एकासना नहीं जीतेजी दान दे ॥ १ ॥
चाहे कोई कुछ भी दे उसका फिकर मूंजी करे।
जहां तक बने करदे मना नहीं जीतेजी कभी दान दे ॥ २ ॥
दीन दुखिया द्वार पै कोई मचान डाले आन कर।
करुणा का जिसके काम क्या नहीं जीतेजी कभी दान दे ॥ ३ ॥
खाना बद बद पहनना चाहे कोई भी त्यौहार हो।
माया का मजदूर वो नहीं जीतेजी दान दे ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
मुंजी पूंजी धर जायगा नहीं जीतेजी दान दे ॥ ५ ॥

[४७]

माता-पिता का कर्त्तव्य

(तर्ज:—पारस प्रभु से अर्ज हमारी है रात दिन)

बचपन से ही माँ बाप शुभ आचार सिखाते।
मकदूर क्या जो पुत्र वो कुपूत कहलावे ॥
अपना अदब गुरु का विनय की रीत बताते।
बुलवाते जी जीकार तो यश जगत में पाते ॥ १ ॥
जो हिंसा झूठ चोरी कुकर्मों से डराते।
पहले हिदायत होती तो क्यों नाम लजाते ॥ २ ॥
शुरु से सिखाई गालियां फिर वो हाथ उठाते।
खींचे पकड़ के बाल न कुछ भी तो शरमाते ॥ ३ ॥
जैसे के रहे संग में गुण वैसे ही आते।
इस न्याय को विचार के सुसंग लगाते ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी सच बात बताते।
सुपुत्र दीपक की तरह निज कुल को दिपाते ॥ ५ ॥

[४५]

गुरु की स्तुति

(तर्जः—पूर्ववत्)

गुरु देव की मुझ सेव पुन्य योग से मिली।
सुन्या वैन खुल्या नैन मेरी भ्रमना टली॥
प्रकृति है मुलायम ज्यों गुलाब की कली।
सब मन की मेरी आस बहुत दिन से फली॥१॥
निष्पक्ष हो के कथा ज्ञान की भली।
मुझे आवे स्वाद मुंह से ज्यों मिश्री की डली॥२॥
है ज्ञान के दरियाव धोवे पाप की कली।
न मान माया लोभ है वैराग्य की झली॥३॥
महा मुनि नन्दलालजी सन्तोष की सली।
तस शिष्य को गुरु कृपा से सुख सम्पति मिली॥४॥

---

[४६]

स्थविर मुनिश्री नन्दलालजी महाराज के गुण

जैसे शशि है सोम ऐसी शीपति रति।
गुरु आपका उपकार मैं तो भूलतो नथि॥
विद्या के सागर आप पूरे जैन में यति।
उपजे अति मुझ प्रेम ऐसी सूरत शोभति॥१॥
भव जीवों के हित आप कथा कहते ¹युकति।
उपदेश की छटा को पार न पावे सुरपति॥२॥
चरचा में है निपुण करे बात सूत्रति।
जिन धर्म की फते फते बजाते हो अति॥३॥
मेरे गुरु नन्दलालजी से यही विनति।
मैं आपका निज दास दीजो मोक्ष की गति॥४॥

---

१ युक्ति के साथ।

[४७]

चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त को उपदेश

(तर्जः—कव्वाली)

ब्रह्मदत्त[1] मानलो कहना, वक्त यह फिर न आवेगा।
नाहक भोगों में ललचा के, नफा तू क्या उठावेगा ॥
पूर्वभव का है तू भाई, कहूँ मैं साफ दरसाई।
और हित के लिये तुझको, कौन सच्ची सुनावेगा ॥१॥
कुटुम्ब निज मित्र और न्याति, यह तो सब स्वार्थ के साथी।
तुझे तो काल के मुँह से, नहीं कोई छुड़ावेगा ॥२॥
मेरी यह मेरी यों करके, असल में जहाँ की जहाँ धरके।
चली जा रही है सब दुनियाँ, तू भी ऐसे ही जायेगा ॥३॥
स्वजन धन फौज चतुरंगी, कोई किसका नहीं संगी।
याद रख एक दिन नूर तू, अकेला ही सिधावेगा ॥४॥
मुनि नन्दलाल गुरु ज्ञानी, उनकी सुन प्रेम से वानी।
दया के कुण्ड में नहाले, दुःखों की दाह बुझावेगा ॥५॥

[४८]

असल में कौन

(तर्जः—पूर्ववत्)

बतादे नाम तू उसका, असल में कौन है तेरा ?
जिया सतसंग करने से, मिटे चौरासी का फेरा ॥
रानी देवकी के अंग जाया, द्वारिकानाथ कहलाया।
कुटुम्ब कोई काम नहीं आया, जिन्हों के अन्त की वेरा ॥ १ ॥
चौथा चक्रवर्ती सा राया[2], रूप देखन को सुर आया।
बिगड़ गई छिनक में काया, उनको जब रोग ने घेरा ॥ २ ॥
धन द्रव्यों का था घर में, जहाज चलती थी सागर में।
सेठ कहलाते नगर में, यहां पर वह भी नहीं ठेरा ॥ ३ ॥

---

१ चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त को उसके पूर्वभवों के सहोदर चित्त मुनि का उपदेश। देखो पृ० २१४

२ सनत्कुमार चक्रवर्ती ने अपने रूप का अभिमान किया था।

पूर्ण समकित में दृढ़ताई, श्रेणिक नृप था बड़ा न्याई।
छोड़ कर राज भव यांही, नरक में जा किया डेरा ॥ ४ ॥
देख संसार की रचना, नाहक क्यों ही पाप में पचना।
हो तो विद्वान तू बचना, मुनि नन्दलाल गुरु मेरा ॥ ५ ॥

[४९]

हितोपदेश

(तर्जः—पूर्ववत्)

समझ नर क्यों गाफिल होके, वक्त अनमोल खोता है।
मुक्ताफल छोड़ के असली, क्यों झूठा पोत पोता है ॥
ठगों की नगरी है सारी, इसमें तू आया व्यापारी।
तुझे कुछ भी नहीं मालुम, सुबह का शाम होता है ॥ १ ॥
खर्च कितना किया वह लेख, कमाई क्या करी सो देख।
आम उखाड़ के जड़ से, आक का बीज बोता है ॥ २ ॥
निगाह कर देख तो घर की, बुराई क्यों करे पर की।
ज्ञान की गहरी नदियों में पाप मल क्यों न धोता है ॥ ३ ॥
फिरे तू हो के मद माता, धर्म के पथ नहीं आता।
पड़ा मोह जाल के फन्द में, जैसे पिंजरे में तोता है ॥ ४ ॥
मुनि नन्दलाल हित आनी, कहे सो मान भव प्रानी।
सड़क सीधी है शिवपुर की, देख किस तर्फ जोता है ॥ ५ ॥

[५०]

नशा-निषेध

(तर्जः—माता मरुदेवी के लाल मोक्ष की राह दिखाने वाले)

मत कर नशा कहना मान, तू अपना हित चाहने वाले ॥
जो करते नशा अजान, उनको रहे नहीं कुछ भान।
सब ही लोग कहे बेईमान, कुल का नाम लजाने वाले ॥ १ ॥

केई कपड़ा माल गमाते, केई गलियों में गिर जाते।
कुत्ते उनके मुंह चाट जाते, मक्खियों को न उडाने वाले ॥ २ ॥
यह निर्लज होके चोड़े, सग में छोकरा दौड़े।
घर के बर्तन बासन फोडे, हाँ हाँ हँसी कराने वाले ॥ ३ ॥
न रहे हिताहित का ख्याल, मुंह से बोले आल[1] पंपाल।
करते लोग हाल बेहाल, व्हा व्हा मौज उड़ाने वाले ॥ ४ ॥
है बहुत गजे के टेग, तेरे नित्य रहेगा क्षेम।
दिल से कर दे झट पट नेम, अपनी इज्जत बढ़ाने वाले ॥ ५ ॥
गुरुवर मेरे श्री नन्दलाल, है सब जीवों के प्रतिपाल।
देते मिथ्या धर्म को टाल, सच्चा ज्ञान सुनाने वाले ॥ ६ ॥

[५१]

निन्दक

(तर्ज:—म्हाने वीतराग की वाणी प्यारी लागे रे)

निन्दक पर निन्दा के माय सदा खुश रेवे रे।
दिया ज्ञान गुरु देव दया कर धर्म पंथ में लाया।
भूल गया उपकार महासठ उलटी करे बुरायाँ ॥ १ ॥
चौपद मांही श्वान नीच पखी में काग विशेष।
निन्दक सब में नीच बतायो नीति शास्त्र लो देख ॥ २ ॥
सूअर कण कुण्डो[2] छाडी ने विष्टा पर चित्त देवे।
ज्यों निन्दक अवगुण ने काढे छिद्र ताकतो रेवे ॥ ३ ॥
सुनी बात सांची झूठी को निर्णय करे न कोय।
फक रहे निन्दा करवा में दियो जमारो खोय ॥ ४ ॥
होय अशुचि साफ उदक से निन्दक मुख से चाटे।
जुग जुग सदा जीवतो रहीजे मुझ आतम हित माटे[3] ॥ ५ ॥
पाप पन्द्रमो लागे निन्दक निन्दा छोड़ पराई।
महा मुनि नन्दलाल तणां शिष्य दिल्ली जोड़ बनाई ॥ ६ ॥

---

१ अंटसंट । २ धान्य का पात्र । ३ वास्ते ।

[५२]

ज्ञान विना

(तर्जः—पूर्ववत्)

ज्ञान विन कभी नहीं तिरना करो तुम अच्छी तरह निरना[1] ॥
ज्ञान दया का मूल स्थल यह फरमाया वीतराग।
ज्ञान विना सोहे नहीं ज्यूं हंस सभा में काग ॥ १ ॥
गृहस्थ धर्म और मुनि धर्म ये दोनों ज्ञान आधार।
ज्ञान विना संसार का सरे चले नहीं व्यवहार ॥ २ ॥
पहिले सीखते ज्ञान गुरु से देखो सूत्र का न्याय।
फिर शक्ति अनुसार तपस्या करते थे मुनिराय ॥ ३ ॥
विद्या है धन मित्र सभा में आदर देवे भूप।
विद्या विन नर पशु सरीखा फक्त मनुष्य का रूप ॥ ४ ॥
ज्ञानी रहे पाप से बच कर ज्ञान पढ़ो दिन रैन।
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि की यही हमेशा केन ॥ ५ ॥

---

[५३]

हितोपदेश

(तर्जः—फाग)

काई फिरतो रे जोर जवानी में ॥
हितकर ज्ञान सुनावत ज्ञानी, तू समझ समझ इनसानी[2] में ॥ १ ॥
नर भव रत्न चिंतामणि सरीखो, क्यों तू हारे एक आनी में ॥ २ ॥
चस दिन ठौर कौन छिपने की, जब आवेला काल निशानी में ॥ ३ ॥
पाप की पोट धरी शिर तेंने, प्रभु नहीं भज्यो जिंदगानी में ॥ ४ ॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य मन में, मगन मीन जिम पानी में ॥ ५ ॥

---

१ निर्णय। २ मनुष्यता।

[५४]

हितोपदेश

(तर्जः—पूर्ववत्)

परभव में तब पछतावेलो ॥
ज्ञानी गुरु ज्ञान झड़ी बरसावे, जो इण में नहीं नहावेलो ॥ १ ॥
दान दया बिन नर भव यों ही, जो तू रोज गमावेलो ॥ २ ॥
कर कर पाप कर्म धन संचे, तू संग काँई ले जावेलो ॥ ३ ॥
स्वजनादि तेरे कोई न साथी, अद धका नर्क में खावेलो ॥ ४ ॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे, तू करणी जैसा फल पावेलो ॥५॥

[५५]

रसना

(तर्जः—छोटी छालबीयो)

रसना मतवाली ! मत बिना विचारी बोल ॥
पर निन्दा में प्रसन्न घणी, तू कलह करावनहार ॥१॥
स्वजन स्नेही मित्र के, तू भेद पड़ावन हार ॥२॥
स्वाद में बड़ी चटोकड़ी, कई भ्रष्ट किया नर नार ॥३॥
बात बिगाड़े बोलने, तू खाय बिगाड़े आहार ॥४॥
'खूब' मुनि तो इम कहे, गुणि का गुण गा हर बार ॥५॥

[५६]

बेटी को शिक्षा

(तर्जः—पूर्ववत)

बाई सुन हित शिक्षा, तू जातिवन्त कुलवन्त ॥
सासु सुसरा जेठ की, तू करजे शर्म सदीव ॥ १ ॥
बूढ पदर्या देवे ओलम्मो, नमती लीजे मान ॥ २ ॥

कभी करे मत रूसनो, तू मन में रखजे प्रेम ॥ ३ ॥
करजे सेवा साधु की, तू पालजे धर्म आधार ॥ ४ ॥
खूब मुनि दिल्ली विषे, करी शिक्षा समझाय ॥ ५ ॥

---

[५७]

तपस्या

(तर्जः—कैसो जोग मिल्यो छे रे)

तपस्या घणी कठिन छे रे। अन्न त्याग मन को वश करनो घणो कठिन छे रे॥
दिन में खावे निस में खावे, खावे सांझ सवेर।
कलह मचावे तपे तपावे, जो होवे कुछ देर ॥ १ ॥
अन्न पेट में पड्या बिना, कुम्हलावे कोमल मुख।
काचो पाको कुछ गिने नहीं, भूंडो वेरिन भूख ॥ २ ॥
नाचे कूदे बात बनावे, सूंघे सरस फूल।
एक टेम अन्न नहीं मिले तो जाय राग रंग भूल ॥ ३ ॥
वस्तर बेचे शस्तर बेचे, बरतन भेजी खावे।
जिम तिम करने पेट भरे पण भूखो रह्यो न जावे ॥ ४ ॥
महा मुनि नन्दलाल तणा शिष्य, जोड़ करी रतलाम।
ताको धन्य तपस्या करके, मन को रखे मुकाम ॥ ५ ॥

---

[५८]

जोबन

(तर्जः—पहाड़)

जोबन थारो है, ग्रह पतंग को रंग।
इम जाणी करो सतसंग ॥
श्याम घटा की बीजली रे, ज्यूं पीपल को पान।
नदी पूर हिल्लोल दधि को, मान चाहे मत मान ॥ १ ॥

घाट घटाऊ पाहुणो रे, जेम मसानो धान।
बाजीगर ना खेल सरीखो, जिम संध्या को भान ॥ २ ॥
मयूर अवाज सुणी अहि भागे, जैसे इस्पेशल रेल।
धनुषथी बाण छूटा जिम जावे, पवन के आगे पेल ॥ ३ ॥
भूले मती जोबन के मटके, सब सुपना के ठाठ।
करले कमाई है मध्य वेला, यह बुधवारयो हाट ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल कहे छे, समझ समझ नर एम।
वृद्ध अवस्था जब लग दूरी, तू पाले धरम को नेम ॥ ५ ॥

[५६]

कर्म-गति

(तर्ज:—पूर्ववत्)

कर्म गति जाने कौन सुजान, कोई मत करज्यो अभिमान ॥
मैं द्विज हूँ सुख सम्पति वाला, मुझ सम जग में नाय[1]।
लाखों विमान के नाथ सुरेन्द्र, उपजे एकेन्द्री में आय ॥ १ ॥
पुत्र पिता बंधव निज नारी, कोई न किसका होय।
सुणों कथा कोणिक मणिरथ की, सूत्र से लीजियें जोय ॥ २ ॥
पांचों ही पांडव बारह वर्ष तक, दुख भुगते वनवास।
नगरी वैराट रहे छिप छाने, नृपति के घर दास ॥ ३ ॥
भूखा मरता मानवी रे साल छपन के मांय।
कई मुवा कई भ्रष्ट थया, कई रडवड्या अकुलाय ॥ ४ ॥
शास्त्र की वाणी सुन ले प्राणी, करज्यो दीर्घ विचार।
मेरे गुरु नन्दलाल मुनीश्वर, कहे छे वारम्वार ॥ ५ ॥

[६०]

तपस्या

(तर्ज—पूर्ववत्)

मानव शुद्ध तपस्या कर इण नाय, थारा कर्म पुंज झड़ जाय ॥
सिंह तणा सुन शब्द तुरत ही, मृग भागे वन मांय।
सूर्य प्रकाश के आगल जैसे, अन्धकार विरलाय ॥ १ ॥

१ नाय-उदाहरण।

पींजण की फटकार लग्या, जिम जाय रूई नो पेल।
आग के आगे बारूद न ठेरे, साबुन के संग मेल ॥ २ ॥
सहस वर्ष में नर्क जीवों के, कर्म क्षय नहीं थाय।
इतना कर्म मुनिवरजी तोड़े, घउथमक्त के मांय ॥ ३ ॥
जीव मक्खन जिम काया कटोरी, तप अग्नि की आंच।
कर्म मैल की जल्द खटाई, समझ मानो सांच ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनीश्वर, कहे छे बारम्बार।
भव भव में सुख होय निरन्तर, निज आतम गुण धार ॥ ५ ॥

[६१]
पाप की काट जंजीर

(तर्जः – पूर्ववत्)

समझ नर पाप की काट जंजीर, पायो दुर्लभ मनुष्य शरीर ॥
आतम गुण सेवन कर प्राणी, निर्भय थई मत सोय।
सुरेन्द्र आस करे इस तन की, फोकट में मत खोय ॥ १ ॥
यह तन साधन मोक्ष को रे, और गति में नाय।
समझ थई ने क्यों न विचारे, मानव नाम धराय ॥ २ ॥
काचो कुम्भ क्यों काच की शीशी, जिम बादलो ढंग।
बिनशत वार कछु नहीं लागे, छिन छिन में रंग बिरंग ॥ ३ ॥
माणक हीरा मोती से मूंघो, मोले मिलतो नांय।
मोक्ष पहूँचा मुनिवर केई, आवागमन मिटाय ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल कहे तुझे, प्यारा लगे पकवान।
आखिर यह तन तेरो नाहीं, मान चहे मत मान ॥ ५ ॥

[६२]
सद्‌बोध

(तर्ज.—पूर्ववत्)

कुमति संग छोड़ो छोड़ो छोड़ो छोड़ो छोड़ो रे।
सुमति संग जोड़ो जोड़ो जोड़ो जोड़ो जोड़ो रे ॥
मानुष को भव दुर्लभ पायो, देव करे तेहनी आश।
माग्यो मिले नहीं, मोल मिले नहीं, मिलिये तो करिये तलाश हो।

रतन जड़ित की सुवर्ण चर्वी[1] चूल्हे दीनी चढ़ाय।
चन्दन बाले[2] मांही धान रांधे, एहवो तू मत थाय हो ॥ २ ॥
करजदार पहले होई बैठो, फिर लावे करज उधार।
चुकाया बिन सूत्र सम्भालो, नहीं होगा छुटकार हो ॥ ३ ॥
जन जन सेती बैर बसावे, होय रहा अलमस्त।
पीपल पान ज्यों भान[3] संध्या[4] को आखिर होवे अस्त हो ॥ ४ ॥
अब के जोग मिल्यो मत चूको, गाद करोला फेर।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य कहे छे, जोड़ करी अजमेर हो ॥ ५ ॥

---

[६३]

सत्योपदेश

(तर्ज:—पूर्ववत्)

कलयुग का मानव मानो मानो मानो मानो रे।
थाने परभव निश्चय जानो जानो जानो जानो रे॥
साधु जनकी आय समीपे, सुने न हित की बात।
दुनियां की खटपट में तेरा, बीत गया दिन रात रे ॥ १ ॥
ये तन ये धन ये बल बुद्धि, ये सामर्थ सब योग।
करना होय सो करले भला फिर, ऐसा मिले कब जोग रे ॥ २ ॥
निज स्वजन पालन पोषण में, बन्धो रहे इक ध्यान।
धर्म कियो नहीं नेम कियो नहीं, कर से दियो नहीं दान रे ॥ ३ ॥
रंक को राज मिल्यो दो घड़ी को, दीनो वक्त गुजार।
इण विध पछतावो पड़सी जद, पहुँचेला आन करार रे ॥ ४ ॥
उगणीसे छियन्तरे रे, अलवर राजस्थान।
कहे मुनि नन्दलाल तणां शिष्य, अब भी चेत सुजान रे ॥ ५ ॥

---

१ छोटा जल पात्र विशेष । २ कड़ाही ३ सूर्य ४ संध्या ।

[६४]

वर्ष का तरुवर

(तर्ज:—पूर्ववत्)

चेतन थारा तरुवर फल लूण[1], थाने सांच कहेला फेर फुणे।
दश सहस्र घली आठ से रे फल[2] लागे मथ फूल।
अठाईसे ऊपरे कोर्ट असमी उघड़े फूल ॥ १ ॥
मोटो पेड़ सुहावनो रे[4] शाखा दो दो आठ[5]।
छोटी शाखा है घणी कोई तीन सो ऊपर साठ[6] ॥ २ ॥
सांच कहूँ सूतर थकी रे पत्र असंख्या थाय[7]।
एक थी दूजो निकले कांई तुरत फुरत झड़ जाय ॥ ३ ॥
तज आलस्य प्रमाद ने रे शुद्ध क्रिया के साथ।
जो सेवे तन मन थकी जांके विघ्न सहु टल जात ॥ ४ ॥
महा मुनि नन्दलालजी रे पंडित में परमाण।
गुप्त भेद तस्य शिष्य कहे कांई समझे चतुर सुजाण ॥ ५ ॥

---

[६५]

फोकट

(तर्ज:—पूरो सुख नहीं पंचमे श्रारे)

वेसे श्रावक नो नहीं श्राचारो।
श्रावक नाम धराय लिया, जांके त्रस स्थावर की नहीं छे दया।
शुद्ध नहीं जांके नवकारो ॥ १ ॥
थापण मेले जांकी दरब करे, घूंस खाय ने कूड़ी शाख भरे।
डर नहीं परभव जाया रो ॥ २ ॥
चोरी करे पर धन्न हरे, वली कूड़ा तोला ने कूड़ा माप करे।
खोटा वणज करे न्यारो ॥ ३ ॥
घर की नहीं मरजाद करे, पर दारा सेती गमन करे।
कारण[8] कायदो नहीं जाणे ॥ ४ ॥

---

१ लुन काट। २—एक वर्ष की घड़ियां १०८००। ३—एक वर्ष के प्रहर २८८०। ४ एक वर्ष रूप पेड़-वृक्ष। ५ दो दो चार और आठ यों बारह महीने। ६—एक वर्ष के तीन सौ साठ दिन। ७ एक वर्ष के समय असंख्यात होते हैं। ८ मर्यादा।

धन के काज अकाज करे, ते तो किण विध कहो संसार तिरे।
आरम्भ करे अति विस्तारो ॥ ५ ॥
वन[1] कटावे बहु भार भरे, वलि शस्तर ना संयोग करे।
ताल सरोवर की फोड़ावे पारो ॥ ६ ॥
धर्म स्थानक कभी नहीं आवे, वलि रामत[2] देखण ने जावे।
काम नहीं प्रतिक्रमण रो ॥ ७ ॥
निरमल पाल्यो जाने श्रावक पणो, जां को सुत्तर में विस्तार घणो।
जोर लगाई कियो खेवा पारो ॥ ८ ॥
छप्पन वैशाख शुद्ध चौदश खरी, शहर सीतामहु में जोड़ करी।
'खूब' कहे बारम्बारो ॥ ९ ॥

[६६]

फोकट श्रावक

(तर्जः—ख्याल)

प्रगट कहूँ सो तुम सुण लेना, उसे फोकट श्रावक केना ॥
जीव दया में कछु न समझे भाषा मर्म[3] की बोले।
सूंख[4] खाय कुलेख लिखे परनार ताकतो डोले ॥ १ ॥
ख्याल देखतो फिरे आप संतां के आवतां लाजे।
सौगन लेकर देवे तोड़ खुद घोरी धर्म को बाजे ॥ २ ॥
त्रस स्थावर को हणे पहाड़ चढ़ मेले जाय मिजाजी।
पुण्य पाप को भेद न जाने पर निन्दा में राजी ॥ ३ ॥
हुका चिलम बीड़ी भंग पीवे उलटी बात जँचावे।
नीर निवांणा मांय कूद कर भैंसा रोल मचावे ॥ ४ ॥
सन्तां सेती करे कपट शठ उलट-पुलट समझावे।
आप रहे न्यारो फो न्यारो कुबुद्धि कुयध भिड़ावे ॥ ५ ॥
पक्षमही अभिमानी द्वेष यश कूड़ा कलंक चढ़ावे।
ऐसा कर्म कमाय जैन को नाहक नाम लजावे ॥ ६ ॥

---

१ वन । २ खेल-तमाशा । ३ मर्म बेधने वाली । ४ भंग ।

अवगुण तज गुण को पाले जब शुद्ध श्रावक कहलावे।
परभव सुधरे आपको सरे इण भव सोभा पावे ॥ ७ ॥
उगणीसे अस्सी को कीनो चतुरमास चित चावे।
जोड़ करी अजमेर मुनि नन्दलाल तणों शिष्य गावे ॥ ८ ॥

---

[६७]

जीवदया से नरक दूर

(तर्ज:—ठुमरी)

जो जिन वचन प्रमान करे, ऐसी जीव दया से नरक परे[1] रे ॥
सर्व धर्म को मूल दया है, पूरे पंडित साख भरे रे ॥ १ ॥
आतम सम पर आतम जाने, फिर उनके दुःख दूर करे रे ॥ २ ॥
त्रस स्थावर सुख के अभिलाषी, दुःख स्थानक से दूर टरे रे ॥ ३ ॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे, रावलपिंडी जोड़ करे रे ॥ ४ ॥

---

[६८]

तम्बाकू-निषेध

(तर्ज:—ख्याल)

पिया छोड़ तम्बाकू बदबू की लपटों मुख से नीकले ॥
महीने की महीने घरे स तू आठाना[2] पर आग।
एक वर्ष का खर्च में स थारे बने सभी पोशाग रे ॥ १ ॥
हाथ होठ कपड़ा जले स थारो जले कलेजो दंत।
बार बार मैं मना करूं मत पियो तमाखू कंत ! रे ॥ २ ॥
टोली मिल हट्टी के ऊपर सुलफा आप उड़ावे।
लाभ खर्च जान्यो नहीं स थांने जंगली लोग बतावे रे ॥ ३ ॥
मर मर कुरला खाले जात को कारण नहीं छे कोय।
दक्षिण देश गुजरात में सरे इण विध जरदो होय रे ॥ ४ ॥

---

१ दूर। २ आठ आना।

जीप्यो छाप्यो बहुत मजा को किगो आंगणो कारो ।
सारा घर में राख बखेरी देख्यो माजनो थारो रे ॥ ५ ॥
फोड़ चिलम और ढोल तम्बाखू सीधी तरह समझाऊं ।
सारा शहर में शोभा होसी, कहसी लोग कमाऊ रे ॥ ६ ॥
छोड़ तमाखू जो सुख चाहे गुरु रह्या समझाई ।
महा मुनि नन्दलाल तणां शिष्य जैपुर जोड़ बनाई रे ॥ ७ ॥

---

[६६]

सप्त व्यसन-निषेध

(तर्ज —वनजारा)

जिया सात व्यसन मत सेवे, यों ऋषि मुनि सब केवे ।
जूआ खेले दाँव लगावे, पर धन पर इच्छा जावे जी ।
मोटो अनरथ भी कर लेवे ॥ १ ॥
मांस आहार करे नर भूखो[1] वह जावे नर्क में ऊंडो जी[2] ।
दिल दया न जिनके रेवे ॥ २ ॥
मद पान नशा का करना, तन धन हानि दुःख मरना जी ।
शुद्ध बुद्धि होस नहीं रेवे ॥ ३ ॥
वेश्या से नेह लगावे, ताको अदब आबरू जावे जी, ।
कोई भला मनुष्य नहीं केवे ॥ ४ ॥
सज शस्त्र अहेड़े[3] जावे, पर जीवों का प्राण सतावे जी ।
वह दुर्गति का दुख सेवे ॥ ५ ॥
करे चोरी वह चोर कहावे, जो राज में पकड़ा जावेजी ।
ताको बहुत तरह दुःख देवे ॥ ६ ॥
परनारी से प्रीत लगाके, कोई बैठा नहीं सुख पावेजी ।
पाले शील वही सुख लेवे ॥ ७ ॥
नन्दलाल मुनि गुरु देवा, मिलि पुण्य योग मुझे सेवा जी ।
गुरु चोखी शिक्षा देवे ॥ ८ ॥

---

१ मिश्रित । २ गहरा । ३ आखेट-शिकार ।

[७०]

सुमति का कथन

(तर्ज — लोभी पमवाजी)

लोभी जीवाजी घर आवो सुमत का छैल ॥
शिवपुर पाटन चालनो, पूरण सुख को ठौर।
निर्भय मारग पावरो कोई कुमति को सग छोड़ ॥ १ ॥
कुमति ठगारी जगत में, तिण सेती अनुराग।
प्रत्यक्ष सुख छे एह थी, पण पीछे फल किमपाक ॥ २ ॥
सहस्र वर्ष कुण्डरीकजी, पाल्यो संजम भार।
कुमति वश घर आइयो तो पहुँचो नरक मुझार ॥ ३ ॥
मुझ[1] सगे बहु मानवी, पाया भव नो पार।
वीर जिनेश्वर भाखियो, काई शास्तर में विस्तार ॥ ४ ॥
कुमति को सग छोड़ के, सुमति से कर हेत।
महामुनि नन्दलालजी तणा शिष्य कहे अब चेत ॥ ५ ॥

[७१]

शिक्षा

(तर्ज — भाव धरी जिम वन्दिये)

वीर जिनन्द दीनी आगन्या[2], आठ बोला में नहीं करीये प्रमाद के।
ठाणायग ठाणे आठ में, सुन कर ज्ञानी हो राखो हिवड़ा में याद के ॥
विनय करी गुरु देव को, सीखीजे हो अपूरव ज्ञान के।
बिना ज्ञान सोभे नहीं, बिन इन्दु हो जिम रजनी सुजान के ॥ १ ॥
ज्ञान भण्यो अति खप करी, परियटना हो कीजे वारम्वार के।
विन पर्यटन ठहरे नहीं, किम पावे हो शोभा जगत मझार के ॥ २ ॥
त्याग से आस्रव रोकिये, नयो बन्धन हो नहीं कर्म को थाय के।
भवोदधि में रुले नहीं, जिम रूंध्या हो छिद्र किश्ती के न्याय के ॥ ३ ॥

१ सीधा। २ सुमति के। ३ आज्ञा।

भव भव का जो संचीया, तप करके हो छीजे कर्मन काप के।
जिम नवनित में छाछड़ी, नहीं छीजे हो विन अगनी को ताप के ॥ ४ ॥
धर्म वही संसार में, नहीं दीसे हो जिनके पक्ष लगार के।
तिन को आधार दे धारिये, एथी मोटो हो किसो छे उपकार के ॥ ५ ॥
रोग करी तन पीडियो, वली तपस्या थी हो थयो अति गिल्यान[१] के।
आलस्य तज व्यावच[२] करो, मन भूंडो हो नहीं ध्याइये ध्यान के ॥ ६ ॥
नव शिष्य को अहो निशी सदा, क्रिया मांही हो तेने करीये निपुण के।
गुरु को मोले नहीं ओलम्भो, फिर करसे हो जन दोऊना गुण के ॥ ७ ॥
साधर्मी में खिच गई, मोटो पडियो हो झगडो माहो मांय के।
न्यायवन्त निरपक्ष थई, तेहनो दीजे हो विरोध मिटाय के ॥ ८ ॥
इण आठों ही बोल में, नित कीजे हो उद्यम नर नार के।
महा मुनि नन्दलालजी, तस्य शिष्य ने हो कीनी जोड़ रसाल के ॥ ९ ॥

---

[७२]

पौषध के अठारह दोष

(तर्ज —धन भाखी धन सुंदरी जाने पाल्यो शील अखण्ड)

जी श्रावक दोष अठारे पोषा तणा तुम मूल थी दूर निवार।
स्नान करे शोभा कारने कांई, घाले पटा माहीं तेल।
जी श्रावक घाले पटा माहीं तेल।
चौथो अधर्म सेवे सही, करे स्त्री संगाते केल ॥ १ ॥
वार वार भोजन करे कांई वस्त्र धुवावे तेम।
जी श्रावक वस्त्र धुवावे तेम ॥
रात्री तणो भोजन करे, ते तो ज्ञानी गुरु कहे एम ॥२॥
पोषा के पहिले दिने सेव्या यह षट दोषन जान।
जी श्रावक यह षट दोषन जान।
पोषा लियां पीछे इम करे यह तो द्वादश दोष वखान ॥३॥

---

१ रोगी। २ सेवा।

खुला[1] तणी द्यावच करे वलि वलि संवारे केश ।
जी श्रावक वलि वलि संवारे केश ।
मैल उतारे शरीर को कांई निद्रा लेवे विशेष ॥४॥
खाज खने विन पूंजिया ठालो बैठो विकथा[2] करे चार ।
जी श्रावक ठालो बैठो विकथा करे चार ।
पर दूषण प्रगट करे तेने नवमो दोष विचार ॥५॥
संसारना सौदा करे कांई निरखे अंग उपंग ।
जी श्रावक निरखे अंग उपंग ।
चिंतवे काम संसार का कांई बोले मुख अभंग ॥६॥
देव मनुष्य तिर्यञ्च को भय आणे मन मुझार ।
जी श्रावक भय आणे मन मुझार ।
लागे दोष अठारमो ते तो टालिये वारम्वार ॥ ७॥
आतम हित के कारणे कांई सतगुरु देवे छे सीख ।
जी श्रावक सत गुरु देवे छे सीख ।
दोष अठारा ही टालसी, तेहने मुक्त पुरी छे नजीक ॥८॥
मुनि नन्दलालजी दीपता तस्य शिष्य कहे हुलसाय ।
जी श्रावक शिष्य कहे हुलसाय ।
जोड़ करी अति प्रीपती गायो मांडलगढ़ के मांय ॥९॥

---

[७२]

बुड्ढे बाबा की चंचलता

(तर्ज:—फाग)

बुड्ढा बाबा को हुओ नहीं मन वश में, बुड्ढा बाबा को ।
बालक के मिस ख्याल तमाशा, देखन जावे नहीं मन वश में ॥१॥
गावे बजावे तिहों तान मिलावे,सुणवाने जावे नहीं मन वश में ॥२॥
सांठा सिंघोड़ा गिरी घर छुहारा, स्वाद करे नहीं मन वश में ॥३॥

---

१ जिसने पौषध अंगीकार न किया हो । २ स्त्रीकथा, भोजनकथा, देशकथा, राजकथा ।

कलप बनावे ने इतर लगावे, नैनां अंजन नहीं मन वश में ॥४॥
हँसी कुतूहल अति मन भावे, होली में जावे नहीं मन वश में ॥५॥
पाँचों इन्द्रीय का छोड़ विषय को, अब तक नहीं कियो मन वश में ॥६॥
मुनि नन्दलाल तणों शिष्य गावे, कहाँ तक कहूं नहीं मन वश में ॥७॥

[७४]

मानव जन्म की खेती

(तर्ज—पूर्ववत्)

खेती करले रे मानव भव तूं पायो ॥
काया को कूप बन्यो अति भारी, आयुष पूर्ण भरयो वारी ॥१॥
सासोश्वास को चड़स बडोरी, रात दिवस जुतिया धोरी ॥२॥
ज्ञान की खेती ने बीज धर्म को, खरड़ खण्यो खोद आठों कर्म को ॥३॥
ध्यान की गोफ लम्बों केरो कंकर, काक प्रमाद उड़ावो भटकार ॥४॥
नेम की नाड़ी ने डोर हर्ष की, ऐसी खेती कर नर भव की ॥५॥
श्रद्धा को सर ने प्रतीत को जूडो, यह सब देवे सतगुरु रूड़ो ॥६॥
ऐसी खेती कोई भव जीव करसी,'खूब'कहे आसा सहु फलसी ॥७॥

[७५]

चंचल माया

(तर्ज,—भजन)

चंचल माया म क्यों चेतन ललचावे ॥
स्वजन और परजन मित्रादिक जिन से नेह लगावे ।
जैसे मेलो बिछुड़ जाय तिम यह सब निज निज स्थान सिधावे ॥१॥
ख्याल रच्यो बाजीगर खलकत दौड़ दौड़ ने आवे ।
डुगडुगी हुई बद बड़ी[१] फिर थांकी फिरे सब सम भग जावे ॥२॥

१ मोटा ।

गाज बीज बादल और बर्षा उमड़ घमड़ कर आवे ।
हवा चली जब मेघ घटा मिट तुरत गगन निर्मल दर्शावे ॥३॥
नाना विध पक्षी मिल तरुवर निशि भर वास बसावे ।
दिवस भयो तब दशों दिशि उड़ कहां से आवे और किधर सिधावे ॥
राज रंक को मिला सुपन में इच्छित चीज उड़ावे ।
आंख खुली तब कहाँ ठाठ वह चहुँ दिशि देख देख पछतावे ॥५॥
उगणीसे अस्सी सोलह सुद तीज जेठ की आवे ।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य दिल्ली जोड़ करी जग में जश पावे ॥६॥

[७६]

जूआ-निषेध

(तर्ज:—झड़प व चौपाई)

ऊंच निवार सुनजो सब भाई, सट्टाबाज ने धूम मचाई ।
सेठ साहब की नारी बोली, ले लपकके खिड़की खोली ॥ १ ॥
सैंतीस हजार खोया सट्टा में, बाईस हजार गया गट्टा में ।
तेरह हजार तास की पत्ती, बोहत्तर हजार पर मेल बत्ती ॥ २ ॥
हर्ष हर्ष ने जुआ खेल्या, हाट हवेली गिरवे मेल्या ।
घर को सारो भर्म उघाड्यो, नौ नौ वार दिवालो काढ्यो ॥ ३ ॥
रकम छोरी की ले गया ताकी, ते पण जाय होली में नाखी ।
सात भगोना सतरह थाल्या, आठ कटोरा छप्पन छाल्या ॥ ४ ॥
गया कठेई आज सम्भाल्या, पूछ्यो तो दी सौ सौ गाल्या ।
रुमाल धोती रेशमी वाघां, नौ की छे में बेची पाघां ॥ ५ ॥
गोटादार रेशमी साड़ी, खोल गांठरी ले गया काढ़ी ।
ढोल्या पलंग गोदड़ा गाया, खोई खवाई ने हो गया बाबा ॥ ६ ॥
गिलास गड़वो ले गया ताणी, अबे काहि से पीओगा पाणी ।
पैसो एक कभी नहीं बाल्यो, घर को कीधो झाड्यो पाड्यो ॥ ७ ॥
संग जुआ को छोड़ो आगो, नेम धरम के मारग लागो ।
शिक्षा दी घर वाली सागे, [१]नसरफट्ट के कछु न लागे ॥ ८ ॥*

१ निर्लज्ज ।

समभे' यात कही सब आले, सट्टा याज ने अब की लागे।
पत्र खेचने कमको केम, बुरी लगे तो कर दो नेम ॥ ६ ॥
'खूब' मुनि सट्टा को रास्यो, गड़प चन्द घोड़े परकाश्यो।
जुआ खेल कभी मत खेलो, सुख चाहो तो सौगन्ध ले लो ॥१०॥

[७७]

अरिहन्त सिद्ध वन्दना

(तर्ज:—पारस प्रभु से अर्ज हमारी है रात दिन)

मेरे तो वही हैं अरिहन्त सिद्धवर।
करता हूँ उन्हें वन्दना मैं सिर झुकाय कर ॥
हैं गुण अनन्त ज्ञानादि सब द्रव्य के ज्ञाता।
सुरेन्द्र और नरेन्द्र भक्ति करते आय कर ॥ १ ॥
विषय कषाय जीत कर कहलाते वीतराग।
खड्गादि शस्त्र ना रखें वे धैर्य लाय कर ॥ २ ॥
महिमा अपार सार जिनकी तिहूँ लोक में।
फिर पाते हैं शिव धाम सब दुःख को मिटाय कर ॥ ३ ॥
सिद्धों के सुख की ओपमा न कोई बता सके।
नहीं आते मुड़ के फिर अचल गति को पाय कर ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी मुझ पै करी दया।
शुद्ध देव की पहिचान दी सारी बताय कर ॥ ५ ॥

[७८]

सुगुरु वन्दना

(तर्ज:—पूर्ववत्)

जो साधु संयम के गुणों में दिल रमाते हैं।
ऐसे गुरु के चरण में हम सर झुकाते हैं ॥
जो हिंसा झूठ चोरी मैथुन परिग्रह।
पांचों ही आस्रव त्याग के त्यागी कहलाते हैं ॥ १ ॥

१ समुच्चय।

मान या अपमान लाभ या अलाभ हो।
सुख दुःख निन्दा स्तुति में समभाव लाते हैं॥ २॥
गृहस्थ या कोई संत्र से न ममत्व भाव है।
नव कल्प विहारी कथा निर्वद्य सुनाते हैं॥ ३॥
प्रतापना और भूख प्यास शीत उष्ण का।
सहते परिषह आप न चित्त को चलाते हैं॥ ४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी कहते सही सही।
वो ही मुनि भव सिन्धु से तिरते तिराते हैं॥ ५॥

---

[८०]

हितोपदेश

(तर्जः—पूर्ववत्)

पाई है तू अनमोल ऐसी जिन्दगी ऐ नर।
इस लोक की परवाह नहीं परलोक से तो डर॥
सन्तों का कहना मान के जुल्मों को छोड़ दे।
नहीं तो जिया आगे तुझे पड़ जायगी खबर॥ १॥
दिन चार का महमान तू विचार तो सही।
तैने किया शुभ काम क्या पृथ्वी पे आय कर॥ २॥
चौरासी लक्ष योन में टकराता तू फिरा।
निकल गया अन्धियारा अब तो हो गई फजर॥ ३॥
मान के वश जाति या पर जाति धर्म में।
तैने डलाई फूट कसी नर्क पे कमर॥ ४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी देते हितोपदेश।
मंजूर कर ले फिर तो है सुर लोक की सफर॥ ५॥

[८१]

चेतावनी

(तर्ज:—लाखों पापी तिर गए सतसंग के परताप से)

कहने वाला क्या करे तेरी तुझे मालूम नहीं।
कुपन्थ में अब क्यों चले तेरी तुझे मालूम नहीं॥
आया था किस काम पै और काम क्या करने लगा।
खास मतलब क्या हुआ तेरी तुझे मालूम नहीं॥१॥
पाया जो धन माल कुछ शुभ काम में निकला नहीं।
कुकार्य में पैसा गया तेरी तुझे मालूम नहीं॥२॥
लोह की गठरी बांध के तूने उठाई शीष पै।
पार होना सिन्धु से तेरी तुझे मालूम नहीं॥३॥
जहर खाकर जीवना प्रतिबोध सोते सिंह को।
यों पाप का फल है बुरा तेरी तुझे मालूम नहीं॥४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
अब दाव आया मोक्ष का तेरी तुझे मालूम नहीं॥५॥

---

[८२]

कर्म फल

(तर्ज: – पूर्ववत्)

कर्म यहाँ जैसा करे वैसा ही वह फल पायगा।
इस लोक या परलोक में वैसा ही वह फल पायगा॥
शास्त्र का फरमान है, हठ छोड़ के कर खोजना।
पूर्ण ज्ञानी कह गए, यह ही कथन मिल जायगा॥१॥
कोई सुखी कोई दुःखी कोई रंक है कोई राजवी।
कोई धनी कोई निर्धनी यह अवश्य ही मिल जायगा॥२॥
कोई चरिन्द कोई परिन्द कोई छोटे मोटे जीव हैं।
अपने २ कर्म से सुख दुख सभी भर जायगा॥३॥

कृष्णजी के भ्रात गजसुकमालजी हुए मुनि।
बदला उन्होंने भी दिया कैसे तू छूट जायगा ॥४॥
शालिभद्रजी को मिली रिद्धि सुपात्र दान से।
निज हाथ से कर दान तू भी ऐसा ही फल पायगा ॥५॥

[८३]

संसार की अस्थिरता

(तर्ज.—पूर्ववत्)

कौन यहाँ अमर रहा तू समझ ले अच्छी तरह।
उम्र तेरी जा रही तू समझ ले अच्छी तरह॥
डाभाग्र जल बिन्दु जैसी उम्र तेरी अल्प है।
दो पच्चास[1] बस हद है तू समझ ले अच्छी तरह ॥१॥
कई सागरोपम[2] लगे सुख भोगते सुरलोक में।
वह भी स्थिति पूरी हुवे तू समझ ले अच्छी तरह ॥२॥
पवन या मन की गति ज्यों वेग नदी का बहे।
स्थिर नहीं सूर्य शशी तू समझ ले अच्छी तरह ॥३॥
राज पाया मुफ्त का किसी रंक ने ज्यों स्वप्न में।
वह ठाठ कितनी देर का तू समझ ले अच्छी तरह ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
सफल कर इस वक्त को तू समझ ले अच्छी तरह ॥५॥

[८४]

शुभ काम क्या किया

(तर्ज:—पूर्ववत्)

मानुष का भव पाय के शुभ काम तैंने क्या किया।
अपने या पर के लिए शुभ काम तैंने क्या किया॥
नाम वर जीवन किया दुनिया में वाह वाह हो रही।
भूला फिरे मगरूर में शुभ काम तैंने क्या किया ॥१॥

१ सौ। २ उपमा द्वारा बतलाया जा सके वाला एक विशाल काल।

मित्र मिल, गोठां करी वेश्या नचाई बाग में।
माल खाए मस्करे शुभ काम तैंने क्या किया ॥२॥
तन से या धन से कभी नहीं ज्ञानि की रक्षा करी।
प्रेम नहीं सत्संग से शुभ काम तैंने क्या किया ॥३॥
दिन गँवाया खाय के और निश गँवाई नींद में।
यों वक्त तेरा सब गया शुभ काम तैंने क्या किया ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
विद्वान हो तो समझ ले शुभ काम तैंने क्या किया ॥५॥

[८५]

सत्संग की महिमा

(तर्जः—पूर्ववत्)

सत्संग से ज्ञानी बने तू चाहे जिससे पूछ ले।
मोक्ष भी हासिल करे तू चाहे जिससे पूछ ले ॥
कई पापी हो चुके वे तिर गए सत्संग से।
शक हो तो मेरी है रजा, तू चाहे जिससे पूछ ले ॥१॥
जैसे पत्थर नाव के संग नीर में तिरता रहे।
परले किनारे वह लगे तू चाहे जिससे पूछ ले ॥२॥
यों हलाहल जहर को भी वैद्य की संगत मिले।
अमृत बना दे औषधी तू चाहे जिससे पूछ ले ॥३॥
सोनी सुवर्ण को उठाकर जलती पावक में धरे।
फूँक कर निर्मल करे तू चाहे जिससे पूछ ले ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
सुधरे पशु भी संग से तू चाहे जिससे पूछ ले ॥५॥

[८६]

धर्म का असली स्वरूप

(तर्ज:—पूर्ववत्)

सब मान सन्तों का कहा यह खास असली धर्म है।
किन्ही पंडितों से पूछ ले यह खास असली धर्म है ॥
जीवों की रक्षा करे और झूठ ना बोले कभी।
चोरी न का त्यागन करे, यह खास असली धर्म है ॥१॥
ब्रह्मचर्य का पालना संग परिग्रह का परिहरे।
रात्रि भोजन ना करे यह खास असली धर्म है ॥२॥
पाँचों इन्द्री को दमे क्रोधादि चारों[1] जीत ले।
समभाव शत्रु मित्र पे यह खास असली धर्म है ॥३॥
दान दे तप जप करे नरमी रखे समझे सदा।
शुभ योग[2] में रमता रहे यह खास असली धर्म है ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
गुणपात्र की सेवा करे यह खास असली धर्म है ॥५॥

---

[८७]

श्रावक के गुण

(तर्ज —पूर्ववत्)

समणोपासक के सदा गुण ऐसे होना चाहिये ॥
अनुराग रक्खा धर्म में गुण ऐसे होना चाहिये ॥
आवश्यक करके सुबह गुरुदेव के दर्शन करे।
बाद फिर शास्तर सुने गुण ऐसे होना चाहिये ॥१॥
गुरु देव आवे द्वार पे तब उठ कर आदर करे।
दान दे निज हाथ से गुण ऐसे होना चाहिये ॥२॥

---

[1] क्रोध, मान, माया, लोभ। [2] मन, वचन और काय की अच्छी प्रवृति।

धर्म से डिगते हुए को सहायता दे स्थिर करे।
उदास रहे संसार से गुण ऐसे होना चाहिये॥ ३॥
हितकारी चारों संघ के समभाव सम्पत विपत में।
गुण पात्र की स्तुति करे गुण ऐसे होना चाहिये॥ ४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
न्यायी हो निष्कपटी हो गुण ऐसे होना चाहिये॥ ५॥

[८६]

सुशिष्य के लक्षण

(तर्जः—पूर्ववत्)

आज्ञा गुरु की मानता जो वही शिष्य सुशिष्य है।
आज्ञा का पालन न करे जो वही शिष्य कुशिष्य है॥
वन्दना करके सुबह ही पूछ ले गुरु देव से।
आज्ञा हो वैसा करे जो वही शिष्य सुशिष्य है॥ १॥
आते जाते देख गुरु को हो खड़ा कर जोड़ के।
भाव से भक्ति करे जो वही शिष्य सुशिष्य है॥ २॥
लेन में या देन में या खान में या पान में।
कार्य करे सब पूछ के जो वही शिष्य सुशिष्य है॥ २॥
जो जो सब दिन रात की क्रिया वही करता रहे।
चारित्र में माने मजा जो वही शिष्य सुशिष्य है॥ ४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है!
निज दाव जीते मोक्ष का जो वही शिष्य सुशिष्य है॥ ५॥

[९०]

पतिव्रता के लक्षण

(तर्जः—पूर्ववत्)

पति का हुक्म पाले सदा पतिव्रता वही नार है।
सुख में सुखी दुःख में दुःखी पतिव्रता वही नार है॥
कुटुम्ब को सुखदायिनी सुसम्प से मिल जुल रहे।
सुमती सुभाषिणी पतिव्रता वही नार है॥ १॥

विपत में,अनुकूल रहे चित अस्थिर हो तो थिर करे।
उपदेशदाता धर्म की पतिव्रता यही नार है ॥ २ ॥
सीता सती राजीमती जैसे रहीं दृढ़ धर्म में।
पर पुरुष को चाहे नहीं पतिव्रता यही नार है ॥ ३ ॥
रोष में पति कुछ कहे नहीं सामने बोले कभी।
ज्यों त्यों दिल को खुश करे पतिव्रता यही नार है ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
दासी बन रहे चरण की पतिव्रता यही नार है ॥ ५ ॥

[६१]

हिंसा-निषेध

(तर्जः—पूर्ववत्)

नाहक सतावे और को यह तेरे हक में है बुरा।
मान या मत मान ऐ नर ! तेरे हक में है बुरा ॥
अपने अपने कर्म से जिस योन में पैदा हुए।
तू बेगुनाह मारे उसे यह तेरे हक में है बुरा ॥१॥
सुख के लिये पंछी पशु फिरते छुपाते जान को।
रहम के बदले सताना तेरे हक में है बुरा ॥२॥
पीछे जो बच्चे रहें कौन पालना उनकी करे।
परवशपने वे भी मरें यह तेरे हक में है बुरा ॥३॥
तेरे जब काँटा लगे तब दुःख तुझे मालूम हुवे।
इस तरह सब में समझ यह तेरे हक में है बुरा ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
रहम जब तक दिल में नहीं यह तेरे हक में है बुरा ॥५॥

[६२]
मृषावाद-निषेध

(तर्जः—पूर्ववत्)

याद रख नर ! झूठ से तारीफ तेरी है नहीं ।
बदल जाना बोल के तारीफ तेरी है नहीं ॥
झूंठ से प्रतीत उठे झूंठ में झूंठा कहें ।
लोग सब लापर गिनें तारीफ तेरी है नहीं ॥१॥
वसु[1] राजा का सिंहासन सत्य से रहता अधर ।
वह झूंठ से गया नरक में तारीफ तेरी है नहीं ॥२॥
नीच बच्छे झूंठ को और ऊँच तो बच्छे नहीं ।
झूंठ निन्दे सब जगत तारीफ तेरी है नहीं ॥३॥
झूंठ से साधु को भी आचार्य पद आता नहीं ।
व्यवहार सूत्र माँही लिखा तारीफ तेरी है नहीं ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही उपदेश है ।
तू झूंठ में माने मजा तारीफ तेरी है नहीं ॥५॥

---

[६३]
अस्तेय-निषेध

(तर्जः—पूर्ववत्)

साफ हुकम है शास्त्र का नर छोड़ दे तू तस्करी ।
तेरे हक में ठीक है नर छोड़ दे तू तस्करी ॥
बदनीत तस्कर की रहे करुणा न जिसके अङ्ग में ।
सब जाति में चोरी करे नर छोड़ दे तू तस्करी ॥१॥

---

[1] वसु राजा का सिंहासन उसके सत्य के प्रभाव से अधर रहा हुआ था । एक बार उसके दो सहपाठियों में—पर्वत और क्षीरकदम्बक में, अज शब्द के अर्थ पर विवाद उठ खड़ा हुआ । दोनों ने निश्चय किया कि जिसका पक्ष गलत होगा, उसकी जीभ काट ली जायगी । राजा वसु निर्णायक चुना गया । लिहाज में आकर वसु ने जानबूझ कर झूठा निर्णय दिया । 'अज' शब्द का वहाँ सही अर्थ था—न उगने योग्य पुराना धान्य, मगर वसु ने अर्थ बतला दिया—बकरा । इस झूठ के कारण देवता ने उसे आसन सहित नीचे पटक दिया ।

सुर स्थान या शिवस्थान या यह धर्म का अस्थान है।
मस्जिद मन्दिर न गिनें नर छोड़ दे तू तस्करी ॥२॥
मग जगह विषम जगह चोरी करे मारे मरे।
समुद्र में चोरी करे नर छोड़ दे तू तस्करी ॥३॥
सरकार में पाये सज़ा वह कैसे कैसे दुख सहे।
उसको न मिलने दें किसी से छोड़ दे तू तस्करी ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
एक साधु जन इससे बचे नर छोड़ दे तू तस्करी ॥५॥

[६४]

अब्रह्मचर्य-निषेध

(तर्जः—पूर्ववत्)

इज्जत बनी रहेगी सदा परनारी का संग छोड़दे।
अब भी समझ कोई डर नहीं परनारी का संग छोड़दे॥
राजा कीचक[1] द्रौपदी पै चित्त दियो तब भीम जी।
छत उठा स्तम्भ बीच धरा परनारी का संग छोड़दे॥ १॥
कई धन खोकर चुप रहे कई जान से मारे गए।
कई रोग से सड़-सड़ मरे परनारी का संग छोड़दे॥ २॥
कई जूतियों से पिट गए कई जाति से खारिज हुए।
कई राज में पकड़े गए परनारी का संग छोड़दे॥ ३॥
शील में सीता सती फिर दृढ़ रही राजीमती।
इस तरह तू दृढ़ रह परनारी का संग छोड़दे॥ ४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
शील में सुख है सदा परनारी का संग छोड़दे॥ ५॥

१ अज्ञातवास के समय द्रौपदी विराटनगर में दासी बन कर रही थी। राजा का साला कीचक दुराचारी था। द्रौपदी के प्रति दुर्भावना उत्पन्न होने पर भीम ने उसे मार डाला था।

[६५]

परिग्रह-निषेध

(तर्ज:—पूर्ववत्)

माया को तू अपनी कहे अब तक तुझे मालूम नहीं।
यह किसी की हुई न होयगी अब तक तुझे मालूम नहीं॥
आया था जब नम्र होकर साथ कुछ लाया नहीं।
पीछे पसारा सब हुआ अब तक तुझे मालूम नहीं॥ १॥
भाई-भाई सासु जमाई पुत्र और माता-पिता।
धन के लिये शत्रु बने अब तक तुझे मालूम नहीं॥ २॥
बाबर अलाउद्दीन महमूद अकबर हुए बादशाह।
वे भी खजाना छोड़ गए अब तक तुझे मालूम नहीं॥ ३॥
अकृत्य कार्य तू करे दिन रात पच पच के मरे।
क्या ठीक कौन मालिक बने अब तक तुझे मालूम नहीं॥ ४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
सन्तोष घर आराम का अब तक तुझे मालूम नहीं॥ ५॥

---

[६६]

क्रोध-निषेध

(तर्ज:—पूर्ववत्)

क्रोध मत कर ए जिया! सुन हाल छट्टे पाप का।
क्रोध की ज्वाला गरम रख खोफ इसकी ताप का॥
क्रोध जिसके छा रहा वहाँ सत्य का क्या काम है।
सरलता नहीं नम्रता नहीं रहे क्षमा गुण आपका॥ १॥
एक क्रोधी जिसके घर सब कुटुम्ब को क्रोधी करे।
दिल चाहे जो बकता रहे नहीं ध्यान रहे माँ बाप का॥ २॥
क्रोधी अपनी जान या परजान को गिनता नहीं।
अवगुण निकाले और के यह काम नहीं सफा रका॥ ३॥

प्रीति टूटे क्रोध से गुण नष्ट होवे क्रोध से।
हित बात पर गुस्सा करे फिर काम क्या चुपचाप का ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
क्रोध से बचते रहो टल जाय दुख सन्ताप का ॥ ५ ॥

[६७]

मान-निषेध

(तर्ज:—पूर्ववत्)

मान करना है बुरा जहाँ मान वहाँ अपमान है।
लाभ या नुकसान इससे तुझ को नहीं कुछ भान है ॥
लाखों रुपैया हाथ से बरबाद कर दिया मान से।
शुभ काम में दमड़ी नहीं तू काय का इन्सान है ॥ १ ॥
सीता को देना हाथ से रावण को मुश्किल हो गया।
मर मिटा वह भी मरद अभिमान ऐसी तान है ॥ २ ॥
ससार में या धर्म में तैं बीज बोया फूट का।
दिल किया राजी यहाँ आखिर नरक स्थान है ॥ ३ ॥
दुनिया में कई होगये फिर और भी हो जायँगे।
घूमते गजराज जिनके स्थान अब वीरान है ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
छोड़ दे जो मान उसका तुरत ही सन्मान है ॥ ५ ॥

[६८]

कपट-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

कपट करना छोड़ दे निष्कपट रहना ठीक है।
थोड़ासा जीना जगत् में निष्कपट रहना ठीक है ॥
सीता सती को कपट से लंका में रावण लेगया।
आखिर नतीजा क्या मिला निष्कपट रहना ठीक है ॥ १ ॥

कपटी पुरुष का जगत में विश्वास कोई करता नहीं।
कपट का घर झूंठ है निष्कपट रहना ठीक है ॥ २ ॥
लेने में या देने में छल कपट से उतरता नहीं।
वह राज में पावे सजा निष्कपट रहना ठीक है ॥ ३ ॥
माया से नर नारी हुए नारी से नपुंसक बने।
यह कपट का फल है सही निष्कपट रहना ठीक है ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
निष्कपट की इज्जत बढ़े निष्कपट रहना ठीक है ॥ ५ ॥

[६६]

लोभ-निषेध

(तर्ज:—पूर्ववत्)

लोभ नवमा पाप है तू लोभ तज सन्तोष कर।
निर्लोभ में आराम है तू लोभ तज सन्तोष कर ॥
लोभ से हिंसा करे और झूंठ बोले लोभ से।
लोभ से चोरी करे तू लोभ तज सन्तोष कर ॥१॥
लोभ से माता पिता और पुत्र के अनबन रहे।
हित मीत सगपन ना गिने तू लोभ तज सन्तोष कर ॥२॥
लोभ वश जिनपाल जिनरिख जहाज में चढ़ कर गए।
समुद्र में जिनरिख मरा तू लोभ तज सन्तोष कर ॥३॥
लोभ जहाँ इन्साफ नहीं तू देख ले अच्छी तरह।
सब पाप की जड़ लोभ है, तू लोभ तज सन्तोष कर ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
निर्लोभ से मुक्ति मिले तू लोभ तज सन्तोष कर ॥५॥

[१००]
राग-निषेध

(तर्ज:—पारस प्रभु से अर्ज हमारी है रात दिन)

मोह-नीर है अनादि इसको टाल टाल टाल ।
तेरे कौन है संघाति जरा [1]नाल नाल नाल ॥
यह मोक्ष पंथ शुद्ध है तू चाल चाल चाल ।
एक आत्मा तुल्य जान दया पाल पाल पाल ॥ १ ॥
रहेगा धरा यह यहां का धन माल माल माल ।
दुर्गति में तेरी आत्मा तू मत डाल डाल डाल ॥ २ ॥
मत कर गरूर देख तू काले बाल बाल बाल ।
तेरे सिर पर जबरदस्त है यो काल काल काल ॥३॥
मुनि नन्दलाल गुणवान की आज्ञा पाल पाल पाल ।
ले धर्मरत्न शीघ्र कंकर डाल डाल डाल ॥ ४ ॥

---

[१०१]
कुसम्प-निषेध

(तर्जः—लाखों पापी तिर गए सतसंग के परताप से)

संतों का कहना मान के तुम छोड़ दो कुसम्प को ।
प्रेम से मिल जुल रहो तुम छोड़ दो कुसम्प को ॥
भाई भाई या बाप बेटा राज तक जो चढ़ गए ।
बर्बाद पैसे का किया तुम छोड़ दो कुसम्प को ॥ १ ॥
राज रावण का गया पञ्चों की गई पंचायती ।
साधु की गई सत्यता तुम छोड़ दो कुसम्प को ॥ २ ॥
कई तो खुद मर गए और कई को मरवा दिए ।
कई गए परदेश में तुम छोड़ दो कुसम्प को ॥ ३ ॥
कई की इज्जत गई कई धर्म में हानि करी ।
भरम घर का खो दिया तुम छोड़ दो कुसम्प को ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है ।
सम्प में सुख है सदा तुम छोड़ दो कुसम्प को ॥ ५ ॥

---

[1] निहार-देख । [2] फूट ।

[१०२]

बुराई का निषेध

(तर्जः—पूर्ववत्)

करके बुराई और की क्यों पाप का भागी बने।
बहकाने वाले बहुत हैं क्यों पाप का भागी बने॥
सत्य हो चाहे झूठ हो निर्णय तो करना ठीक है।
अपनी अपनी तान के क्यों पाप का भागी बने॥ १॥
कानों सुनी झूठी हुवे आंखों से देखी सत्य है।
देखी भी झूठी हो सके क्यों पाप का भागी बने॥ २॥
मुख से बुराई नीकले ज्यों हाट हो चर्मकार की।
यह न्याय निन्दक पै सही क्यों पाप का भागी बने॥ ३॥
नीर को तज खीर पीवे हंस का यह धर्म है।
तू भी ले गुण इस तरह क्यों पाप का भागी बने॥ ४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
निन्दा बुराई छोड़ दे क्यों पाप का भागी बने॥ ५॥

---

[१०३]

ईर्षानिषेध

(तर्जः—पूर्ववत्)

देख कर पर सम्पति क्यों ईर्षा करता है तू।
जैसा करे वैसा भरे क्यों ईर्षा करता है तू॥
लक्ष्मी भरपूर फिर व्योपार में दुगने हुए।
अपने अपने पुन्य है क्यों ईर्षा करता है तू॥ १॥
पुत्र पौत्रादि मनोहर बहुत ही परिवार है।
मौज करे रंगमहल में क्यों ईर्षा करता है तू॥ २॥
न्यात या परन्यात या पंचायत या सरकार में।
पूछ जिनकी हो रही क्यों ईर्षा करता है तू॥ ३॥

दयावन्त दानेश्वरी उपदेश दाता धर्म का।
महिमा सुनि गुणवान,की क्यों ईर्षा करता है तू॥ ४॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
द्वेप बुद्धि छोड़ दे क्यों ईर्षा करता है तू॥ ५॥

[१०४]

सत्योपदेश

(तर्ज:—पारस प्रभु से अर्ज हमारी है रात दिन)
ये स्वार्थी स्वजन इनमें राचिए नहीं।
तू मान मान मान मान मान तो सही॥
तू क्यों करे अभिमान बहुत वक्त है नहीं।
लेना है यहाँ विश्राम आखिर पथ तो वही॥ १॥
तेरे दिल में कुछ और मुंह से कहत है कई।
अधर्म में तमाम उमर बीत यों गई॥ २॥
दिल चाहे सो कर मित्र यहाँ तो पूछ है नहीं।
कर्मों का तो इन्साफ तेरा होयगा वहीं॥ ३॥
मेरे गुरु नन्दलाल जिनकी कहन है यही।
कर लीजिये भलाई इक धर्म में रही॥ ४॥

[१०५]

उपदेश

(तर्ज:—पूर्ववत्)
जिया मान ले मुनिराज सच्ची कहत हैं अरे।
ले मुक्ति को सामान अब ढील क्यों करे॥
ये पुत्र मात तात भ्रात जिनसे नेह करे।
न तुझ को तारणहार क्यों इनके जाल में परे॥१॥

है थोड़ी सी जिन्दगानी तू न पाप से डरे।
बिन पाल्या धर्म नियम कैसे आत्मा तरे ॥२॥
हो जाऊं मैं धनवान ऐसी कल्पना करे।
न भाग्य बिना पावे नाहक डोलतो फिरे ॥३॥
महा मुनि नन्दलालजी है सन्त में सरे।
ससार सागर घोर आप तारे और तरे ॥४॥

[१०६]

दान शील तप भाव

(तर्ज—छोटी कड़ी)

जो चाहो शीघ्र इस भव सागर से तिरना।
तुम दान शील तप भाव आराधन करना ॥
एक सगम नामा ग्वाला पूर्वभव माँई।
ले खीर थाल में भली भावना भाई ॥
एक मुनि पधारे उसी वक्त के माँई।
दिया दान हाथ से महान खुशाली छाई ॥
हुवे शालिभद्र यह कथन शील का वरना ॥१॥
अभया रानी सुदर्शन सेठ के ताई।
हो विषय अंध महलों में लिया बुलवाई ॥
नहीं छोड़ा शील तब रानी झूक मचाई।
बिन न्याय किया नृप शूली दिया चढ़ाई ॥
सुर करी सहाय यह कथन शील का वरना ॥२॥
एक मन्ना मुनि हुवे छट छट तप के धारी।
कर आमिल पारणे स्वाद दिया सब टारी ॥
श्रेणिक नृप आगे वीर कीर्ति विस्तारी।
गये स्वार्थसिद्ध नव मास सजम शुद्ध पारी ॥
महाविदेह में जासी मोक्ष मेट जर मरना ॥३॥

१ भेंट।

हुये ऋषभदेवजी पुत्र भरत महाराया।
शृंगार सर्व सज काच महल में आया॥
शुद्ध अनित्य भावना भाय केवल पद पाया।
मुनिराज होय दश सहस्र भूप समझाया॥
फिर गये मोक्ष यह कथन भाव का वरना॥ ४॥
यह दानादिक गुण चार जिन्हों में पाता।
उनके सबही दुःख बादल ज्यों बिरलाता॥
किया दिल्ली शहर चौमास रही सुख साता।
बासठ बत्तीस में जोड़ लावनी गाता॥
कहे 'खूब' मुनि मुझ ज्ञानी गुरु का शरना॥ ५॥

[१०७]

पुण्य की महिमा

(तर्जः—पूर्ववत्)

पुण्य की महिमा सब गावे पुण्य से वांछित फल पावे॥
पुण्य से मनुज जन्म पावे, पुण्य से उत्तम कुल पावे।
पुण्य से तन निरोग पावे, पुण्य से दीर्घ आयु पावे॥
पुण्य उदय सद्गुरु मिले, मिले सूत्र के बैन।
जीवादिक नव तत्त्व पिछाने, खुले जिगर के नैन॥
पुण्य से धर्म हाथ आवे॥ १॥
पुण्य से नरेन्द्र पद पावे, पुण्य से सुरेन्द्र पद पावे।
पुण्य से अति आदर पावे, पुण्य से बिन श्रम धन पावे॥
विपिन पहाड़ जल अगन में, मिले पुण्य से साज[१]।
दशों दिशी जन-जन के मुख से, उस की सुनें अवाज॥
पुण्य से सरस शब्द पावे॥ २॥
पुण्य से सुर आते दौड़ी हुकम में रहते कर जोड़ी।
पुण्य से टले विघन कोड़ी पुण्य देते बन्धन तोड़ी॥
मेरे गुरु नन्दलाल जी, कहते साफ सुनाय।
रामपुरा में जोड़ बनाई, सब के पुण्य सहाय॥
सजन सुन के यकीन लावे॥ ३॥

१ सहाय।

[१०८]

चतुर्गति वर्णन

(तर्जः – पूर्ववत्)

पाय नरभव की जिन्दगानी, समझ अब भज अरिहन्त प्रानी ।
विश्व में तू फिरता आया, जाग अब सोवे मत भाया ॥
नर्क बिच तैंने दुःख पाया, गोता वैतरणी में खाया ।
वृक्ष सांमली ऊपरे, तीक्षण कंट बनाय ।
पकड़ देव यम डाल दिया, सकल विंधाणी काय ॥
तुरत ही खेंच लिया तानी ॥ १ ॥

यम्म पशुओं का रूप करके, पत्ती बिच्छू अहि अजगर के ।
खाया तुझ चटका दे करके, सहा दुःख जब पल सागर के ।
नर्कपाल तुझ नर्क में, मध्यो जमी पर डाल ।
दयारहित मुद्गल से वेरा, किया हाल बे हाल ॥
कौन गिनते राजा रानी ॥ २ ॥

करी जीवघात झूठ बोला, किया कुड मापा कुड तोला ।
गमन परनार संग डोला, पाप अपना पर-शिर ढोला ॥
मर्म उघाड्या पार का, कूड़ साख चित लाय ।
सत्पुरुषों की करी बुरायां, मगन होय मन माय ॥
कहे यमराज न्याय छानी ॥ ३ ॥

मांस का अहार किया चुपचाप, स्वाद करके पीया शराब ।
आज महेमान पधारे आप, आड़ो नहीं आवे मा और बाप ॥
जैसे कर्म यहाँ पर करे, वैसा सब जितलाय ।
लोहादिक कर गर्म गर्म यम,तुझको दिया पिलाय ।
शास्त्र में फरमा गये ज्ञानी ॥ ४ ॥

योनि तिर्यंच की तू पाया, पशु और पक्षी कहलाया ।
विषम सम जगह जन्म पाया, पिया जल मिला वही खाया ॥
झाड़ खाड़[२] विल पहाड़ में, खोम्बल[३] माला माय ।
शीत उष्ण का सहा महा दुख, कहाँ तक दूं दर्शाय ॥
ऊपर से बरस रहा पानी ॥ ५ ॥

---

१ कूड़-झूठा । २ गढ़ा । ३ घोंसला ।

कभी तू अगनी में जलगया, कभी तू पानी में गलगया।
कभी तू मिट्टी में गलगया, कभी तू घाणी में पिलगया॥
पशु हुआ बंधन पड़ा, पक्षी पिंजरा मांय।
कहाँ कुटुम्बी कहाँ आप, यह हुआ कर्म का न्याय॥
वक्त पर कहाँ चुगा पानी॥ ६॥

किसी ने तेरा सींग तोड़ा, किसी ने कान नाक फोड़ा।
किसी ने तेरा पूंछ मोड़ा, किसी ने हल रथ में जोड़ा॥
चाम रोम नख कारणें, दुष्ट दिया तुझ मार।
सेक भूंज तल खा गये, ना कोई सुनी पुकार॥
जरा तो सोच अभिमानी॥ ७॥

कभी हुआ मनुष्य कुजात, हीन और निर्धन दीन अनाथ।
दुःख में गुजरा तेरा दिन रात, कौन पूछे सुख दुख की बात॥
रहेवा काजे घर नहीं, तन ढांकन पट नांय।
मालिक की गाली सुनी, मौन रखी मन मांय॥
कहो यह है किन से छानी॥ ८॥

गर्भ का दुख तैंने पाया, अधोसिर रहा तू लटकाया।
सवा नौ मास स्थान ठाया, मूत्र मल में तन लिपटाया॥
जनम समय तू रुक गया, माता किया विलाप।
काट काट बाहर किया, पूर्व जन्म के पाप॥
बात यह तैंने भी जानी॥ ६॥

कभी पाया सुर अवतारा, हुआ तू मृत्य करनहारा।
कंदर्पी किंकर पद धारा, सूत्र में देख हाल सारा॥
किल्विषी हुआ देवता, नहीं ऊँच अस्थान।
उत्तम सुर भी दास, नहीं कहां तक करूं बयान॥
छोड़ दे सब खींचातानी॥ १०॥

कथन यह शास्त्र से करना, चतुर सुन हिये मनन करना।
चाहो भव सागर से तिरना, दया और सत्य का लो शरना॥
मेरे गुरु नन्दलालजी, शिक्षा दी मुझ सार।
चतुरमास खलधर किया, आये जयपुर चार॥
बनो तुम मित्र! अमयदानी॥ ११॥

---

१ सुआ।

[१०६]

सम्पत्ति का गर्व

(तर्जः—बहर तबील)

सम्पति का साहिब तू बनकर क्यों मगरुरी लाता है।
तेरे सरीखे हुवे बहुत उनका भी पता नहीं पाता है॥
सम्भूम नामा चक्रवर्त थो क्या उनके रिद्धी थोड़ी थी।
चौरासी लाख हाथी रथ घोड़ा पैदल छिनवें कोड़ी थी।
चौसठ सहस्र अंतेवर जिनके एक सरीखी जोड़ी थी।
नौ निधान[1] चौदह[2] रतन तो पिण तृष्णा नहीं थोड़ी थी।
मरके गया नरक में सीधा शास्तर में दर्शाता है॥ १॥
कंस नृप कैसा था मानी जोर जुल्म जिन कीना था।
उग्रसेन निज पिता जिन्हों को पकड़ पींजरे दीना था।
लोक लाज तक के मथुरा का राज जिन्होंने कीना था।
तीन खंड के नाथ हरिजी कहोजी क्या दंड दीना था।
जैनी और वैष्णव सब जानें क्यों नहीं समझ में लाता है॥ २॥
बड़े बड़े होगये भूपति छत्र चँवर शिर होते थे।
घो कंचन के महल आप फूलों की सेज पर सोते थे।
रत्न जड़ित जल की झारी से दिन ऊंगा मुँह धोते थे।
आठ बीस दो दो[3] विध के तन मन से नाटक जोते थे।
वे नर मर मिट्टी में मिल गये तेरा कौन सहाता है॥ ३॥
मान मान अभिमानी प्राणी क्यों इतनी कहलाता है।
घड़ी घड़ी अनमोल वक्त तू नाहक मुफ्त गंवाता है।
नेम धर्म सुकृत करनी का क्यों नहीं लाभ कमाता है।
देख हवा इस कलु काल की तुझे फिक्र नहीं आता है।
महा मुनि नन्दलाल तणॉ शिष्य जोड़ आगरे गाता है॥ ४॥

---

१ निधियाँ—नैसर्पनिधि, पंडूकनिधि, पिंगलनिधि, सर्वरत्ननिधि, महापद्मनिधि, कालनिधि, महाकालनिधि, शंखनिधि। २ चौदहरत्न—चक्ररत्न, छत्ररत्न, चर्मरत्न, दण्डरत्न, असिरत्न, मणिरत्न, काकिणीरत्न, सेनापतिरत्न, गृहपतिरत्न, बढ़ईरत्न, पुरोहितरत्न, स्त्रीरत्न, अश्वरत्न, हस्तिरत्न। ३ बत्तीस।

[११०]

काल महाबलवान्

(तर्ज:—पूर्ववत्)

काल महा बलवान जगत में इस से किन का नाता है।
ना मालूम होशियार रहो किस रोज अचानक आता है॥
जो वकील बैरिस्टर थे वो ऐसी अक्ल घुमाते थे।
बात में बात निकाल दफा कानून किताब बताते थे।
सच्चे को झूठा जित करके झूठे को बरी कराते थे।
करते सवाल जवाब जहाँ पर हाकिम को नाच नचाते थे।
उनकी एक चली नहीं नर क्यों औरों पर अकड़ाता है॥ १॥
अरबपति कई खरबपति कई क्रोड़पति लखपतियन को।
देख देख सम्पत निज घर की खुश करते अपने मन को।
सुवर्ण की सेजां पर सोते खाते हवा जाकर वन की।
अच्छी तरह हिफाजत करते कभी न दुःख देते तन को।
वे भी गये ना रहे यहां पर तू किस पर घुमराता[1] है॥ २॥
अर्जुन भीम रावण से राजा बड़े मर्द कहलाते थे।
बैठे तख्त पर करते न्याय एक छत्तर राज चलाते थे।
नहीं मरेंगे रहेंगे यहां पर शीशे की नींव लगाते थे।
नहीं था पार जिनके बल का पैरों से जमीन धुजाते[2] थे।
वो भी होगये निर्बल इससे तू किस पर जोर जमाता है॥ ३॥
वैद्य हकीम वैद्यक के वेत्ता जो धन्वन्तरि खुद कहलाते थे।
नब्ज देख फिर सोच समय कर वैसी दवा खिलाते थे।
उनको भी काल सम्भाल लिया औरों का रोग मिटाते थे।
शुभ काम बना फिर याद करोगे ऋषि मुनि फरमाते थे।
महा मुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य ज्ञान का बिगुल सुनाता है॥ ४॥

---

१ इतराता है। २ कंपाते।

[१११]

पैसे से अनर्थ

(तर्जः—पूर्ववत्)

पैसे की परवा सब रखते ये जग मोहन गारा है।
इस को त्याग वैराग्य लहे सो धन जग में अणगारा है।
क्या बालक क्या बुड्ढा देखो सब का मन ललचाता है।
है अनरथ का मूल साफ वीतराग देव फरमाता है।
पुत्र पिता और पति नार के वैर विरोध कराता है।
कहो जी किन के साथ गया हम सुनते कौन सुनाता है।
तू कहता धन मेरा मेरा इसका क्या इतबारा है॥ १॥
क्या कहूं इस धन के कारण काज अकारज करते हैं।
निर्भय होकर आप फिरे परभव से जरा नहीं डरते हैं॥
गिन गिन कर बहु माया जोड़े जोड़ जमीं में धरते हैं।
भूख प्यास सी उष्ण सही मूरख पच पच के मरते हैं॥
तृष्णा रूपी जाल जगत में इनका खूब पसारा है॥ २॥
महाशतकजी श्रावक जिनकी नाम रेवन्ती नारी है।
होके लोभ में अंध एक दिन बारा शोकां[1] मारी है॥
निज पति को फिर छलने आई सूत्र में बात जहारी[2] है।
ऐसा किया अन्याय कहो यह धन किनको सुखकारी है॥ ३॥
मर कर गई नरक में सीधी जिनका नहीं निस्तारा है।
गजसुखमाल एवंता[3] मुनिवर क्या वैराग्य रमाया है।
बचपन में संजम लेकर उस भव में मोक्ष सिधाया है॥
जम्बू कुंवरजी महा वैरागी निज आतम समझाया है।
त्याग दिया धन माल आप उत्तम संजम पद पाया है।
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि तो कहते धन्न असारा है॥ ४॥

---

१ सौतों को। २ जाहिर। ३ एवंताकुमार भगवान् महावीरकालीन एक बाल साधु।

[११२]

फोकट श्रावक

(तर्जः—पूर्ववत्)

लगन पाप में लगी रहे नित सुकृत को बिसराते हैं।
कैसे तिरना होय कहो एक धरमी नाम धराते हैं।
पूरब पुण्य से सम्पति पाके गर्व बीच गलताने हैं।
इस पृथ्वी पर एक मैं ही हूँ ऐसी दिल में जाने है।
कहाँ से आया किधर जायगा तुमको कौन पिछाने है।
ले ले लाभ नर भव का अब क्यों अपनी अपनी ताने है।
बुरी लगे चाहे भली लगे अजी हम तो साफ सुनाते हैं॥ १॥
तुरत देख धनवंत उसे तो पूरण प्रीत लगाते हैं।
नित्य नये पकवान बनाकर न्यौत न्यौत जिमाते हैं।
जो निर्धन गरीब उसे तो कोई नहीं बतलाते हैं।
पूछ-ताछ तो दूर रही पण उलटा उसे सताते हैं।
गुणवानों के औगुण बोले निन्दा में दिन जाते हैं।
कमती बढ़ती तोले मापे अपनी पैठ जमाते हैं।
होके लोभ में अंध कई घड़ियों की घड़ी उड़ाते हैं।
ले के घुंस गवाह बन जाते झूंठी सौगन्द खाते हैं।
कहाँ रही परतीत कहो अब लुच्चे धूम मचाते हैं।
इधर उधर करके लपराई वैर विरोध कराते हैं॥ ३॥
हिन्दू हो या मुसलमान हो जो यह कर्म कमाते हैं।
दिल चाहे सो करे यहां वो आगे क्या फल पाते हैं।
इन कर्मों से बचे वही नर मालिक से मिल जाते हैं।
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि तो साफ साफ फरमाते हैं।
माधोपुर में प्यारे विचरते जोड़ करी यों गाते हैं॥ ४॥

---

१ मौत करते हैं।

[११३]

काया की रेल

(तर्ज —गुरु निर्ग्रन्थ नहीं जोयो जीव तेने २)

काया की रेल हमारी रे लोको, काया की रेल हमारी रे।
सीधो सड़क शुद्ध संजम पाले, जकशन मोक्ष मुभारी रे॥
धोखा मेट दिया दुर्गति का, उपट राह हस टारी रे॥ १॥
तन इंजन मन पेच दबाते, जाते इच्छा अनुसारी रे।
सत्य उपदेश की सीटी देते, फिरते मुल्क मुभारी रे॥ २॥
तप अगनी और कर्म कोयला, डाल के करते क्षारी रे।
माही तार का लग रया खटका, प्रतिबन्ध सिगल डारी रे॥ ३॥
समदृष्टी दुर्बीन लगा कर करते करुणा सुखारी रे
दानादिक अच्छे डिब्बे की, करते कोईयक सवारी रे॥ ४॥
नेम का टिकट दिया मुझ सत्गुरु, बाबूजी पर उपकारी रे।
स्टेशन सुरलोक ठहर फिर, लेंगे अचलपुर धारी रे॥ ५॥
कहे मुनि नन्दलाल तणां शिष्य, सुन लेना नरनारी रे।
उगणीसे तेहत्तर अलवर माही, जोड कीनी सइयारी रे॥ ६॥

---

[११४]

धर्म की नाव

(तर्ज—द्रोण)

तुम सुनो मोक्ष का पथ सत फरमावे।
महाराज जीव की जतना करनाजी।
ये हीज धर्म की नाव हुवे भव सागर तिरनाजी
भव जीव जगत में आपना जीना चाहे॥
महाराज किसी को नहीं सतानाजी
हुवे जीवों का उपकार यही कुछ राह बतानाजी।
यह झूठ पाप का मूल कभी मत बोलो

१ विपुल।

महाराज भूल जिसने नहीं छोड़ाजी।
वाको होत बहुत सताप पड़े परभव में फोड़ाजी॥
इम जान सांच नित खूब तोल कर बोलो।
महाराज, बोल फिर नहीं बदलनाजी॥ १॥
यह चोरी करना तीजा पाप सुन प्यारे।
महाराज, किसी की वस्तु उठानाजी॥
अपने ही कर्म से आप क्यों परतीत घटानाजी॥
ये चोर चोर यों सब ही दुनिया बोलो,।
महाराज, हुवे जिनसे भहवाहाजी।
गिनो परधन धूल समान रखो अपना दिल गाढ़ाजी॥
आज्ञा से जो कोई चीज देवे तो लेना,
महाराज, ऐसी वृत्ति दिल धरनाजी॥ २॥
जो काम अंध पर नार तके मतिहीना,।
महाराज, कहो कैसे रहे आबीजी॥
रावण पद्मोत्तर देख जिन्हों की हुई खराबीजी॥
यह रोग शोग का भवन झूंठ मत जानो,।
महाराज हुवे तन धन की हानिजी।
इम जान तजो कुकर्म यह शास्तर की वानीजी॥
तुम शील शिरोमणि जग उत्तम व्रतधारी।
महाराज विपति सब दुःख का हरनाजी॥ ३॥
यह पाप पांचमा अति लोभ का करना।
महाराज लालसा लग रही धन की जी॥
अब धारधार सन्तोष ममत तुम मेटो मनकी जी।
यह पांचों अवगुण तजो पांच गुणधारो॥
महाराज जीव जिन से सुख पावेजी।
हुवे कर्मों से निर्लेप सीधा मुक्ति पद पावेजी॥
श्री नन्दलालजी मुनि तणो शिष्य गावे।
महाराज मुझे सत गुरु का शरणाजी॥ ४॥

[११५]

हितोपदेश

(तर्ज.—द्रोण)

दुनिया के बीच मनुष्य जन्म में आया।
महाराज किया कुछ पर उपकारा जी ॥
फिर प्रभु नाम भज लिया तो उसका सफल जमारा जी।
ये मात तात बन्धव सुत दारा भगनी ॥
महाराज तू जाने यह है सब मेरा जी।
पण मात चाहे तात मान है आखिर ना कोई तेरा जी।
ज्यों सराय में ले आय मुसाफिर वासा ॥
महाराज भोर भये सब उठ जावे जी।
या आपने दिल में समझ नाहक क्यों ही कर्म कमावे जी।
जो परभव में निज आतम का सुख चाहे।
महाराज रहे पाप से टारा जी ॥ १ ॥
धन के कारण दिन रात पचे नर भोला।
महाराज क्षुधयादि कष्ट उठावेजी ॥
करे महा आरम्भ परधूर नहीं मन में पछतावे जी।
हीरा पन्ना मणि माणक लाल पिरोजा ॥
महाराज बहुत नीलम की दरिया जी।
सोना चांदी कुण गिने खजाना पूरण भरिया जी ॥
विद्वान पुरुष यह दिल में यों समझेगा।
महाराज नहीं यह धन हमारा जी ॥ २ ॥
इस तन को अपना अपना कर माने।
महाराज कभी दु:ख ना उपजावेजी ॥
जीमे मेवा मिष्टान खूब पोशाख बनावे जी।
कर लाख यतन पण यह तो नहीं रहने की ॥
महाराज मनोहर काया तेरी जी।
मर गये बाद हो जायगा आखिर खाक की ढेरीजी।
जिसने अखूट सुकृत का नाम कमाया ॥
महाराज प्रभु की जाप असारा जी ॥ ३ ॥

इस पृथ्वी पर हो गये राजन पतिराजा।
महाराज तेज था जिनका भारी जी॥
पण धर्म बिना वो चले गये यों ही हाथ पसारी जी।
यों समझ एक दिन तू भी चला जावेगा॥
महाराज होके निर्भय - नहीं सोना जी।
जो वक्त लाभ की बीत गई तो फिर क्या होना जी॥
जो दया दान जप तप में खप कर लेवे।
महाराज जिस्से सुख मिले अपारा जी॥ ४॥
मुनिराज गुणों की खान प्रकट फरमावे।
महाराज पुण्य का फल है मीठा जी॥
फिर गई वक्त नहीं आवे घोव कर्मों का कीटा जी।
अब एक बात और कहूँ सजन सुन लेना।
महाराज कुटिल का संग न करना जी॥
सौ बातों की एक बात लेवो सत गुरु का शरणा जी।
श्री नन्दलालजी मुनि तणां शिष्य गावे॥
महाराज तुरत होगा निस्तारा जी॥ ५॥

[११६]

विद्यार्थी को माता का कहना

(तर्ज.—पनजी मुंडे बोल)

म्हाला मारी मान, मान मान मुगति का लोभी, कोई छूट लागो रे॥
संजम जाया[1] अति दोहिलो[2] सूर वीर कोई लेसी रे।
कोमल तन बावीस परीसा, तू किम सहसी रे॥ १॥
सन्मुख जोग रही तुझ अबला, इनको छेम न दीजे रे।
सुत थई फिर विषय भोग तज संजम लीजे रे॥ २॥
संच्यो धन बडेरा घर में ले ले हाथ - को लावो रे।
ऊपर तक नहीं निठे[3] रीतिसर खर्चो खावे रे॥ ३॥

१ जात-पुत्र। २ दुर्लभ-कठिन। ३ समाप्त हो।

कुल वृद्धि कर मैं भी जितने, हो जावां परलोके रे।
जोबन वय ढल गया बाद, थाने कुण रोके रे ॥ ४ ॥
महा मुनि नन्दलाल तणा शिष्य शङ्कर आगरे गावे रे।
चढ़्यो रंग वैराग्य कहो फिर किम ललचावे रे ॥ ५ ॥

---

[११७]

माता का दीक्षार्थी को संजम की कठिनता दिखाना

(तर्ज — राजा भरथरी रे राजा भरथरी)

म्हाला लालजी रे म्हाला लालजी ॥
लालजी साधपणो अति दोहिलो, नहीं सोहिलो, पहिले जोहिलो[1]।
थाने कहूँ समझाय, मानो मानो म्हारी वाय[2], हठ कीजिये नांय ॥१॥
लालजी यहाँ पलंग पर पोढना, सीरक[3] ओढनो, दिन्न चोढनो।
वहां जंगल मांय, जो भी तरुवर छाय, दुःख सह्यो नहीं जाय ॥२॥
लालजी घर घर भिक्षा जावणो, नहीं शरमावणो, मांगी लावणो।
लेणो शुद्ध आहार, दे या नहीं दे दातार, दूमण होणो नहीं लगार ॥३॥
लालजी संजम भार उठावणो, पार लगावणो, गम्म खावणो।
निर्वद्य बोलणो वैन, चालणो गुरुजी कैन, नहीं लोपणी ऐन ॥४॥
लालजी वैराग्य रंग छायो सही, माता कह रही, ललच्यो नहीं।
मेरे गुरु नन्दलालजी, षट काया प्रतिपाल, दीनो ज्ञान रसाल ॥५॥

---

[११८]

दीक्षार्थी को भगवान् के समर्पण करना

(तर्ज — पहाड़)

प्यारो लाल हमारो, भवसागर तारो, तारो दीन दयाल ॥
कोमल काया सरल स्वभावी, यह भागी गुण खान।
ऊमर पुष्प ज्यों दुर्लभ दर्शन, रत्नों का करड समान रे ॥१॥

---

१ देख लो। २ बात। ३ रजाई।

आल, सुणी वाणी प्रभु थारी, छायो रंग वैराग।
विषय भोग रोग सम जाणी, ललच्यो नहीं महाभाग रे ॥२॥
मात पिता ने अति सुख देसी, ये हनो पूर्ण विचार।
जायो सो आज हुई निर्मोही, शिव मग लीनो धार रे ॥३॥
यह मुझ म्हाको आप भरोसे, छोड़े जग जंजाल।
शीत उष्ण वर्षा ऋतु मांही, कर जो सार सम्भाल रे ॥४॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनीश्वर, तारण तिरन जहाज।
सुगुरु चरण की शरण लिया से, सरमी वांछित काज रे ॥५॥

२

चरितावली

[१]

सीताजी से मिलने हनुमान का आगमन

सीताजी से मिलन (तर्ज:—भजन) *पवन सुत आयो*

सीताजी की सुध भई तब राम अति सुख पायो ।
तब राजेश्वर कर मंमूंदो हनुमंत कुंवर ने लंक पठायो ॥१॥
देवकुंवर ज्यों सन्मुख ऊभो घूंघट में दरसायो ।
सीता पूछे कुण तूं बीरा ! तब हनुमंत सब भेद सुनायो ॥२॥
पिया हाथ की देख मूंदरी नैना नीर भरायो ।
राम मिलन की है अब त्यारी हनुमंत कुंवर यों गाढ बंधायो ॥३॥
सीता को दुःख देख हनुमंत बंदर रूप बनायो ।
लंकापति को बाग विनारयो[१] देख रही सीता बहु समझायो ॥४॥
रावण राणो रोष भराणो बन्दर पकड़ मंगायो ।
नमकहरामी लाज न आई रावण, करड़ो बोल सुनायो ॥५॥
रोष चढ्यो हनुमंत तुरत ही बन्धन तोड़ बगायो ।
लंकपति को मुकुट पाड़ने उछल गगन में वेग सिधायो ॥६॥
सोध करी हनुमंत आयो तब सब को मन हुलसायो ।
कहे मुनि नन्दलाल तणों शिष्य जोड़ करी जग में जश पायो ॥७॥

[२]

रावण को मंदोदरी की शिक्षा

(तर्ज:—सीता है सतवंती नार सदा गुण गावणा)

राजा रावण से इम बोले नार मन्दोदरी रे ।
सुन सुन लंकापति सिरदार अनीति क्यों करी रे ॥
थारे इन्द्रियणा सम राणयाँ कई हजार छे रे, तो पण जरा मगर नहीं आई ।

१ विदारण किया ।

छल कर लायो नार पराई, जग में बाज्यो चोर अन्याई।
ऐसी, कठिन सुनाई पलती पति से ना डरी रे॥ २॥
मैं तो खुद जाकर समझाई नाटक मांडने रे, सीता रही शील में राची।
वह, मर. मिटे हटे नहीं पाछी, उनको अच्छी तरह लो जाँची।
कहूँ छू सॉंचो जिनकी चीज है उनको दो परी रे॥ २॥
† स्याणी सुंदर सुन परनार लाय किम आपसूं रे।
उसका चित खुश करके, निज नारी कर थापसूं रे।
माने सीख त्रिया की जो नर मूढ अजान छे रे, सीता पाछी उसे दिलावे।
तो कूं जरा शरम नहीं आवे, मोकूं ऐसी राह बतावे।
सबला आगे कोई न आवे, पुण्य प्रताप सू रे॥ ३॥
*चंचल हनुमान श्रीराम लक्ष्मण महाबली रे, दल लेले कर जब वो चढ़सी।
नभचर उछल उछल कर पड़सी, कहो तब कौन सामने अड़सी।
सुवरण लंका मिलसी नास, आज कहूँ छूं खरी रे॥ ४॥
† फिरता डोले जंगलमांय युगल वनवासिया रे, बिच में सागर भरयो अपारे।
यहां तक कब वो आवे विचारे, शूरे सुत और भ्रात हमारे।
पड़सी उनके लारे, थारे वेग सिवापसूं रे॥ ५॥
थारे सगा विभीषण कुम्भकरण दोई भ्रात छे रे, थारा इन्द्र मेघ सुत शूर।
यह सब रहेंगे अदल कर दूर, दिल में सोचो नाथ जरूर।
मेलो दूर गरूर, नहीं तो मरजी रावरी रे॥ ६॥
हेत की शिक्षा देवे कोई सत्य कर मानिए रे, सित्तर ऊपर नव के साल।
मेरे गुरु मुनि नन्दलाल, मोकूं दीनो हुकम दयाल।
कीनो रामपुरे चौमास, जोड़ जुगती करी रे॥ ७॥

---

[३]

रावण को समझाना

(तर्ज:—ख्याल)

कहे यों रावण को समझाय, विभीषण कुम्भकरण दोई भाय॥
राजन पति राजा बाजो थाने ई बातां नहीं छाजे।
परनारी परधन हरता वह चोर अन्यायी वाजे॥ १॥

† रावण का कथन। † दूणा। * मन्दोदरी का कथन। † रावण का कथन।

राम लक्ष्मण दशरथ सुत को होसी यहां पर आवो।
लंका को कर देगा नाश जद पड़सी तुम पछतावो ॥ २ ॥
सीता पीछी सौंप दोस थे मानो बात हमारी।
कठिन शब्द मैं आज कहाँ छाँ लीजो नाथ ! विचारी ॥ ३ ॥
मैं हूँ अर्द्ध भरत को स्वामी कौन अड़े मुझ सामे।
तुम कायर सब दूर रहो मेरा पुण्य आवसी कामे ॥ ४ ॥
महा हठीले हठ नहीं छोड़ी गति जैसी मति आवे।
करी जोड़ अजमेर मुनि नन्दलाल तणों शिष्य गावे ॥ ५ ॥

[४]

सीता की रावण को फटकार

(तर्जः—महाव)

सीताजी बोली सुनहु लंकपति, मैं तो वंछूं नहीं परपति ॥
जन्म देई जननी सुत पाले, प्रेम करे चित चाय।
ते पण निज मर्याद तजी मे मारे जहर पिलाय ॥ १ ॥
चन्द्र थकी खीरा झरे रे सूर्य करे अन्धकार।
सिंह छाली सम होय कदापि शील न खंडू लगार[1] ॥ २ ॥
आमन जामन कल्प तरु के कण्टक कद दे कोय।
अरणी घिसे अमृत चाहे निकसे कमल उपल पै होय ॥ ३ ॥
साधु थई सत्य मारग छोड़े समुन्दर कार[2] लोपाय।
सूरो थई रण खेत थी भागे नृपति मूके न्याय ॥ ४ ॥
इतनी बांता होय तो होज्यो शील से चूकूं नाय।
मुनि नन्दलाल तणों शिष्य कहे छे रावण मुख विलखाय ॥ ५ ॥

१ तनिक भी २ मर्यादा।

[५]

राजीमती का व्याह

(तर्जः—संग चलूं जी पिया) -

ऐसो जादों पती रे ऐसो जादो पती, परणया पधारे राजमती ।
उग्रसेन राजा की पुत्री ऐसी, सूत्र में कह्यो आभा बीज जिसी ॥ १ ॥
तेहने ब्याहन जावे नेमकुंवार, बहु विध साथे कृष्ण मुरार ॥ २ ॥
शक्र इन्द्र ब्राह्मण रूपधरी, सन्मुख आई इम अरज करी ॥ ३ ॥
लगन में दीसे छे कोई अदूर, इण अवसर नहीं परणे जरूर ॥ ४ ॥
कृष्ण कहे रे ब्राह्मण! आजो इहां, पीलाचॉवल थांने कौन दिया ॥ ५ ॥
ब्राह्मण दूर हुवो तिण वार, तोरण पर आवे नेमकुमार ॥ ६ ॥
पशुवां को बाट में वाड़ो भरयो, करुना करीने प्रभु पाछो फिरयो ॥ ७ ॥
संजम लियो त्यागी ऋद्धि छती, कर्म हणीने पाया सिद्ध गती ॥ ८ ॥
मांडलगढ़ में मुनि नन्दलाल तरय शिष्य जोड़ बनाई रसाल ॥ ९ ॥

[६]

ब्राह्मण रूप से शकेन्द्र का आगमन

(तर्जः—नेमजी ऊभा रहो)

यादव ऊभा रहो ।
शक इन्द्र सुरलोक में हो, कांई बैठा सभा के मांही आप हो ॥ १ ।
ज्ञान से जाना नेम की हो कांई खूब बनी है बरात हो ॥ २ ॥
आप बुड्ढा ब्राह्मण तणो हो कांई रूप रच्यो तत्काल हो ॥ ३ ॥
डगडग धूजे तेनी ग्रीवा हो कांई धूजे तेनो सकल शरीर हो ॥ ४ ॥
कर में लकड़ी लपड़ी हो कांई पाग में धरयो पंचांग हो ॥ ५ ॥
सन्मुख आय बरात में हो कांई हरिजी से करे है सवाल हो ॥ ६ ॥
रहेसी कुंवारा नेमजी हो कांई कभी नहीं होवे याको व्याह हो ॥ ७ ॥
दीनी दक्षिणा तेहने हो कांई विदा कर दीनो तत्काल हो ॥ ८ ॥
चलतो ब्राह्मण इम कहे हो कांई जद जानूं लावो परनाय हो ॥ ९ ॥
महामुनि नन्दलालजी हो कांई तरय शिष्य नेमजी को दास हो ॥१०॥

[७]

नेमजी की बरात

(तर्जः—आज रंग बरसे रे)

नेम बनड़ा के रे २ संग बरात चढ़ी बड़ी धूम धड़ाके रे।
कृष्ण और बलभद्र साथ दोई भ्रात बरात के मांई रे॥
समुद्रविजय राजादिक संग कर कर उलुसाई रे॥ १॥
यादव वंशी राजकुंवर की जोड़ जगामग चमके रे।
मणि सुवर्ण का भूषण अंग दामिनि ज्यों दमके रे॥ २॥
पचरंगी पोशाकां कर कर जान्या[1] रंग्या चंग्या रे।
गज रथ घोड़ा बैठ पालखी चले उमंग्या रे॥ ३॥
गज इन्दर पर नेमकुंवरजी सुर इन्दर सम दरसे रे।
सांवरिया की देख देख छवि सुर नर हरसे रे॥ ४॥
जीव दया के काज ब्याह तज तुरत नेमजी फिरिया रे।
संजम ले फिर कर्म काट मुगति सुख वरिया रे॥ ५॥
उगणीसे छीयंतर तेरस भादव बुध के मांई रे।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य अलवर जोड़ बनाई रे॥ ६॥

[८]

महारानी देवकी का संशयनिवारण

(तर्जः—मेवाड़ा जी हुकुम कराओ तो हाजर ऊभी) .

विनय करी ने पूछे देवकी, कांई संशय मेटन काज मुनिवरजी।
होजी आज्ञा लेई प्रभु नेम की, कांई भ्राता छहूँ अनगार॥
तीन सिंघाड़े आया गोचरी, कांई द्वारिका नगरी मुझार।
होजी प्रथम सिंघाड़ो फिरतों थकों, कांई देवकी के आयो आवास॥१॥
देवकी सन्मुख जाय ने कांई बांद्या चित्त हुलास, मुनिवरजी॥ २॥

---

1 बराती।

होजी मोदक बहराया निज हाथ से, कांई वे तो फिर चाल्या अनगार।
दूजो भी सिंघाडो इम जाणजो, कांई तीजो भी आयो तिणवार ॥३॥
होजी प्रतिलाभी ने पूछे देवकी, कांई धन धन तुम अणगार।
तुम मुझ पुण्य उदय करी, कांई फिर फिर आया तीजी वार ॥४॥
होजी मुनिवर कहे सुण देवकी, कांई मैं छां सगा छ हूं भाय।
नाग सेठ का सुत हमें, कांई सुलसा म्हांकी[1] माय ॥५॥
होजी बत्तीस बत्तीस नारया तजी, कांई परिग्रह से तज दियो प्रेम।
संजम लियो तिण दिवस थी, कांई छट[2] छट कीनो नेम ॥६॥
होजी थारे घर आया गोचरी, कांई तीन सिंघाड़े आज।
वे का वे ही मत जाण जे, कांई इम कही गया मुनिराज ॥७॥
होजी देवकी मन प्रसन्न हुई, धन धन मात अनूप।
रत्न सरीखा निज पुत्र ने, कांई दिया जिनवर जी ने सूंप ॥८॥
होजी संवत उगणीसे छियोंतरे, कांई अलवर शहर चौमास।
महा मुनि नन्दलालजी कांई तस्य शिष्य कहत हुलास ॥९॥

[२]

माता देवकी का चिन्तन

(तर्ज:—धीरा चालो ब्रज का वासी)

धोलो धोलो माजी मन खोली, सब बात हिया में तोली रे।
माता देवकी जिनवर भेटी, सब मन की भ्रमणा मेटी।
घर आय सिंहासन बैठी रे ॥ १ ॥
तब हरि श्रृङ्गार बनाया, माता का दर्शन पाया।
चरणों में शीष नमाया रे ॥ २ ॥
कर जोड़ी ने गिरधर भाखे, माजी किम आंसू नाखे[3]।
कहूं सफल कही दिल थांके रे ॥ ३ ॥
माजी सब वृत्तान्त सुनाया, तब वचन दियो हरि राया।
सब मन का सोच मिटाया रे ॥ ४ ॥

१ हमारी माता। २ बेले बेले तपस्या का नियम। ३ डालती हो।

पौषधशाला में आई, सुर समरयो ध्यान लगाई,
थारो होसी म्हालो लघु भाई रे ॥ ५ ॥
दिन ऊंगा पौषध पारा, माजी का काम सुधारा।
हुआ गजसुखमाल कुमारा रे ॥ ६ ॥
नन्दलाल मुनि गुणधारी, तस्य शिष्य कहे हितकारी।
नित पुण्य से जय जय कारी रे ॥ ७ ॥

---

[१०]

गजसुखमाल मुनि की क्षमा

(तर्ज —मेवाड़ाजी हुकम करो तो हाजर ऊभी

साधपणो शुद्ध आदरयो, कांई धन धन गजसुखमाल, मुनिवरजी ॥
होजी नेम जिनन्द भगवान् की, कांई आज्ञा लेई ऋषिराय, मुनिवरजी।
तरु हेठे जाई शमशान में, कांई ऊभा ध्यान लगाय, मुनिवरजी ॥ १ ॥
होजी सोमिल ब्राह्मण तिण समे, कांई जातो नगरी मुझार, मुनिवरजी।
तिण वाटे थई नीकल्यो, कांई ओलखिया अनगार, मुनिवरजी ॥ २ ॥
होजी लघु भाई गोविन्दना, म्हारी बेटी ने परणायो कांई दोष, मुनिवरजी।
बिन अपराधे परहरी, कांई अधिक भरानो रोष, मुनिवरजी ॥ ३ ॥
होजी आली माटी लायो सर तणी, कांई बांधी मुनि के सिरपाल, मुनिवरजी।
दुष्ट दया आनी नहीं, कांई सिर धरया खैर अंगार, मुनिवरजी ॥ ४ ॥
होजी मुनिवर मन्दर गिरि समो, कांई नहीं कियो क्रोध लगार, मुनिवरजी।
ध्यान थकी चूकया नहीं कांई चढ़ी परणाम की धार, मुनिवरजी ॥ ५ ॥
होजी चार कर्म दूरा हुआ, कांई पाया केवल ज्ञान, मुनिवरजी।
आठों ही कर्म खपाय ने, कांई पहुँचा शिवपुर स्थान, मुनिवरजी ॥ ६ ॥
होजी सहवा, मुनि का गुण गावनां, कांई पावे सुख भरपूर, मुनिवरजी।
'खूबचन्द' कहे तस नामथी, कांई कारज सिद्ध जरूर, मुनिवरजी ॥ ७ ॥

[११]

तारा रानी का नृपति को दृढ़ करना

(तर्ज —म्हारी मही मत लूटोजी मैं तू गोकुल की काना गूजरी)

राजा मत घबराओजी, सत्य से निज सम्पति निश्चय पाओगे ॥
काशी के बाजार बीच में बेची तारा रानी।
जाती देख हरिश्चन्द्र नृप के नैना बह रयो पानीजी ॥ १ ॥
रानी बोली सुन महाराजा क्यों इतना घबरावे।
सुख दुख का जोड़ा जग माही शास्तर में सब गावेजी ॥ २ ॥
मोती महल-सुवर्ण की सेजां, ड्योढीवान रखवाला।
दासी दास नौकर और चाकर, हुकम उठानेवालाजी ॥ ३ ॥
गज घोड़ा रथ पालकी सरे, पलटन फौज रसाल।
राज तख्त धन का भंडार, जय विजय बधाने वालाजी ॥ ४ ॥
सिर का मुकुट कान का कुण्डल, गल मोत्यां की माला।
कर-भूषण कटि सुत सुवरन का, कम्मल सर्जे दुशालाजी ॥ ५ ॥
राम लक्ष्मण दोनों भाई सीता जिनके साथ।
दुःख सहा वन वास में सरे, देखो द्वारिका नाथजी ॥ ६ ॥
सत्य के कारण राज्य तज्यो, तुम हो शूरा रजपूत।
निज सम्पति के नाथ बनोगे, रहो जरा मजबूतजी ॥ ७ ॥
वनिता होय विनीत पति को दे पूरण विश्वास।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य कहे मैं गुरु-चरण को दासजी ॥ ८ ॥

[१२]

भिक्षा के लिए आमंत्रण

(तर्ज —भैरु आओ क्यूं नी कांई गाडा होय रया)

जी ओ गुरु आओ क्यों नी कई गाडा होय रया ॥
मैं तो नित की भांवा थारी भावना, मैं तो नित की नाह[१] थारी वाट ॥१॥
म्हारे कमीय नहीं किण बात री, म्हारे लग रया पुण्य का ठाठ ॥२॥

१ निहारू —देखती हूं।

म्हारे दूध दही घृत मोकला, लीजे गोरस गुड़ घणी खाँड ॥३॥
म्हारे चावल दाल ने खिचड़ी, भरी मालपूआ तणी छाब ॥४॥
म्हारे खाजा पूड़ी घणा खीचीया, तरिया पापड़ लेवो तड़यार ॥५॥
म्हारे बड़ेबड़ा ने कचोरियाँ, नार फीणी ने घेवर मार ॥६॥
म्हारे घणा पेठा ने पकौड़ियाँ, लुच्चयां पेड़ा अने मेव दाल ॥७॥
नन्दलाल मुनि तणां शिष्य कहे, इम कर रया जन मनवार ॥८॥

[१३]
तप में शूरा

(तर्जः—पूर्ववत्)

शूरा हो तप मे झूंझिया।
ई तो सुन्दर का बाजा बज रया, ढाल चौपी का घुल रया ढोल ॥१॥
ई तो शूरा चढ्या संग्राम में, ई तो कायर रया छभा देख ॥२॥
जामे तपस्या का तीर चलाविया, सन्तोष का शेल सम्भाल ॥३॥
यह तो ढाल क्षम्या की पीठ पे, हुआ शुद्ध मन अश्व सवार ॥३॥
सच बचन का पाखर पेरिया, निर्लोभ की कर तलवार ॥५॥
जाने सेवा लीधी साथे सांमठी[१], दृढ़ दान शील तप भाव ॥६॥
जाने आठ करम वैरी जीतिया, लीनो मोक्ष को किल्लो खास ॥७॥
'खूब' मुनि कहे सांभलो, कुछ पराक्रम दीजे बताय ॥८॥

[१४]
जम्बू स्वामी के गुण

(तर्जः—पूज मुन्नालालजी नित ध्यावो रे)

वंदो नित जम्बू स्वामी सौभागी रे, हुआ जगत में परम वैरागी।
माता धारणी नन्दन जाया रे, पूर्व पुण्य से बहु ऋद्ध पाया रे।
इम सोला वर्ष में आया ॥ १ ॥

१ खूब। २ सत्ता हुआ। ३ बहुत।

तिण अवसर सुधर्मा स्वामी रे, पांचसें मुनि संग शिवगामी रे,।
आया विचरत अन्तर्यामी ॥ २ ॥
आया जम्बूजी वन्दन काजे रे, तिहाँ सुधर्म स्वामी विराजे रे।
सुन वाणी वैराग्य में छाजे ॥ ३ ॥
अट्ठ नारी एक दिन परणी रे, जांकी काया कंचन वरणी रे।
नहीं जोया सन्मुख जान वैतरणी ॥ ४ ॥
पांचसें सत्तावीस साथे रे, समझाया एकण राते रे।
लीनो संजम सहु परभाते ॥ ५ ॥
सुधर्म स्वामी जैसे गुरु भेट्या रे, सब फंद जगत का मेट्या रे।
करनी कर संसार समेट्या ॥ ६ ॥
सोलह वर्ष रहे घर मांही रे, फिर साधु हुये हुलसाई रे।
रहे छद्मस्त बीस वर्ष तांई ॥ ७ ॥
बहु गुण रतनों की खानो रे, ध्याता अहो निशि निर्मल ध्यानो रे।
पीछे पाया केवल ज्ञानो ॥ ८ ॥
चम्मालीस वर्ष केवल पाली रे, मुनि अष्ट कर्म ने बाली रे।
पहुँचा मोक्ष चहुँ गति टाली ॥९॥
कहे 'खूब' मुनि तस नामो रे, सहु सीझे वंछित कामो रे।
ऋद्धि सिद्धि नवे नन्द पायो ॥१०॥

---

[१५]

लोभ-त्याग

(तर्ज:—दगाबाज नहीं करना नहीं करना)

काम नहीं [1]आसी रे माया [2]रे तज लालच गज जिनराया।
ब्राह्मण कुल में जनम लियो, धन कपिल ऋषिराया।।
सुवर्ण लोभ तज राज सभा में, केवल पद पाया ॥ १ ॥
जिनरिख जिनपाल दोनों भाई, ले परदेश सिधाया।
बार ग्यारह लाभ कमाई, वापिस निज घर आया ॥ २ ॥

१-२ पांच सौ। ३ आत्मी।

द्वादशमी विरिया फिर चाले, लालच नहीं मिटाया।
मातपिता वरजा नहीं माना, तो जिनरिख प्राण गमाया ॥४॥
मातमी यह सायन ने पाल्यो, संभूम चक्री राया।
वारवार सुर मना करे पण लालच मॉय लुमाया ॥ ४ ॥
समुदर माही चल्या शीघ्र मे बैठ जहाज में राया।
डूबी जहाज सागर के मांही मातमी नरक सिघाया ॥ ५ ॥
निश दिन दौड़े बहु धन जोड़े धूप गिने नहीं छाया।
कर्म बाध कर नर्क सिधाया जहां छूटे जम राया ॥ ६ ॥
चार तीर्थ को शरणो लीधो, जग माही जश पाया।
महा मुनि नन्दलाल तणा शिष्य यह उपदेश सुनाया ॥ ७ ॥

[१६]

सत्य सुखदाई

(तर्ज.—रे पण्डित कीमो अर्थ विचारी)

मानव सांच सदा सुखदाई।
[1]जनक [2]सुता को रुपीया लेकर कीनी तुरत सगाई।
ब्याह किये बिन झूट पीटने सासरीये पहुँचाई रे ॥ १ ॥
उस कन्या को बिन अपराधे सरवर तट लटकाई।
सर्दी गर्मी सहन करे पण तन ढॉकन पट नाई रे ॥ २ ॥
बतलाया किन से नहीं बोले मौन में रहत सदाई।
हाकिम हुक्म से मार सहे जद सच सच देत सुनाई ॥ ३ ॥
रात दिवस कुछ खाय न पीवे सासरिया के मांही।
मुआ बाद पिता से मिलवा पाछी पीहर में आई रे ॥ ४ ॥
ते मरिख्या सत्यवादी होजो ने दिल में दृढता राखो।
क्रोध लोभ भय हांस बसे तुम भूट कभी मत भाखो रे ॥ ५ ॥
तीन दिवस की अवधि आर्या दीजो अर्थ बताई।
मुनि नन्दलाल तणो शिष्य कह छे रामपुरा के मांई रे ॥ ६ ॥
(उत्तर—ठठेर के यहां बनी हुई घडियाल)

---

१ पिता। २ लड़का।

[१७]

सतगुरु की संगति

(तर्जः—प्रथम् वास पूज्य नामक)

सतगुरु की संगति करले रे चेतन, पावे सुख सवाया रे।
कर्म हणी ने शिवपुर जासी, तू केम परदेशी राया रे ॥ १ ॥
नगरी सितम्बका तो राज करे छे, महा अधर्मी राया रे।
धर्म कर्म को मूल न जाणे, रहता लोही से हाथ भराया रे ॥ २ ॥
जीव शोधन[२] के काजे राजा, कई मनुष्य मराया रे।
घाल तराजू के मांही तोलतो, विण जरा नहीं घटाया रे ॥ ३ ॥
इण कारण से राय परदेशी, एक माने जीव काया रे।
चित्त प्रधान परीक्षा पुण्यवन्त, मुनिवर का जोग मिलाया रे ॥ ४ ॥
राजा प्रधान दोही रथ मांही बैठा घोड़ा बहुत दौड़ाया रे।
राजा अति घबराय गयो तब, तुरत बाग में आया रे ॥ ५ ॥
मुनिवर देखी ने राजा बोल्यो, ई जड़ मूढ़ कुण आया रे।
चितजी कहे यह तो जैन का साधु, जुदा माने जीव काया रे ॥ ६ ॥
चर्चा करन ने राय परदेशी, तुरत मुनि पै आया रे।
केशी श्रमण सा सतगुरु भेट्या, ते छिन मांही भरम मिटाया रे ॥ ७ ॥
जहर जोग से अनशन करने, ते सुर पदवी पाया रे।
विदेह क्षेत्र में मुक्त जावेगा, सूतर में फरमाया रे ॥ ८ ॥
साल पिचावन कियो चौमासो, श्रावक बहु हुलसाया रे।
मुनि नन्दलाल प्रसादे 'नूपचन्द' नीमच मांही गाया रे ॥ ९ ॥

[१८]

नारी-प्रेम

(तर्जः—तू सुन हमारी सजनी)

सुन चतुर सयाणा नारी को नेह निवारजे।
परदेशी राजा तणी सरे सूरीकंता नार।
एक दिन आमण आणतां मरे मन में कियो विचार।
पिउजी तो इण राज की सरे नहीं करे सार सम्भाल रे ॥ १ ॥

---

१ राजा प्रदेशी। २ खोजने।

इण विध कर विचारणा सरे दिन ऊगो तिणवार।
तत्क्षण वेग बुलावियो सरे सूरी कंत कुमार ॥
प्रक्षन पण पुनः भणी सरे बोले वचन विचार रे ॥ २ ॥
धर्म गेलियो तुम पिता सरे छोड़ दियो सब राज।
जहर शस्त्र प्रयोग से सरे पूरण कर दे काज ॥
महोत्सव कर 'मडाण से सरे देवूं तुम ने राज रे ॥ ३ ॥
पुत्र सुनी या वार्ता सरे थर थर कंपी काय।
बोल्यो अणबोल्यो रह्यो सरे आयो तिण दिश जाय ॥
पुत्र पिता ने कह देसी तो कीजे कौन उपाय रे ॥ ४ ॥
भोजन सरस बनावियो सरे मांही नाख्यो जहर।
नरपति नौत जिमावियो सरे दियो नशा ने घेर ॥
आतम ज्ञान लगावियो सरे जरा न आणी लहर रे ॥ ५ ॥
ततक्षण चढ्यो नरपति सरे आया पौषधशाला मांय।
अवसर आयो जाण ने सरे दियो सथारो ठाय ॥
सांचो जिण धर्म पालने सरे गयो स्वर्ग के माय रे ॥ ६ ॥
इस आणी ने नीकले सरे नारी नेह छिटकाय।
शुद्ध संजम आराधना सरे धन धन ते मुनिराय ॥
'खूब' मुनि कहते मुनिवर का नित नित प्रणमूं पाय रे ॥ ७ ॥

---

[१९]

भरत-वैराग्य

(तर्ज —आज रंग बरसे रे)

भरत[2] मन माही रे २ वैराग्य भाव में रहे सदा ही रे।
प्रथम जिनेश्वर समोसरण में प्रकट बात फरमाई रे ॥
भरत भूपति जासी मोक्ष इण हिज भव मांई रे ॥ १ ॥
विषय भोग आरंभ परिग्रह में रहे सदा उलझाई रे।
कैसे मोक्ष होगा एक नर यूं बात चलाई रे ॥ २ ॥

---

१ ठाट बाट। २ ऋषभदेव के पुत्र, चक्रवर्ती भरत।

भरत सुनी या बात तुरत ही लीनो उसे बुलाई रे।
पूर्ण कटोरी भर के तेल दियो हाथ के मांई रे॥ ३॥
बीच बजार होकर लाओ तुम रहीजो सग सिपाई रे।
एक बूंद भी गिरे तो दीजो शीश उड़ाई रे॥ ४॥
विविध भांति वस्तु हटियां पर दीनी खूब सजाई रे।
उस रस्ते होकर उस नर को सोप्यो लाई रे॥ ५॥
क्या क्या देखी चर्गी चीज आवत रस्ता के मांई रे।
फक्त कटोरा बीच ध्यान गयो न कांई रे॥ ६॥
यों मुझ मन वैराग बसे, नहीं आरम्भ परिग्रह मांई रे।
न्याय सहित उस मानव को दियो भर्म मिटाई रे॥ ७॥
उगणीसे पच्चास ऊपर छत्तीस साल के मांई रे।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य भलदर जोड़ बनाई रे॥ ८॥

[२०]

सती काली रानी

(तर्ज.— भजन विना कांई होली रे तेरो सूत्र)

कालीयो राणी सफल कियो अवतार।
ते तो पामी छे भवोदधि पार॥
कौणिक रायनी छोटी हो माता, श्रेणिक नृप की नार।
वीर जिनन्द की वाणी सुनी ने, लीनो संजम धार॥ १॥
चंदणवालाजी जैसी मिली हो गुराणी के निवर नमी चरणार।
विनय करीने भणी अंग इग्यारे,तेहनी निर्मल बुद्धि अपार॥२॥
[३]सुमत [४]गुपत शुद्ध संजम पालत, चढ़ी हो [५]प्रणाम की धार।
आज्ञा लेई ने, सती निज गुरुणी की, तपस्या मांडी है सार॥३॥
शरीर शक्ती जाणी सती ने, अराध्यो रत्नावली तप नो हार।
चार लड़ी सम्पूरण कीनो, तेनो आठ में अंग अधिकार॥४॥

---

१ बाजार-दुकान। २ अच्छी सुन्दर। ३ पाँच समितियाँ ४ तीन गुप्तियाँ। ५ परिणाम।

पांच वर्ष तिन मास ने दिन कम लागो इतनो काल।
धन्य भामासती तप आराध्यो नेमने वंदना छे वारम्वार ॥५॥
आठ कर्म कुल भस्म पाड्या धर्म क्रिया सब सार।
जनम जरा और मरण मिटायो पहुँची मोक्ष मुझार ॥६॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गायो शहर भिनाड़ा मुझार।
ऐसी सती का सुमरण सेती सुख वरत मंगलाचार ॥७॥

---

[२१]
सती अंजना
(तर्ज —मल्हार)

सीयल[1] सुध पालो मन वच काय, तासे विघन सहु टल जाय।
मोटी सती हुई अंजना रे पुत्र थयो वन माय।
निस दिन सुर सेवा करे काई सिंहनो रूप बनाय ॥ १ ॥
बिलबिल रोवे अंजना रे पूरब बात चितार।
म्हारा सब वैरी हुआ काई जिनवर को आधार ॥ २ ॥
वसंतमाला[2] इम बीनवे रे बाई कर सन्तोष।
कर्म कमाया आपणा कोई किणने दीजे दोष ॥ ३ ॥
इतने मामो आवियो रे तिण अटवी के माय।
बाई तू रोवे मती भर लीनी कंठ लगाय ॥ ४ ॥
बैठाई विमान में रे वसंतमाला पिण लार।
मामोजी घर आपणे काई ले चाल्यो तिण वार ॥ ५ ॥
बालक मोती झूमको रे देख्यो तिण विमान।
लेवन काजे उछल्यो काई हेठे पड़ियो आन ॥ ६ ॥
आल न आयो लाल के रे मात थई दिलगीर।
मामोजी लायो तोकने[4] काई मेटी मन की पीर ॥ ७ ॥
हनुमत पाटन वेग में रे लेय गयो निज स्थान।
मामाजी महोत्सव कियो काई नाम दियो हनुमान ॥ ८ ॥
महा मुनि नन्दलालजी रे ज्ञान तणा दातार।
सीयल तणा प्रसाद से काई वरते मंगलाचार ॥ ९ ॥

---

१ शुद्ध शील पालो । २ वसन्त माला-अंजना की सहचरी । ३ आंच न आई । ४ उठा कर ।

[२२]

सम्यक्त्वधारी श्रेणिक नृपति

(तर्जः—इण आऊखा टूटा ने सांधो को नहीं रे)

समकीत धारी महापति एहवो रे।
नगरी तो राजगृही नो वासियो रे, श्रेणिक नामा छे राय रे।
धर्म नो पूरण अनुरागी थयो रे,तिण दिनथी भेट्या मुनिराय रे ॥१॥
मन में तो भावे नित भावना रे, जो इहा प्रभु महर कराय रे।
तो हर्षधरी ने वांदू वीरने रे, सफल दीहाड़ो[१] मुझ थाय रे॥ २॥
राजगृही ने भीतर बाहरणे रे, पहड़ो[२] फेरायो महिपाल रे।
प्रभु पधारया मुझ मालुम करे रे, करसूं मैं तिण ने निहाल रे॥ ३॥
भगवंत विचरत आया तिण समे रे,लोक मिल खबर दी तत्काल रे।
जे जे बधाई आपी तेहने रे, कीना छे नृप निहाल रे॥ ४॥
सजी सवारी आयो वांदवा रे, जिहां विराजे जगनाथ रे।
श्रेणिक नृप राणी चेलना रे, प्रभुजी ने वांद्या जोड़ी हाथ रे॥ ५॥
सेवा तो कीनी निर्मल जोग सूं रे, वाणी सुन आयो निज गेह रे।
कर कर दलाल्या अति धर्मनी रे, गोत्र तीर्थङ्कर बांध्यो तेह रे॥ ६॥
पहला तीर्थङ्कर होसी भरत में रे, शास्तर में घणो अधिकार रे।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य इम कहे रे,जिनधर्म पाल्या जैजैकार रे॥

[२३]

सुदर्शन सेठ

(तर्जः—दयाल)

सुदर्शन श्रावक पूरण प्रिय धर्मी श्री महावीर नो।
राजगृही का बाग में सरे वीर विचरता आया॥
सुनी बात सुदर्शन श्रावक हृदय हर्ष भराया।
ले आज्ञा निज मात तात की तुरत वंदवा आया रे॥ १॥

१ दिन। २ ढ़ोंढी पिटवाई।

[1]देवाधिष्ट कोप्यो यक्षो स तिण अवसर अर्जुन माली।
नगरी के चहुं फेर फिरे स कर में मुद्गल झाली॥
बीत गया छे मास हणे नित छःछः पुरुष एक नारी रे॥२॥
ते तिणने रस्ता में मिलियो देख रह्या नरनारी।
सागारी[2] अनशन कर लीनो मन में निश्चय धारी॥
कुछ नहीं चाल्यो जोर देवता निकल गयो तिण वारी रे॥३॥
अनशन पार लार लेई [3]तिण को आया बाग में चाली।
वीर वांद वाणी सुन संजम लीनो अर्जुन माली॥
छः महीने में मोक्ष गये सब जनम मरण दुःख टाली रे॥ ४॥
ऐसा श्रावक होय गुरु की सदा भक्ति मन भावे।
कभी कष्ट व्यापे नहीं सरे जगत मांही जश पावे॥
महा मुनि नन्दलालजी तणां शिष्य जोड़ करी इम गावे रे॥ ५॥

[२४]

गोपीचन्द की क्षमा

(तर्जः—मारग में कांई को खड़ा रे चले जाना)

चले जाना, अरे हो रे चले जाना, महलों के नीचे काहे खड़ा रे।
गोपीचन्द को भेरव देख कर बहिन बैन फरमावे॥
भोग छोड़कर जोग लिया क्यों यहां पर अलख जगावे रे॥१॥
मरजो मां मैनावती, जो तुझ बालक ने भरमायो।
दूजो मरजो सतगुरु थारो तुझ भेरव पहनायो रे॥ २॥
धन माल सब छोड़ दिया तुझ दिया कुमति ने घेरा।
बंगाले का राज छोड़ कर हुआ गुरु को चेरा रे॥ ३॥
वह आदर कहो कहां रहा घोल में कहा कहूँ तुझ रोती।
मीठा भोजन ठण्डा पानी वो फोजां संग रहती रे॥ ४॥

---

१ यक्ष से अधिष्ठित। २ छूट सहित अनशन। यदि मेरा संकट टल गया तो अनशन नहीं रहेगा, इस प्रकार का बचाव जिसमें रख लिया जाता है। ३ अपने पीछे पीछे अर्जुन माली को लेकर।

इतने कड़वे बोल सुना कर फिर महलों में आई।
मोत्यों का भर थाल हाथ से भिक्षा देने लाई रे ॥ ५ ॥
ना चाहिये मोती आविक में ठण्डा टुकड़ा चाहूँ।
खुशी होय तो दे दे नहीं तो अपने आश्रय जाऊं रे ॥ ६ ॥
कहे बहिन तू जा नहीं ले तो क्षमा धार चल आया।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य गावे ऐसे स्वर्ग वह पाया रे ॥ ७ ॥

---

[२५]

मृगापुत्र का वैराग्य

(तर्जः—थनो लौंग बिखेर गयो रे)

मृगा पुत्र वैरागी थया रे, कांई मुनिवर को देख स्वरूप।
होजी सुग्रीव नग्र का वासिया रे, कांई बलभद्र रायना नंद ॥ १ ॥
होजी मृगावती अंग ऊपना रे, कांई बहत्तर कला में हुशियार ॥२॥
होजी रत्न जड़ित घर आँगणा रे, कांई राण्यां को बहु परिवार ॥३॥
होजी कई दिना के आँतरे, कांई बैठा है महल मुझार ॥४॥
होजी विषय वाजिंतर बाजता रे, कांई नाटक का झणकार ॥५॥
होजी तिण अवसर थई निकल्या रे, कांई महलों के नीचे अणगार ॥
होजी नजर पड़ी मुनि ऊपरे रे, कांई मन माँही करत विचार ॥७॥
होजी जाति स्मरण ज्ञान ऊपनो रे, कांई जान्यो है सकल विचार ॥८॥
होजी मन मांही वैराग्य लायने रे, कांई लीनो है संजम भार ॥९॥
होजी बहुत वर्षों को संजम पालने रे, कांई पहुँचा है मुक्ति मुझार ॥१०॥
होजी 'खूबचन्द' कहे जोरण जाँचने रे, कांई जिन धर्म पाल्यो जैजैकार ॥

---

[२६]

चन्द्रसेन राजा क्षमागुणधारी श्रावक—

(तर्जः—सुगुणा साधुजी होके मुनिवर थारी मन वसियो तू मेर)

श्रावक श्री वीरना होके भवियण क्षम्यावंत गुणधार ॥
कनकपुरी नगरी तणो होके भवियण चन्द्रसेन महिपाल।
वीर जिनन्द ने वांदवा होके भवियण [illegible] ॥१॥

वाणी सुन विरागनी होके भवियण श्रावक ना व्रत लीद ।
हीये हर्ष अति ऊपनो होके भवियण उड़ी मोह की नींद के ॥२॥
प्रभु पासे नृप आदर्यो होके भवियण एवो नेम मन तोल ।
जब तक दीपक नहीं बुझे होके भवियण रह सूं ध्यान अडोल के ॥३॥
प्रभु वन्दी आयो महल में होके भवियण ऊभा ध्यान लगाय ।
दासी देख विचारियो होके भवियण दिवा साधे राय के ॥४॥
तुरत दीपक जोयो सही होके भवियण ते नहीं जान्यो भेद ।
वलि वलि तेल जो सींचवे होके भवियण नृप पायो अति खेद के ॥५॥
दिन ऊगो तव नरपति होके भवियण पूरण पाल्यो नेम ।
द्वेष भाव आण्यो नहीं होके भवियण अनशन कीधो तेम के ॥६॥
एक दिवस को पालियो होके भवियण श्रावक धर्म आधार ।
द्वादशमां सुरलोक मे होके भवियण पाया सुर अवतार के ॥७॥
विदेह चेत्र में सीफसी होके भवियण फरसी शिवपुर वास ।
महामुनि नन्दलालजी होके भवियण तस शिष्य कहत हुल्लास के ॥८॥

---

[२७]

मुनि नन्दिषेणकुमार

(तर्जः—चंद्रगुप्त राजा सुणो)

नदीसेण मुनि वंदिए ॥
सेणिक राय रो डीकरो, नंदीसेण कुमारो रे ।
वीर तणी वाणी सुणी, वैरागी थयो तिण वारो रे ॥१॥
संजम लेवा त्यारी हुओ, एक सुर कहे आई समो रे ।
कर्म भोगावली थायरे, हिवड़ा संजम लेवे केमो रे ॥२॥
वहु विध कर समझावियो, मानी नहीं एक वातो रे ।
संजम लीनो वैराग्य से, वीर दियो माथे हातो रे ॥३॥
ज्ञान भएया स्थेवरां कने, थया छे एकल विहारी रे ।
बिना उपयोग चल्या गया, वेश्या के घर तिणवारी रे ॥४॥
वेश्या मर्म प्रकाशियो, वचन सुणी ने मुनिराया रे ।
साढा बारा क्रोड़ सोनैया, लब्धि करी बरसाया रे ॥५॥

वेश्या तुरत आडी फिरी, लिया मुनि ने ललचाई रे।
समकित में सेंठों रह्या, यह पण थई अधिकाई रे ॥७॥
ऐहवो अभिग्रह धारियो, दस दस नित समकावे रे।
वीर[१] समीपे मोकले, धर्मी पूर्ण बनावे रे ॥७॥
इम साढ़ा बर्ष निकल्या, एक दिन नव समकाया रे।
एक घटे योग ना मिल्यो, विविध उपाय लगाया रे ॥८॥
वेश्या कहे किम साहिबा, थया छो आप उदासी रे।
सब वृत्तान्त सुणावियो, वेश्या बोली कर हांसी रे ॥९॥
दशमा तुम पूरा हुआ, ढील न करीये लगारो रे।
वचन लग्यो जिम ताजणो, निकल्या थई अणगारो रे ॥१०॥
बहु वर्षों का संजम पालने, निर्मल केवल लीधो रे।
'खूब' कहे ते मुनिवरू, काम किया सब सीधो रे ॥११॥

[२८]

धर्मरुचि

(तर्ज —जखा की)

मुनिवर धर्मघोष ना शिष्य तपस्वी गुणधारी हो, धर्मरुची अणगार।
थां पर वारी अणगार; धर्मघोषना शिष्य तपस्वी गुणधारी हो मुनि ॥१॥
मुनिवर विचरत २ चम्पा नगरी आया हो, धर्मरुची अणगार।
थां पर वारी अणगार; विचरत २ चम्पा नगरी आया हो मुनि ॥२॥
मुनिवर आज्ञा लई शिष्य गोचरी सिधाया हो, धर्मरुची अणगार।
थां पर वारी अणगार; आज्ञा लई शिष्य गोचरी सिधाया हो मुनि ॥३॥
मुनिवर मासखमण के पारणे शहर में आया हो, धर्मरुची अणगार।
थां पर वारी अणगार;मास खमण के पारणे शहर में आया हो मुनि ॥४॥
मुनिवर फिरतां २ [२]नागश्री के घर आया हो, धर्मरुची अणगार।
थां पर वारी अणगार; फिरतां २ नागश्री के घर आया हो मुनि ॥५॥
मुनिवर कड़वा तुम्बा को आहार मुनि ने बहरायो हो धर्मरुची अणगार।
थां पर वारी अणगार,कड़वा तुम्बा को आहार मुनिने बहरायो हो मुनि ॥

१ छठ्ठ । २ एक ब्राह्मणी का नाम ।

मुनिवर जहर हलाहल जाण गुरुजी फरमावे हो धर्मरुची अणगार।
थां पर वारी अणगार; जहर हलाहल जाण गुरुजी फरमावे हो मुनि ॥७॥
मुनिवर देखी निरवद्य स्थान जाई परठायो हो, धर्मरुची अणगार।
थां पर वारी अणगार; देखी निरवद्य स्थान जाई परठायो हो मुनि ॥८॥
मुनिवर परठण आया अजयणा[1] जाणी हो धर्मरुची अणगार।
थां पर वारी अणगार; परठण आया अजयणा जाणी हो मुनि ॥६॥
मुनिवर आहार कियो सब खीर खांड समजाणी हो धर्मरुची अणगार।
थां पर वारी अणगार; आहार कियो सब खीर खांड सम जाणी हो मुनि ॥
मुनिवर अनशन करके सर्वार्थ सिद्ध पधारया हो, धर्मरुची अणगार।
थां पर वारी अणगार;अनशन करके सर्वार्थ सिद्ध पधारया हो मुनि ॥११॥
मुनिवर तिहां थी चवी महाविदेह में मुक्ति सिधासे हो मुनि धर्म० अ०।
थां पर वारी अणगार;तिहांथी चवी महाविदेह में मुक्ति सिधासे हो मुनि ॥
मुनिवर कहे 'खूबचन्द' आनन्द मुनि गुण गाया हो, धर्मरुची अणगार।
थां पर वारी अणगार; कहे 'खूबचन्द' आनन्द मुनि गुण गाया हो मुनि ॥

[२९]

कपिल मुनि

(तर्ज:—पूर्ववत्)

मुनिवर कपिल ब्राह्मण नगर उज्जैनी में रहतो हो, कपिल मुनिराज।
थाँ पर वारी मुनिराज; कपिल ब्राह्मण नगर उज्जैनी में रहतो हो मुनि ॥१॥
मुनिवर तिहाँ नृप दान दो मासा नित्य देतो हो, कपिल मुनिराज।
थाँ पर वारी मुनिराज; तिहाँ नृप दान दो मासा नित्य देतो हो मुनि ॥२॥
मुनिवर नारी कहन से जावे सोना हाथ नहीं आवे हो,कपिल मुनिराज।
थाँ पर वारी मुनिराज; नारी कहन से जावे सोना हाथ नहीं आवेहो मुनि ॥३॥
मुनिवर रात अँधारी प्रभात समय दर्शावे हो, कपिल मुनिराज।
थाँ पर वारी मुनिराज; रात अंधारी प्रभात समय दर्शावे हो मुनि ॥४॥

१ अयतना-जीवहिंसा।

मुनिवर मारग जाता हूरे, जान घेरयो गिपत[1] मांही हो, कपिल मुनिराज।
थाँ पर वारी मुनिराज, मारग जाता हूरे जान घेरयो गिपत माही हो मुनि ॥५॥
मुनिवर नृप निर्णय कर कहे तू मांग देऊं सोही हो, कपिल मुनिराज।
थाँ पर वारी मुनिराज, नृप निर्णय कर कहे तू माँग देऊं सोही हो मुनि ॥६॥
मुनिवर एकान्त विचारी ने अधिको लोभ वधायो हो, कपिल मुनिराज।
थाँ पर वारी मुनिराज, एकान्त विचारी ने अधिको लोभ वधायो हो मुनि ॥७॥
मुनिवर मन सुलझ्यो श्रेणी चढ़तां केवल पायो हो, कपिल मुनिराज।
थाँ पर वारी मुनिराज, मन सुलझ्यो श्रेणी चढतां केवल पायो हो मुनि ॥८॥
मुनिवर ओघा पात्र लाय मुनि को देवता दीना हो, कपिल मुनिराज।
थाँ पर वारी मुनिराज, ओघा पात्र लाय मुनि को देवता दीनो हो मुनि ॥९॥
मुनिवर खूबचन्द कहे मुनिराज अनन्त सुख पाया हो कपिल मुनिराज।
थाँ पर वारी मुनिराज खूबचन्द कहे मुनिराज अनन्त सुख पायो हो मुनि ॥१०॥

[३०]

धन्ना सेठ

(तर्ज —महला में बैठी हो रानी कमलावती)

सांभल हो श्रोता शूरा ने लागे वचन ज्यू ताजणो।
कायर ने लागे नाहीं कोय ॥

नगरी तो राजगृही ना वासीया, सेठ धन्नाजी जग में सार।
पूरब पुण्य थी बहु रिद्ध पामीया, आठ नारया ना भरतार ॥ १ ॥
एक दिन धन्नाजी वेला पारणे, स्नान करे छे तिण वार।
आठों ही नारया मिलने प्रेम से, छूट रही छे जलधार ॥ २ ॥
सुभद्रा नारी चौथी तेहनी, मन में थई छे दिलगीर।
आसू तो निकल्या तेहना नैण से, संजम लेवे छे मुझ वीर[2] ॥ ३ ॥
प्रेम धरी ने धनजी पूछियो, भामण क्यों थई छे उदास।
शंका मत राखो थे आगले, कारण तो कहोनी विमास ॥ ४ ॥
कामण[3] कहे छे कंथा माहरा, वीरा ने चढ़ियो छे वैराग।
एक एक नारी नित की परिहरे, सजम लेवा की रही छे लाग ॥ ५ ॥

१ गिरफ्तार कर लिया। २ भाई-शालिभद्र। ३ स्त्री।

धनजी कहे छे भोली बावली, कायर दीसे छे थारो बीर ।
संजम लेणो तो दिल में धारियो, तो किम करनी फिर ढील ॥ ६ ॥
सुभद्रा नारी कहे छे कन्त ने, मुख से बनावो फोकट बात ।
ई सुख छांडी ने बाज्यो शूरमा, प्रीतम जब जानूं की बात ॥ ७ ॥
तत्क्षण धन्नोजी उठने बोलीया, कामण रहीजो म्हासूं दूर ।
संजम लेवांगा अब इण अवसरे,जब मैं बाज्यांला जग में शूर ॥ ८ ॥
बे कर जोड़ी ने सुन्दर बीनवे, मणो हँसी के वश बोल ।
काचीकी सांधी न कीजे साहिबा,हिवड़े विचारीने बाहिर खोल ॥९॥
संजम लेणो तो साहिबा सोहिलो[1], चलणो छे कठिन विचार ।
बावीस परीसा सहवा दोहिला[2], ममता मारी ने समता धार ॥१०॥
उत्तर पर उत्तर हुआ अतिघणा,आया साला के भवन उच्छाव ।
दोऊ मिल माथे संजम आदर्यो, कायर उतरे नी नीचे आब ॥११॥
साला बहनोई मिल संजम लियो, श्रीवीर जिनन्दजी के पास ।
सालीभद्रजी सर्वार्थ सिद्ध गया, धन्नाजी शिवपुर वास ॥१२॥
संवत उगणीसे इगसठ साल मे, कीनो गढ़ चित्तौड़ चौमास ।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावीयो, वछित फलेगा सब आस ॥१३॥

[३१]

गोकुल की गुजरियाँ

(तर्ज:—मन्दिर में कांई ढूंढतो डोले थारे घट में श्रीभगवान्)

आवो ये सब रायतो मेलो गऊ, ऊपाको यूं नहीं समझेलो ।
गोकुल की गुजरियां आपस में कर रहीं हेलम हेलो ॥
इण रस्ते से लाम घरयो छे क्यो ना सम्भाले बीजो गेलो ॥ १ ॥
यो कानो नानो मतवालो कूड़ कपट को थेलो ।
दही दूध की फोड़े लावड़यां[3] कर देवे रेलम ठेलो ॥ २ ॥
यूं हरिया तो काम न चाले दुनिया भरम धरेलो ।
कूट पीट ने कर दो सीधो यो पिण याद करेलो ॥ ३ ॥
कुण जाणे कहो मात यशोदा वेसो नन्द जणेलो ।
कंसराय ने अर्ज करां तो क्यों नहीं न्याय करेलो ॥ ४ ॥
सो सुख पोते होय जणी का दुर्जन कांई करेलो ।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य कहे छे सब ही सुलटी पड़ेलो ॥ ५ ॥

---

1 सरल । 2 कठिन । 3 मटकियां ।

[३२]

गोकुल की गूजरियाँ

(तर्जः—तू सुण मारी जननी म्हारा देवो तो संजम आदरूं)

म्हारो [1]मही मत लूटोजी,मैं छूं गोकुल की काना [2]गूजरी।
खारक खाड खोपरा मिश्री, जिन को लागे दान॥
दान मही को कभी न सुनियो, बाबा नन्द की आन रे॥ १॥
मन में आण जरा डर काना, किम थे छोड़ी लाज।
मथुरा में जरासिंध जमाई, कंस करे छे राज रे॥ २॥
इण जमना के घाट पै तू, आकर करे किलोल।
मेरा [3]करी रखाल्या मटकिया, पोडे मार गिलोल रे॥ ३॥
मन माने ज्यों करे कन्हैया, तुम्ह में हाल न बीती।
सीधी तरह समझावा हम सब, मतना माड अनीती रे॥ ४॥
गोकुल और मथुरा के बीच में, यो जमना को घाट।
दही दूध ले जावे गूजरी, तू बीच पाडे बाट[3] रे॥ ५॥
सोलह वर्ष गोकुल विषे सरे, लीला करी अनेक।
'खूबचन्द' कहे जो पुण्य पोते, चले न किस की एक रे॥ ६॥

---

[३३]

कृष्णजन्म

(तर्ज—षट्पदी)

पुरुषोत्तम प्रगट्या अवतारी, जगत में महिमा विस्तारी।
देवकी को नन्दन है नीको, हुवो जादव कुल में टीको॥
भादव वदी दिन अष्टमी को, जन्म जब हुओ हरिजी को।
तिण अवसर वसुदेवजी मन का सोच मिटाय।
कोमल कर लेय कान्ह को, जावे गोकुल माय॥
तुरत फुर्ती हुआ त्यारी॥ १॥

---

१ छाछ। २ इच्छा करके। ३ डाका

[३२]

गोकुल की गूजरियाँ

(तर्ज:—तू तुम मारी जननी आज्ञा देवो तो संजम आदरू)

म्हारी 'मही मत लूटोजी, मैं छूं गोकुल की काना' गूजरी।
तारक वाड़ खोपरा मिश्री, जिन को लागे दान॥
दान मही को कभी न सुनियो, पाया नन्द की आन रे॥ १॥
मन में आण जरा डर काना, किम थे छोड़ी लाज।
मथुरा में जरासिंध जमाई, कंस करे छे राज रे॥ २॥
इण जमना के घाट पै तू, आकर करे किलोल।
सैरा¹ करी ग्वालया मटकिया, फोड़े मार गिलोल रे॥ ३॥
मन माने ज्यों करे कन्हैया, तुम्ह में हाल न बीती।
सीधी तरह समझाता हम सब, मतना माड अनीती रे॥ ४॥
गोकुल और मथुरा के बीच में, यो जमना को घाट।
दही दूध ले जावे गूजरी, तू बीच पाड़े धाड़² रे॥ ५॥
सोलह वर्ष गोकुल विषे सरे, लीला करी अनेक।
'लूणचन्द' कहे जो पुण्य पोते, चले न किस की एक रे॥ ६॥

---

[३३]

कृष्णजन्म

(तर्ज—छप्पदी)

पुरुषोत्तम प्रगट्या अवतारी, जगत में महिमा विस्तारी।
देवकी को नन्दन है नीको, हुवो यादव कुल में टीको॥
भादव वदी दिन अष्टमी को, जन्म जब हुओ हरिजी को।
तिण अवसर वसुदेवजी मन का सोच मिटाय।
कोमल कर लेय कान्ह को, लाने गोकुल माय॥
तुरत पुरनी हुआ न्यारी॥ १॥

---

१ फाड़। २ इकट्ठा करके। ३ डाका

भवन मे आया उतर रैठा, द्वार के जड़या ताला मेंठा।
कस का पहरा बाहर बैठा, निकल जाने को नहीं रस्ता॥
चरण अगुष्ठ लगावियो, गोविन्द को लिए धार।
खड़खड़ नाला टूट पड़या कोई, मड़ मड़ खुल्या द्वार॥
अन्तहित निकल गये बाहरी॥ २॥

अंधेरी रात घना छाई, जोर से गाजे गगन माई।
चमकती बिजली दर्शाई, बागरो बाजे जोश खाई॥
अति उमग आकाश से, पड़ रही जल की धार।
सहस्र नाग छाया कर दीनी, पड़े न बुन्द लगार॥
जिन्हों का पुण्य बड़ा भारी॥ ३॥

निकल मथुरा से गोकुल धावे, अपट जमना पूर जावे।
निकलवा मारग नहीं पावे, विविध मिसलत[1] मन में ठावे॥
पग फरस्यो गऊपाल को, जमुना हुई दो भाग।
वसुदेवजी तुरत निकल गये, हुलस्यो हियो अथाग॥
गोकुल में पहुँचे गिरधारी॥ ४॥

यशोदा के हाथ जाय दीनो, प्रेम से गिरधर को लीनो।
नदजी महोच्छव खूब कीनो, दान बहु याचक ने दीनो॥
आये मथुरा में निज घरे, वसुदेवजी चाल।
दिन दिन बीज कला ज्यों बढ़ता आनंद में नंदलाल॥
कोई नहीं जाने नर नारी॥ ५॥

कृष्ण दिन दिन भया मोटा, हाथ में दण्ड लिया छोटा।
ग्वाल सग रमे दड़ी दोटा, शत्रु के हुआ जेम सोटा॥
सोला वर्ष गोकुल विषे, लीला करी अनेक।
तीन खड का नाथ हुआ तू, पूरब पुण्य सो देख॥
जगतवल्लभ कहे नर नारी॥ ६॥

दलाल्या[2] धर्म तणी कीनी, शास्त्र में साख[3] देख लीनी।
सज्जन पर सुदृष्टि कीनी, भलाया जग में बहु लीनी॥
महा मुनि नन्दलालजी, तस्य शिष्य कहे ऐम।
पुण्य प्रताप वांछित फल पावे, रखो धर्म का नेम॥
मांडलगढ जोड करी त्यारी॥ ७॥

---

१ विचार। २ दलाली। ३ साक्षी।

[३४]
चौबीसी

(तर्ज:—प्रभावती)

चौबीसी जिनराज जगत में सुख सम्पति आनन्द बरसाया।
वनिता नगरी जिहां नाभिराजा, मरुदेवी नन्द ऋषभ जिनराया॥
चौरासी लाख[1] पूर्व नो आयु, पांच सौ धनुष नी ऊंची काया॥१॥
अयोध्या नगरी जितशत्रु राजा, विजयानन्द अजित जिनराया।
बहत्तर लाख पूर्व नो आयु, चार सौ धनुष नी ऊंची काया॥२॥
सावत्थी नगरी जतारथ राजा, सेना दे[2] रानी सम्भव जिनराया।
साठ लाख पूर्व नो आयु, चार सौ धनुष नी ऊंची काया॥३॥
वनिता नगरी सम्बर राजा, सिद्धारथ नन्द ,चौथा जिनराया।
पचास लाख पूर्व नो आयु,साढ़ी तीनसौ धनुष्य नी ऊंची काया॥४॥
कौशम्बी नगरी मेघरथ राजा, सुमंगलानन्द सुमति जिनराया।
चालीस लाख पूर्व नो आयु, तीन सौ धनुष नी ऊंची काया॥५॥
कौशम्बी नगरी श्रीधर राजा, सुसमा दे नन्द पद्म प्रभु जिनराया।
तीस लाख पूर्व नो आयु, अढ़ाई सौ धनुष नी ऊंची काया॥६॥
वाणारसी नगरी प्रतिष्ठ राजा, पृथ्वी दे नन्द सुपास जिनराया।
बीस लाख पूर्व नो आयु, दो सौ धनुष नी ऊंची काया॥७॥
चन्द्रपुरी नगरी महासेन राजा,लक्ष्मादे नन्द चन्द्रप्रभु जिनराया।
दस लाख पूर्व नो आयु, डेढ सौ धनुष्य नी ऊंची काया॥८॥
काकन्दी नगरी सुग्रीव राजा, रामादे नन्द सुविधि जिनराया।
दोय लाख पूर्व नो आयु, एक सौ धनुष नी ऊंची काया॥९॥
भद्दिलपुर नगरी दृढ़रथ राजा, नन्दा दे नन्द शीतल जिनराया।
एक लाख पूर्व नो आयु, नेऊ[3] धनुष नी ऊंची काया॥१०॥
सिंहपुर नगरी विष्णुराजा, विष्णुदे नन्द श्रेयांस जिनराया।
चौरासी लाख वर्ष नो आयु, अस्सी धनुष नी ऊंची काया॥११॥
चम्पापुर नगरी वसुपूज्य राजा, जयादे नन्द वासुपूज्य जिनराया।
बहत्तर लाख वर्ष नो आयु, सत्तर धनुष नी ऊंची काया॥१२॥
कंपिलपुर नगरी कीर्तिवर्म राजा, सामादे नन्द विमल जिनराया।
साठ लाख वर्ष नो आयु, साठ धनुष नी ऊंची काया॥१३॥

---

१ पूर्व—एक आगम प्रसिद्ध संख्या। २ देवी। ३ नब्बे।

अयोध्या नगरी सिंहसेन राजा, सुजसा नन्द अनन्त जिनराया।
तीस लाख वर्ष नो आयु, पचास धनुष नी ऊंची काया ॥१४॥
रतनपुर नगरी भानु राजा, सुव्रता नन्द धर्म जिनराया।
दीस लाख वर्ष नो आयु, पैंतालीस धनुष नी ऊंची काया ॥१५॥
हस्तनापुर नगरी अश्वसेन राजा, अचला रे नन्द शान्ति जिनराया।
एक लाख वर्ष नो आयु, चालीस धनुष नी ऊंची काया ॥१६॥
गजपुरी नगरी तिहां सुर राजा, सुराई नन्द कुन्थु जिनराया।
पिच्याणु सहस्र वर्ष नो आयु, पैंतीस धनुष नी ऊंची काया ॥१७॥
नागपुरी नगरी सुदर्शन राजा, देवकी नन्द अरह जिनराया।
चौरासी सहस्र वर्ष नो आयु, तीस धनुष नी ऊंची काया ॥१८॥
मिथिला नगरी तिहां कुम्भ राजा, प्रभावती जाई मल्ली जिनराया।
पचावन सहस्र वर्ष नो आयु, पच्चीस धनुष नी ऊंची काया ॥१९॥
राजगृही नगरी सुमित्र राजा, पद्मावती नन्द वीसवां जिनराया।
तीस सहस्र वर्ष नो आयु, वीस धनुष नी ऊंची काया ॥२०॥
मथुरा नगरी विजयसेन राजा, विपुलादे नन्द नमि जिनराया।
दस सहस्र वर्ष नो आयु, पन्द्रह धनुष नी ऊंची काया ॥२१॥
सोरिपुर नगर समुद्रविजय राजा, सिवादे नन्द नेमि जिनराया।
एक सहस्र वर्ष नो आयु, दस धनुष नी ऊंची काया ॥२२॥
वाणारसी नगरी अश्वसेन राजा, वामादे नन्द पारस जिनराया।
एक सौ वर्ष नो पूरो आयु, नव हाथ नी ऊंची काया ॥२३॥
क्षत्रियकुंडग्राम सिद्धारथ राजा, त्रिशलादे नन्द वीर जिनराया।
बहत्तर वर्ष सर्व नो आयु, सात हाथ नी ऊंची काया ॥२४॥
संवत उन्नीसे साल पचावन, जिन गुण गाय हिया हुलसाया।
'खूबचन्द' पट्टे नन्दलाल गुरुजी, नीमच मांही अति सुख पाया ॥२५॥

[३५]

श्री रतनचन्दजी महाराज का गुणानुवाद

(तर्ज:—ये गुरु वरया रे नमिये)

रतन मुनि गुणीजन रे पूरा, हुआ तप संजम में शूरा ॥
गांव कंकेरों रे गिरि में, तिहां जन्म लियो शुभ घड़ी में।
जोवन की वय जद[1] रे आया, मन वैराग मजीठ का छाया ॥१॥

१ जब।

गुरु राजमलजी के पास, लियो संजम आप हुलासे।
साथे देवीचन्दजी रे माला, त नो निकल्या दोनू लारा ॥२॥
निज घर नारी रे छोड़ी, ममता तीन पुत्र में तोड़ी।
छ वर्ष पीछे रे से पिण, सब निकल गया तब समपण ॥३॥
छतीस वर्ष संजम रे पाल्यो, जाने नर भव लाभ निकाल्यो।
अठारा से अठोतर में जाया, उगीसे पचास में स्वर्ग सिधाया ॥४॥
उगणी से इकोतर के माही, जाकी जश कीर्ति मुख गाई।
कभी तो होगा रे निरना, मुझे नन्दलाल गुरुजी का शरना ॥५॥

[३६]

गुरु नन्दलालजी महाराज का गुणानुवाद

(तर्ज —पूज्य मुन्नालालजी नित ध्याओ रे)

अहो म्हारा मन का मनोरथ फलिया रे, नन्दलाल गुरुजी म्हाने मिलिया ॥
[1] ई तो संजम लेई शुद्ध पाल रे, भव जीवों के घट दया घाले रे।
ई तो न्याय मारग में चाले ॥ १ ॥
ई तो बावीस परीसा[2] जीते रे, ई तो चाले गुरु की रीते रे।
जाको दिन दया धर्म में बीते ॥ २ ॥
ई तो पाप अठारहना त्यागी रे जाकी मिथ्या भ्रमना भागी रे।
जाँकी सुरत मुगत से लागी ॥ ३ ॥
ई तो निर्मल महाव्रत पाल रे, नित दोष बयालीस टाले रे।
ई तो विषय कषाय निवारे ॥ ४ ॥
ई तो अमृत वैन सुनावे रे, भव जीव सुन तृपत थावे रे।
जाको रोम रोम हरषावे ॥ ५ ॥
जाने तजिया सब घर धंदा रे, जाने मेट्या जगत का फंदा रे।
जाको नाम लिया नव नंदा ॥ ६ ॥
सीधो मुगति पंथ बतावे रे, जाने सुर नर शीश नमावे रे।
जाकी खूबचन्द गुण गावे ॥ ७ ॥

१ यह तो। २ परीषह-कष्ट।

[३७]

पूज्य श्री मुन्नालालजी महाराज के गुणानुवाद

(तर्जः—ख्याल)

पूज्य श्री मुन्नालालजी शीतळ स्वभावी गुण भंडार है ॥
बैठ सभा के बीच में सरे, करते ज्ञान प्रकाश।
वाणी सुन श्रोता के हृदय, सुमति करे निवास रे ॥ १ ॥
गुरु गम्म करी धारणा पूज्यजी, बहुत सूत्र के जान।
अर्थ पाठ भिन्न भिन्न समझावे, सबको पड़े पिछान रे ॥ २ ॥
क्रिया पात्र बाल ब्रह्मचारी, सागर नर गंभीर।
चम्या भाव शुद्ध संजम पालक, शूरवीर महा धीर रे ॥ ३ ॥
दर्शन किया मन प्रसन्न होत है, शशी सम सौम दिदार।
क्या तारीफ करूं पूज्यजी का, गुण है अपरम्पार रे ॥ ४ ॥
सोमवार शुद्ध चौथ इक्यासी, श्रावण मास शुभ आया।
महामुनि नन्दलाल तणां शिष्य, हर्ष हर्ष गुण गाया रे ॥ ५ ॥

---

[३८]

पूज्य मुन्नाललाजी महाराज का गुणानुवाद

(तर्जः—मनडो मोयो रे २)

प्यारा लागे रे२ श्री मुन्नालालजी है पूज्य साणे[१] रे।
रतनपुरी प्रसिद्ध शहर है मुल्कों में सब जाने रे।
अणी[२] नगर के बीच जनम पूज लीनो थाने रे ॥ १ ॥
बाल वय में संजम पूजजी, पिता सग में लीनो रे।
उदयसागर के चरणकमल में चित धर दीनो रे ॥ २ ॥
सेवा करके पूज्यपाद की, सूत्र ज्ञान बहु कीनो रे।
संजम मांही लीन चित वैराग्य मे भीनो रे ॥ ३ ॥
सागर सम गंभीर पूज्य के मान दंभ नहीं दरसे रे।
वाणी जैसे मधुर आपकी, अमृत बरसे रे ॥ ४ ॥

---

१ साक्षात २ जिस।

प्रकृति बड़ी शान्त आपकी, क्रोध नजर नहीं आवे रे।
करके दर्शन पूज्यराज का, आनन्द पावे रे॥ ५॥
न्यायवन्त और सरल स्वभावी, ज्ञान गुणाकर भारी रे।
कहां तक करूं बखान पूज्यजी की है बलिहारी रे॥ ६॥
जग विजय सदा होवे आपकी, जहां पर आप पधारो रे।
धर्म, ध्यान का लगे ठाठ, होवे उपकारो रे॥ ७॥
उगणीसे गुणयासी भादवो, मन्दसौर के मांही रे।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य, ऐसे जोड़ बनाई रे॥ ८॥

[३९]

मुनिराजों के गुणानुवाद

(तर्ज:— तू सुन म्हारी जननी आज्ञा देवो तो)

पूज्य मुन्नालालजी. मीठी मनोहर वाणी आपकी॥
मही मंडल में विहार विचरते, बहुत वर्ष में आये।
ज्ञानवन्त गुणवन्त सन्त, गुणतीस संग में लाये॥
रतनपुरी महाराज पधारे, रोम रोम हुलसाये रे॥ १॥
वादीमानमर्दक स्थेवर, मनि नन्दलाल विद्वान।
पंडित है मुनि देवीलालजी, सूत्र रहस्य के जान॥
भीमराजजी मुनि गुणी, भद्रिक भाव लो मान रे॥ २॥
वृद्ध. मुनि सन्तों का. दास., मुनि. चौथमल विख्यात.।
केसरीमल कस्तूरचन्दजी सगा है दोनों भ्रात॥
शंकरलाल और राधाकृष्णजी सेवा करे दिन रात रे॥ ३।
मोतीलालजी विनयवान और व्यावच में भरपूर।
मयाचन्दजी तपस्वी मोटा, कर्म करे चकचूर॥
प्यारेलाल हजारीमलजी, रहते हुकुम हजूर रे॥ ४॥
फजोड़ीमल भेरूँलाल और छगनलाल सुखदाई।
चाँदमल और वृद्धिचन्द सुरा तप संजम के मांई॥
रामलाल और लाधूलाल ये आठों ही गरु भाई॥ ५॥

मेरूँलाल और नाथूलालजी गुलाबचन्द गुणवान।
इक ठाणा सुन्नलालजी सरे गायन कला निधान॥
शोभालाल और छगनलालजी सेंसमल विद्वान् रे॥ ६॥
देवीलाल पे सब संतों की है सेवा का शौक।
नाम बतागो अलग अलग गुणतीस संत का थोक॥
बखाण की लग रही झड़ी बीच शहर चांदनीचौक रे॥७॥
तप संजम आचारवन्त मुनिवर का दर्शन पाया।
साल गुणयासी ज्येष्ठ बदि शुभ अष्टमी का दिन आया॥
महा मुनि नन्दलाल तणां शिष्य संतों का गुण गाया रे॥८॥

[४०]

पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का गुणानुवाद

(तर्ज़:—ख्याल)

पूज्यश्री शीतल चन्द समान, हैत तो गुण रत्नों की खान।
जिन मारग में दीपता सरे तीजे पद महाराज॥
कलूकाल में प्रगट हुआ एक आप धर्म की जहाज॥ १॥
पूर्व जन्म में आप पूज्यजी पूरा पुण्य कमाया।
धन्य छे माता आपकी सरे ऐसा नन्दन जाया॥ २॥
भव जीवा ने तारता सरे कृपा करी दलाल।
रामपुरे महाराज विराज्या रया कल्पतो काल॥ ३॥
मीठी वाणी सुनी आपकी खुशी हुआ नर नार।
फागुन सुद पूनम के ऊपर घणो कियो उपकार॥ ४॥
उगणीसे तिरेसठ में पूज्यजी ठाणा एक दश आठ।
रामपुरा में खूब लगाया दया धर्म का ठाठ॥ ५॥
हाथ जोड़ ने कहू रे विनती अर्जी पै चित दीजे।
चनी रहे सुनजर आपकी दर्शन वेगा दीजे॥ ६॥
महा मुनि नन्दलाल तणां शिष्य कहे सुनो गुरुदेवा।
वो दिन भलो ऊगसी स म्हाने मिले आपकी सेवा॥ ७॥

नोट—इस वर्ष मुनि श्री सन्तोषचन्दजी म०, पं० मुनि श्री मगनलालजी म०, पं० मुनि श्री प्रतापमलजी म०, व्याख्यानी मुनि श्री लक्ष्मीचन्दजी म०, पं० मुनि श्री हीरालालजी महाराज आदि की दीक्षा हुई।

[४१]

तपस्वी श्री बालचन्द्रजी महाराज का गुणानुवाद

(तर्जः—आज रंग बरसे रे)

निज गुण परख्या रे २ मुनि बालचन्द्रजी ने नैणा निरख्या रे।
मालव देश सुशोभित जानो, रतनपुरी सुखदाई रे।
ओस वंश में जन्म लियो जैनी कुल माई रे॥ १॥
जोबन वय में सुनी पूज्यश्री उदयचन्द्रजी की वाणी रे।
लियो मुनि पद धार जगत सुपना सम जाणी रे॥ २॥
कियो ज्ञान अभ्यास आप नित इच्छुक शुद्ध क्रियाके रे।
महिमावन्त सन्त गुण आगर पुञ्ज दया के रे॥ ३॥
मन्त्र सूत्र स्वध्याय बीच शुद्ध प्रभु जाप के जपीया रे।
चौथ भक्त आदि तप तन से बहु विधि तपीया रे॥ ४॥
मारवाड़ मेवाड़ देश बलि मालव मे फिर आया रे।
स्यालकोट जम्मू तक अति उपकार कराया रे॥ ५॥
जैनाचार्य श्री मुन्नालालजी सुयश जग में पाया रे।
धर्म प्रेम आपस में मिल जुल खूब निभाया रे॥ ६॥
पुज्यश्री और तपसीजी के अन्यो अन्य चित पूरा रे।
संजम का दिया साज अन्त तक रया न दूरा रे॥ ७॥
चौरासी के साल चैत वद चौथ शनीचर आया रे।
रतनपुरी में अनशन कर सुरलोक सिधाया रे॥ ८॥
वादी मान मर्दक स्थैवर नन्दलाल महा मुनिराया रे।
तस्य शिष्य होय मग्न आज गुण गाय सुनाया रे॥ ९॥

---

[४२]

शालिभद्र कुमार

(तर्जः—यूं ही मत जावो जमारो हार)

दान सुपातर दिया जिन्होंने सफल किया अवतार।
धन्य श्री शालिभद्र कुमार॥
जन्म-शालग्या के मध में, निर्धन निर आधार-नीठ कर करता गृह गुजार।
। करे मजदूरी लड़का, लेकर वाछरु लार। चरावा जावा वन मंझार॥

सांझ पड्यां पीछा घर आतां, इम करता केई दिन जातां ।
जिकर सुनो नर नार ॥ १ ॥
लड़के को कोई खीर खिलाई, तृपत हुआ अपार । दौड़ कर घर आया तत्क
कहे मात से खीर खिला मुझ, बोले बारम्बार । मात जब मन में करे विचा
उस लड़के ने जब हठ कीनी, चार जनी मिल वस्तू दीनी ।
हो गई खीर तईयार ॥ २ ॥
माता पुत्र को शीघ्र बुला कर, थाल परोसी खीर, आप तो गई भरने को नी
उसी वक्त पुत योग पधारे, शूरवीर और धीर, तपस्वी मोटा गुण गम्भीर
घर आये बालक हुलसाई । मुनिराज को खीर बहराई ।
परत किया संसार ॥ ३ ॥
मुनिराज तो गया ठिकाने, मात आई उस बार । देख कर मन में करे विचा
इतनी खीर खा गयो पुत्र, नित काटे भूख अपार । मात की लाग गई टूकार
उसी वक्त मर गया वो कुंवर । राजगृही नगरी के अन्दर ॥
लिया जिन्होंने अवतार ॥ ४ ॥
जन्म लियो गऊ भद्र सेठ घर, हो रहे मंगलाचार । शहर में हुलसे बहु नरनार
जोबनवय में आया कुंवर को,ब्याही बत्तीसी नार । भोगवे पुण्य तणां फल सार
गऊभद्र सेठ जब संजम लीनो,अन्त समय जब अनशन कीनो ।
पाया सुर अवतार ॥ ५ ॥
ज्ञान लगाकर देखा पुत्र पर,जाग्यो मोह अपार । जिन्हों की निशदिन करतो सार
वस्त्र आभूषण भोजन केरी, तेतीस पेटी सार । देवता मेले नित्य संवार ।
देखो जिनका पुण्य सवाया । श्रेणिक नृप जिन के घर आया ।
देखन शाल कुमार ॥ ६ ॥
सब ऋद्धि को जान कारमी, तजी बत्तीसी नार । जिन्होंने लिया है संजम भार
अनशन कर सर्वार्थ सिद्ध पहुँचे,चत्र लेसी भवपार । जिन्हों का चौथी में अधिकार
'खूबचन्द' कहे मन्दसोर में । दान सुपातर दो मुनिवर ने ।
वेग हुवे निस्तार ॥ ७ ॥

[४२]

रहनेमि व राजमती का संवाद

(तर्ज:—छोटी कड़ी)

श्री समुद्रविजयजी के लाल बड़े यशधारी, बड़े यशधारी।
किम तज कर राजुल नार गये गिरनारी ॥
तुम सज कर जादव जान ब्याह को आये, ब्याह को आये।
हो रहे राग रंग बहुत लोक हुलसाये।
पशुओं की सुनी पुकार आप जिनराये, आप जिनराये।
होगये वैरागी बींद[१] संजम चित लाये।
तोरण से रथ को फेर चले असवारी, चले असवारी ॥ १ ॥
राजुलजी सुण्या अवहाल तुरत मुरछानी, तुरत मुरछानी।
सती वेग होय हुशियार बोले इम वानी।
या गुप्त रही ना बात जगत सब जानी, जगत सब जानी।
मुझ छांड़ी बिन अपराध सुमत सहलानी।
मेरी आठ भवों की प्रीति पलक ना धरी, पलक ना धरी ॥ २ ॥
सती करके एम विचार मन वश कीनो, मन वश कीनो।
सती महल मन्दिर सिणगार सभी तज दीनो।
सती लेकर संजम भार काम सिध कीनो, काम सिध कीनो।
सती विहार कियो वर्षा से चीर सहु भीनो।
गिरनार गुफा में गई धार हुशियारी, धार हुशियारी ॥ ३ ॥
तिण गुफा माँय रहनेमजी कियो है ध्यानो, कियो है ध्यानो।
राजुलजी नजरों देख अंग कँपानो।
यों कहे नेम राजुलजी शंक मत आनो, शंक मत आनो।
श्री समुद्रविजयजी का लघु नन्द मोय जानो।
संसार तणा सुख भोग लेस्यां व्रत धारी, लेस्यां व्रत धारी ॥४॥
सुन राजमती रहनेम को एम समझावे, एम समझावे।
तुम भोग छोड़ कर योग लियो किस दावे।

---

१ दूल्हा।

थे मोटा कुल का महाराज लाज नहीं आवे, लाज नहीं आवे।
मन कर नहीं वंछू इन्द्र यहां गुद आवे।
थांने वार वार धिक्कार बोलो नी विचारी, बोलो नी विचारी ॥ ५ ॥
सुन राजमतीजी का बैन नैन शरमाया, नैन शरमाया।
सुवचन मुझे महासतीजी आप फरमाया।
इम धर्म ठिकाने लाय कर्म खपवाया, कर्म खपवाया।
श्री रहनेमी राजुलजी मोक्ष पद पाया।
मुझे लगी आश दिल मांय दर्श करवारी, दर्श करवारी ॥ ६ ॥
मैं अरज करूं कर जोड़ नाथ मोय तारो, नाथ मोय तारो।
तेरे शरणागत आधार कार्य मेरा सारो।
श्री नन्दलालजी महाराज ज्ञान भंडारो, ज्ञान भंडारो।
तस शिष्य खूबचन्द कहे दास चरणारो।
ये चौपन साल 'छोटीसादड़ी' स्तवन कियो त्यारी, स्तवन कियो त्यारी ॥७॥

[४४]

अरण श्रावक की दृढ़ता

(तर्ज.—मत जाना गिरनार नेम फिर क्या काम घन को)

समकित दृढ़ देखन सुर आया रे समकित दृढ़ देखन सुर आया।
धन धन अरणक श्रावकजी शुद्ध धर्म ध्यान ध्याया ॥
चंपा नगरी का बहु बायया मिल मनसूबो धारी।
लूण समुद्र में जहाज भमाया हुआ वेग त्यारी।
किराणो लीनो महाराज किराणो लीनो।
बहु जहाज लिये भर दीनो, अपनो भी जाबतो कीनो।
महूरत शुभ देख्यो चित चाया रे महूरत शुभ देख्यो चित चाया ॥१॥
जहाज चली समुदर के अदर मिल्यो जोग ऐसो।
हुआ उल्कापात गगन म अब धीजे कैसो।
घन बहु गाजे, महाराज घन बहु गाजे।
बहु दिशि वायरो वाजे, आभा में बीजली छाजे।
लोग बहु जहाज में घबराया रे लोग बहु जहाज में घबराया ॥२॥

कर पिशाच को रूप एक सुर ऊभो गगन मांही।
वार वार नाचे अति कूदे खड्ग हाथ मांही।
लार मुख पड़ती, महाराज लार मुख पड़ती।
दोई आँख्या लाल फरकती, मुख अगनी झाल निकलती।
भुजा दोई ऊंची कर आया रे, भुजा दोई ऊंची कर आया ॥३॥
सर्प लपेट्या तन ऊपर रूंड माल गला मांही।
[1]मनख्या [2]शियालां घुघू कंध पर लीना बैठाई।
कायर जन कंपे, महाराज कायर जन कंपे।
इम सुर अरणक ने जपे, थने धर्म छोड़वो नहीं कल्पे।
छुड़ावण मैं तुमने आया रे छुड़ावण मैं तुमने आया ॥४॥
मुख से कहे यह जिन धर्म खोटो तो कछु हुवे नांही।
नहीं तर जहाज [3]तोक ऊंचासे नाखूं जल मांही।
अरणक नहीं बीनो, महाराज अरणक नहीं बीनो।
सागारी अनशन कीनो, तब अवधिज्ञान सुर दीनो।
डग्यो नहीं मन वचन काया रे डग्यो नहीं मन वचन काया ॥५॥
दृढ़ धर्मी श्रावक ने जानी उपसर्ग सह्यु मेट्या।
[4]साचे रूप कर लियो देव खुद चरण आय भेट्यो।
बहुत हुलसाय महाराज बहुत हुलसाय।
पंचवर्ण फूल बरसाया, सबही अपराध खमाया।
शक्र इन्द्र गुण थारा गाया रे शक्र इन्द्र गुण थारा गाया ॥६॥
दो अमोल कुण्डल की जोड़ी श्रावक ने दीनी।
देव गयो निज स्थान आप दृढताई देख लीनी।
लावरा मांही महाराज लावरा मांही।
खूबचन्द लावणी गाई, मन वांछित सम्पति पाई।
चार सन्त चौमासा ठाया रे चार सन्त चौमासा ठाया ॥७॥

[४५]

कपिल ऋषि का लोभत्याग

(तर्ज़—पूर्ववत्)

वंदू नित कपिल ऋषिराया रे वंदू नित कपिल ऋषिराया।
धन्य पुरुष यह जगत बीच निज आतम समझाया॥

१ बिल्लियां। २ सियार। ३ उठा कर। ४ साक्षात्।

ब्राह्मण केरी जान उज्जैनी नगरी में रहतो।
तिहां नृप दो माशा सुवर्ण नित विप्र दान देतो।
विप्र की नारी महाराज विप्र की नारी।
कहे पीऊ से बारम्बारी, थे जावो होय मट त्यारी।
सुवर्ण दो माशा दे राया रे सुवर्ण दो माशा दे राया ॥१॥

सुवर्ण काज नारी की कहन से लेवण चित चावे।
दिन ऊगां यह जाय सदा पण हाथ नहीं आवे।
एक दिन आई महाराज एक दिन आई।
सूतो थो नींद के मांही, तब अर्द्ध रात्री आई।
नींद से चमक उठ धाया रे नींद से चमक उठ धाया ॥२॥

घर से निकल राह में जाता गिस्त घेर लीनो।
चोर जान फिर पकड़ भूप के हाजिर कर दीनो।
लाग्यो तब धुजने महाराज लाग्यो तब धुजने।
तू सांच कहदे मुझने, सब गुनाह माफ है तुम्हने।
विप्र से पूछे इम राया रे विप्र से पूछे इम राया ॥३॥

कपिल कहे कर जोड भूप से अरजी सुन लीजे।
सुवरण काज निकला निज घर से चाहे सो कीजे।
नृप खुश होई महाराज नृप खुश होई।
तू मांग मांग मुख सोई, मैं देवूंगा तुझ वोई॥
विप्र तब मनमें हुलसाया रे, विप्र तब मन में हुलसाया ॥४॥

कपिल ब्राह्मण मनमें चिन्तवे, तोलो एक केऊं।
अधिक अधिक इम लोभ बढ़ाया मैं तो राज मांग लेऊं॥
मन्न सुलटाया महाराज मन्न सुलटाया।
जिस कारण घर से आया, यह हाल जिन्हों से पाया॥
चेतन को ज्ञान दे समझाया रे चेतन को ज्ञान दे समझाया ॥५॥

परिणामों की लहर चढ़ी तब शुक्ल ध्यान ध्याया।
तत्क्षण राज सभा के मांई केवल पद पाया॥
महोत्सव सुर कीनो महाराज महोत्सव सुर कीनो।
ओघा पात्र हाजर कर दीनो मुनिराज होय यश लीनो॥
पांचसौ चोर को समझाया रे पांचसौ चोर को समझाया रे ॥६॥

कर्म खपाई मोक्ष पहुँचा कपिल ऋषिराया।
जिनके दर्शन काज मेरा तो मन निश दिन हुलसाया ॥
दर्श कब पाऊं महाराज दर्श कब पाऊं।
पद पांचों का गुण गाऊं शिवपुर का सुख नित चाऊं ॥
'खूबचन्द' यही मन भाया रे 'खूबचन्द' यही मन भाया ॥७॥

[४६]

ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती को धर्मोपदेश

(तर्ज:—द्रोण)

ब्रह्मदत्त द्वादशमा ,चक्री राया, महाराज जिन्हों को चित मुनिरायाजी।
भव सागर तिरन के काज बहुत हितकर समझायाजी ॥
एक कपिलपुर नगरी का बाग के माही,महाराज साधुजी विचरत आयाजी।
ब्रह्मदत्त चक्री पण आय-मुनि को शीश नमायाजी ॥
तब मुनिराज ब्रह्मदत्त को ज्ञान सुनाया,महाराज एक चित ध्यान लगायाजी।
मैं कहूँ ज्ञान के जोर सभी तुम सुनो बयानाजी ॥
आपां रहे पांच भव लार हेत नहीं टूटा,महाराज पहले भव दास कहायाजी।
दूजा भव में कालिंजर-पर्वत माही, महाराज मृग भव दोनों पायाजी ॥
वहां आयो पारधी देख साध कर बाण चलायाजी।
तिहां थकी मरी ने गंगा नदी के काठे, महाराज हंस का भव में आयाजी ॥
चौथा भव में चण्डाल तणे घर पुत्र कहायाजी।
तिहां कंठ कला से राग अलापन करता, महाराज नगर से भूप कढायाजी ॥
आपां दोनों मरन के काज पहाड़ पै चढ़िया,महाराज इंदे मुनिराज विराजाजी।
तिहां सुन्यो-आपां उपदेश अपन को गुरु निवाजाजी ॥
आपां दोनों गुरु के पासे संजम लीनो, महाराज, वैक्रय लब्धी पायाजी ॥
आपां दोनों विचरता लार शहर हस्तिनापुर आयाजी ॥
तिहां जाता गोचरी पडित देख पिछाने,महाराज,शहर से बाहर कढायाजी ॥१॥
तुम रोष तणे वश धूंवो वैक्रय कीनो, महाराज, भूपति सज कर आयोजी ॥
सेहनी रत्ना रानी पग पूंज सभी अपराध खमायोजी ॥
तुम देख रानी को रूप मुँह से यों बोले, महाराज, चित में ऐसी चाऊंजी ॥

मेरी करनी का फल होग मैं भी ऐसी रिद्ध पाऊंजी ॥
मैं वरजा नियाणो मत करो बात नहीं मानी,महाराज,आपां दोई सुरपद पाया
इन पांच भवों तक लार रहे थे दोनों, महाराज, छठा भव मांही जुराजी।
अब मानो हमारी कहन रास्ता लो मुगत का सूधाजी ॥
छः खण्ड का राज तुम तप संजम से पाया,महाराज,कारमी रिध को जानोजी
मत राचो भोग के मांय पड़ेगा फिर पछतानीजी ॥
तब चक्रवर्ती यों मुनिराज से बोले, महाराज, आपने क्या फल पायाजी ॥४
मुनिराज कहे पूरव भव करनी कीनी, महाराज, जिन्हों से यह रिद्ध पायाजी
मैंने परभव का डर आन भोग छिन में छिटकायाजी ॥
मैं संजम लेकर शिवपुर मारग लागो, महाराज तुमे समझावा आयोजी।
रहो छट्ठा भव में लार मनुष्य भव दुर्लभ पायोजी ॥
मुनिवर की बात नरपति एक नहीं मानी, महाराज भोग में भूप लुभायाजी।
चित मुनिराज चारित्तर चोखो पाली, महाराज मुनीश्वर मोक्ष सिधायाजी ॥
तिहां नहीं सोग संताप अचल सुख शिवपुर पायाजी।
कोई ऐसे मुनि से निशदिन ध्यान लगावे,महाराज जिन्होंसे आनंद वरतेजी ॥
यह मिले यश और मान काज सब इच्छित फलतेजी।
यों मन्दसोर में 'खूबचन्द' इम गावे, महाराज तीन सन्त चौमासा ठायाजी ॥

[४७]

श्रेणिक राजा को उपदेश

(तर्जः—पूर्व)

था मगध देश का श्रेणिक भूप मिथ्यात्वि,महाराज,जब से अच्छा दिन आयाजी ॥
कुछ हटा मोहनीय कर्म सुगुरु की संगति पायाजी ॥
कोई दिन नृपति चहुँ विधि सेना सज के, महाराज, सैल करने को धायाजी ॥
एक मंडीकुक्ष है बाग वहां खुद चलकर आयाजी ॥
तिहां मुनि अनाथी यतीधर्म के पालक, महाराज, रहे वैराग में छायाजी ॥
बैठे है ध्यान में मगन आप दरखत की छायाजी ॥
तब देख दूर से सुन्दर रूप मुनि का, महाराज, भूपति अचरज पायाजी ॥१॥

नहीं दूर नहीं नजदीक मुनि पै आया, महाराज, चरण में शीश नमायाजी ॥
यों पूछे भूप कर जोड़ आपकी कोमल कायाजी ॥
इस तरुण वय में जोग लिया किस कारण, महाराज, उत्तर देवे मुनिरायाजी ॥
मैं था अनाथ नरनाथ बात सुन विस्मय पायाजी ॥
अब मैं हूँ नाथ तुम करो मौज दुनिया की,महाराज,मनुष्य भव दुर्लभ पायाजी ॥
तू खुद अनाथ अब नाथ बने यहां किसका, महाराज, भूप सुन के घबरायाजी ॥
मैं युगल देश का नाथ आप कैसे फरमायाजी ॥
असली अनाथ का मतलब तू नहीं जाने, महाराज, कहूँ अब सुन महारायाजी ॥
मैं नगरी कौशाम्बी रहतो बहुत घर में थी मायाजी ॥
तेरे मात तात घर नार भ्रात भगनी का, महाराज था मुझ पर प्रेम सवायाजी ।
एक रोज हुई थी तन में बहुत असाता, महाराज विविध इलाज करायाजी ॥
जो कुटुम्ब नाथ होते तो क्यों नहीं दुःख मिटायाजी ।
मुझ लेना जोग जी आज रोग मिट जावे, महाराज नियम ऐसा दिल ठायाजी ॥
सब उसी रात नरनाथ रोग सब ही बिरलायाजी ।
दिन ऊगा तुरत जब संजम का पद लीना,महाराज जो अब मैं नाथ कहायाजी ।
फिर साधु की पहिचान मुनि बतलाई, महाराज बाद उपदेश सुनायाजी ॥
तब हुआ नृप को ज्ञान सभी अपराध खमायाजी ॥
उस ही दिन से नृप कुगुरु का संग छोड़ा, महाराज रंग समकित का छायाजी ।
शुद्ध देव गुरु को सेय तीर्थंकर गोत्र उपायाजी ॥
श्री नन्दलालजी मुनि तणाँ शिष्य गावे महाराज, विचरता सोजत आयाजी ॥

---

[४८]

कृष्ण की महिमा

(तर्ज:—ग्रोप)

ये कृष्ण और बलभद्र हुवे दो भाई,
महाराज आय यादव कुल मांईजी ।
लियो सुयश जग में खूब फैल रही कीर्ति सवाईजी ॥
यह द्वारावती एक नगरी थीर बखाणी,
महाराज, सूत्र में वर्णन चालेजी ।
तिहां कृष्ण भोगवे राज सुखे प्रजा ने पालेजी ॥

तिण अवसर विचरत नेमनाथ शिवगामी,
महाराज द्वारिका नगरी आयाजी।
एक सहस्र वन है बाग वहां उतरे जिनरायाजी॥
तब खबर हुई नगरी का लोग हुलसाया,
महाराज परिषदा वन्दन आईजी।
श्रीकृष्ण भूप पण यही बात सुन पाया,
महाराज तुरत भेरी बजवाईजी॥
ले सेना साथ गज होदे बैठ आवे हुलसाईजी।
तिहां आय सभा में नेमनाथ ने भेट्या,
महाराज प्रेम धर शीश नमायाजी॥
तिहां सेवा करे कर जोड़ भूप मन घणा उमायाजी॥
तब नेमनाथ भगवान देशना दीनी,
महाराज सुने सब चित्त लगाईजी।
तब वन्दना कर कर गई परिषदा सारी,
महाराज कृष्ण तब अर्ज गुजारीजी॥
कहो द्वारावती को हाल प्रभु तुम जानो सारीजी।
तब नेमनाथ भगवान् भेद समझायो,
महाराज सूत्र में शास्त्र बखाणीजी॥
नहीं कियो यहां विस्तार लावणी बढ़ती जाणीजी॥
तब कृष्ण भूप कर जोड़ वंदना कीनी,
महाराज गया निज नगरी माईजी।
तिहां राजसभा में आय सिंहासन बैठा,
महाराज द्वारिका नगरी मांहीजी॥
झट राजपुरुष को भेज यही सब बात सुनाईजी॥
जो भवी जीव संसार कारमो जानी,
महाराज प्रभु पै संजम लेवेजी।
ताकूं तीन खंड का नाथ हर्ष से आज्ञा देवेजी॥
हलु कर्मी होय सो मोह नींद से जागे,
महाराज पडहो तो दियो बजाईजी।
पद्मावती प्रमुख आठ कृष्ण की राण्यां,
महाराज कई कुवराण्या चेतीजी॥
कई राजा राजकुमार सुधारी नर भव खेतीजी॥

यों धर्मवृक्षाली करी दूरि तन मन से,
महाराज सफल नर भव कर लीनोजी।
होसी द्वादशमां जिनराय सूत्र में निर्णय कीनोजी ॥
श्री नन्दलालजी मुनि तणां शिष्य गावे,
महाराज जोड़ चितौड़ बनाईजी ॥

[४६]

सुमति कुमति का निर्णय

(तर्ज:—ख्याल)

ये कुमति सुमति का जिकर सुनो सब भाई,
महाराज दोनों अपनी हठ तानेजी।
है कौन अच्छी और कौन बुरी नर शठ क्या जानेजी ॥
मिथ्यात्व महल में चेतन की मति मोई,
महाराज कुमति कपटण जग मांईजी।
सुमति सु मिलन दे नांय आप लीनो विलमाईजी ॥
कहे सुमति पिया से यें कुमति का संग मांई,
महाराज रया छो क्यों मुरझाईजी।
आठ खंड पति सग लाग जिन्होंने दुर्गति पाईजी ॥
सुर असुर नर इन्द्र कई ऋषियों को,
महाराज कुमति छल लीना छानेजी।
कर रोष कुमति यों सुमति सोक से बोली,
महाराज रहम तुझ को नहीं आयाजी। ॥
जो राजा राजकुमार-थी जिनकी कोमल कायाजी।
हीरा पन्ना माणक मोती सुवर्ण का,
महाराज भरया भंडार सवायाजी।
जिनका निज भवन छुड़ाय जोग तैने दिलवायाजी ॥
ले झोली पातरा घर घर भीख मंगाई,
महाराज पड़ा जो हेरे पासेजी।

कहे सुमति सुमति तू सुन काले मुख वाली,
महाराज यहां तू किसे डरावेजी ॥
जितने दुनिया में पाप हैं ये सब आप करावेजी।
इस भव में तूं प्रत्यक्ष सुख बतावे,
महाराज, पीछे तू नर्क पठावेजी ॥
विष मिश्रित का दृष्टान्त साफ ज्ञानी फरमावेजी।
जो है नुगरा बेसमझ तेरे संग लागे,
महाराज पूछ जाकर पंडितांने जी ॥
जो लंकपति राजा रावण बलवंत की,
महाराज नीयत तेने पलटाईजी।
श्री रामचन्द्र महाराज की सीता नारि हराईजी ॥
तेने सोने की लंका का नाश कराया,
महाराज उसे दिया नर्क पठाईजी।
हो रहा जिनका बदनाम आज दुनिया के मांईजी ॥
तू बुरी बुरी फिर बुरी अरी दुर्मागन,
महाराज, संत जन तुझे बखानेजी ॥
कहे सुमति मैंने पापियों का पाप गमाया,
महाराज उन्हों का काज सुधाराजी।
कई मेल दिया सुरलोक कई को मोक्ष मझाराजी ॥
श्री नन्दलालजी मुनि तणां शिष्य गावे,
महाराज गुरु मेरा है उपकारीजी।
उपदेश-छटा जो सुने उनका दे भर्म निवारीजी ॥
जो गुरु कहे वो सीख हियामें धारो,
महाराज सुमति सुख देगा थानेजी ॥

[५०]

संयति राजा का त्याग

(तर्जः—ख्रोय)

कंपिलपुर का था नाम संयति राजा,
महाराज, मोह अज्ञान का छायाजी ॥
जब मिले गुरु गुणवान ज्ञान का रंग लगायाजी ॥

कोई दिन साथ लेकर चतुरंगी सेना,
महाराज, अहेडे करी चढ़ाईजी।
लिये पशु जीव को घेरे नृप जाकर वन मांहीजी॥
तब देख दूर से एक मृग का टोला,
महाराज कुछ भी नहीं सोचे अन्यायीजी।
बेरहम बाण दिया फैंक बींध दी जान पराईजी॥
उस केसरी वन में द्रुम की शीतल छाया,
जहां खड़े ध्यान धर गृधभाली मुनिराया।
सहे सीत ताप जिन की है कोमल काया,
रहे श्रमण धर्म में लीन सदा मन भाया॥
वो मृग भाग कर उसी स्थान पर आया,
महाराज वहां पर गिर गई कायाजी॥ १॥

पीछे से अश्व चढ़ भूप वहीं चल आया,
महाराज जो वही मृग दर्शायाजी।
फिर देखा मुनि को उसी वक्त भूपति भय पायाजी॥
तब खड़ा खड़ा महिपाल विचारे मन में,
महाराज कंप रही जिनकी कायाजी।
यह हैं तो मुनि तेजवान करू मैं कौन उपायाजी॥
सुख इच्छुक निश्चल धार अश्व छिटकाया,
कर जोड़ तुरत नजदीक मुनि के आया।
यों कहे जो कुछ मैंने अपराध कमाया,
सब माफ करो महाराज शरण में आया॥
मैं नहीं जानूं यह होगा मिरग सतों का,
महाराज पता यह तो अब पायाजी॥ २॥

मुनिराज ध्यान में मगन न कुछ भी बोले,
महाराज महीपति फिर भी डरियाजी।
मैं मूढ़ अज्ञानी जीव आप हो ज्ञान का दरियाजी॥
कंपिलपुर का जो मैं हूँ संयति राजा,
महाराज करो करुणा इस बिरियाजी।
क्यों होवे मुझे संतोष आज मम ही दुख टरियाजी॥
तब ध्यान खोल मुनि मधुर वचन फरमावे,
दिया अभयदान मुझ से तू भय मत पावे।

उत्तम नर भव हर वक्त हाथ नहीं आवे,
प्रजापालक हो क्यों पर जान सतावे।
दे अभयदान तू भी इन जीवों को,
महाराज जगत में ले ले भलायांजी ॥ ३ ॥

फिर मुनि कहे सुन नृप एक चित धर के,
महाराज सोच तू कहां से आयाजी।
जनमें सो मरे जरूर सूत्र में जिन फरमायाजी॥
तेरा राज पाट घर ठाठ अतवर सेना,
महाराज धरी रहेगा सब मायाजी।
जो अपनी अपनी मान यों ही सब छोड़ सिधायाजी॥
ये पुण्य पाप दो चीज साथ आवेगा,
तू कंचन वर्णा शरीर छोड़ जावेगा।
दुनिया गुण अवगुण होगा सो गावेगा,
जो किया यहां का आगे फल पावेगा।
सुन सन्तों का उपदेश नृप यों बोले,
महाराज मैं तो यों ही जनम गवांयाजी ॥ ४ ॥

अब कृपा कर मुझ भव सागर से तारो
महाराज हुआ महीपति वैरागीजी।
तब मिट गयो तिमिर अज्ञान सुरत सुगति से लागीजी॥
यह किनकी रय्यत और मैं हूं किनका राजा,
महाराज विचारे यों बड़भागी जी।
सुपना ज्यूं जान संसार राज रिद्ध छिन में त्यागीजी॥
गृद्धभाली जैसा गुरुदेव पुण्य से पाया,
फिर आप मुनि होई राज ऋषि कहलाया।
दिन रात गुरु का जो कुछ हुकम बजाया,
कर करके मेहनत गुप्त ज्ञान धन पाया।
फिर आज्ञा लेकर हो गये एकल बिहारी,
महाराज धर्म मारग दीपायाजी ॥ ५ ॥

मारग में क्षत्रिय राजअधीश्वर मिलिया,
महाराज मुनि का देख दीदाराजी।
मुनि कहो-आपको नाम कौन गुरु देव तुम्हाराजी॥

गुणमाली मुनि मेरे हैं धर्म आचारज,
महाराज सयति नाम हमाराजी।
मैंने सुनके सत्य उपदेश किया त्याग सगाराजी ॥
इतनी सुन क्षत्रियराज ऋषि फरमावे,
सच से विचरो मुनि आप जिधर दिल चावे।
दुनिया में बहुत कुपथ जो चले चलावे,
उनकी सगति हरगिज होनी नहीं पावे ॥
वैराग सहित दृढ रहो सदा सजम मे,
महाराज करो पराक्रम मन चायाजी ॥ ६ ॥
फिर सुनो मुनि हुए पहले जिन शासन में,
महाराज भरत सागर महारायाजी।
मघवजी सनतकुमार रूप अति सुन्दर पायाजी ॥
श्री शान्ति कुन्थ अरनाथ पुण्य प्रतापी,
महाराज छे छे प्रभु पदवी पायाजी।
महापद्म और हरिसेन करी एक छत्तर छायाजी ॥
दशमा चक्री जयसैन नाम कहलाया,
जाने छेछे खण्ड का राज तुरत छिटकाया।
लेकर सजम फिर आतम जोर लगाया,
यों कर्म काट केवल ले मोक्ष सिधाया ॥
तज दियर राज भंडार दशारण भद्दर,
महाराज मान जांका रहा सवायाजी।
प्रत्येकबुद्ध करकंडू परमुख राजा,
महाराज राज पुत्रों को दीनाजी ॥
हुवे ऐसे भूप जिन्होंने सजम लीनाजी ॥
कर अष्ट कर्म को अंत मोक्ष पद पाया,
महाराज काज आतम का कीनाजी।
मुनि निश्चल रहना आप मिथ्या जिन मारग भीनाजी ॥
देकर शिक्षा कर गये विहार ऋषिराया,
शुद्ध जोग पाय मुनि सयति मोक्ष सिधाया।
एक निम्बाहेडा शहर सुनो सब भाया,
उगणीसे सितर के साल चौमासा ठाया।
मन्दलाल मुनि है गुणी ज्ञान के सागर,
महाराज सत्य उपदेश सुनायाजी ॥ ८ ॥

[५१]

भृगु पुरोहित व इक्षुकार राजा

(तर्ज.—ड्रोण)

जो जान लिया संसार का सगपण यथा,
महाराज, कहो फिर कैसे रहेगाजी।
तब छाया जिगर वैराग तो आखिर संजम लेगाजी ॥
था राजपुरोहित इक्षुकार नगर का वासी,
महाराज, जिनके यसा घर नारीजी।
फिर युगल पुत्र पुण्यवान प्राण वल्लभ सुख कारीजी ॥
धन का पूरण भंडार बहु विध भरिया,
महाराज, कमी जिनके कुछ नांहीजी।
तब पुरोहित को यह बात याद पहले की आईजी ॥
एक दिन जैन के साधु कही मुझ ऐसी,
क्यों फिकर करे तूं पुत्र तणो फल लेसी।
चाहे जितना करो उपाय कमी नहीं रहसी,
वो बालपणे में आखिर संजम लेसी ॥
ये मोटी बस्ती जान विचरता साधु,
महाराज, आया फिर कैसे रहेगाजी ॥१॥
यों करके हृदय विचार पुत्र के कारण,
महाराज, वन में वास बसायाजी ॥
निज नन्दन को बुलवाय पुरोहित कैसे भरमायाजी ॥
कोई दिन यहां तुम देखो जैन के साधु,
महाराज, नजर मत उनके आनाजी।
दिल चाहे वहां चुपचाप हो के जल्दी छिप जानाजी ॥
रहे सीस उघाड़ो मूंडे मुँहपति बांधे,
वो बांचे सरस बखान दया मुख भाखे।
कर में झोली फिर कांख में ओघो राखे,
नित चाले हलवी चाल रोश नहीं आंके।
तुम भूल चूक उनकी संगति मत करना,
महाराज, तुम्हें भारी दुःख देगाजी ॥२॥

वे गुप्तपने शस्तर झोली :में राखे,
महाराज चाकू और छुरी कटारीजी।
बालक को पकड सिताब लेते वे गहना उतारीजी॥
पुरोहितजी तो बहकाया कसर नहीं राखी,
महाराज टाल्यो ना टले कठेईजी॥
पण पंथ भूल कर संत तुरत आगया वठेईजी॥
तब देख मुनि को भगु पुरोहित घबराया,
मैं जिनके कारण शहर छोड यहां आया।
इनको यहां का शठ मारग कौन बताया,
जो खैर हुआ सो हुआ मन समझाया॥
अब ऐसा करूं उपाय दाव नहीं लागे,
महाराज, बात सब बनी रहेगाजी ॥३॥
तब भगु पुरोहित झट उठ मुनि में आया,
महाराज, अरज करके घर लायाजी।
सब विधि सहित निर्दोष आहार पानी वहरायाजी॥
कर जोड़ कहे तुम सुनो अरज गुरु ज्ञानी,
महाराज, मति दूजे घर जावोजी।
इस गली में होकर आप यहां से वेग सिधावोजी॥
मेरे युगल पुत्र नादान समझते नाहीं,
अविनीत कुपातर सन्तों को दुखदाई।
मैंने पूर्वजन्म में कीनो पाप कमाई,
जो ऐसे पुत्र मेरे घर जनमें आई॥
सुन बात गली में तुरत साधुजी चाल्या,
महाराज, यहां कुछ लाभ मिलेगाजी ॥४॥
तब दोनों पुरोहित का पुत्र खेलता रमता,
महाराज, गली के सन्मुख मिलियाजी।
अहो पंथव नजर लगाव यह कुण आवे चलियाजी॥
तब देख मुनि को तुरत येहूं डर भागा,
महाराज, पंथ जंगल को लीनोजी।
एक मोटो दरखत देख ऊपर विसामो कीनोजी॥
तिण दरखत नीचे दोनों मुनि चल आया,
शुद्ध क्रिया करके बैठे शीतल छाया।

तिहां दोनों भाई की घर घर ढूंढे काया,
पण मांच फूट का हाल भेद नहीं पाया।
ऊपर से नीचे देखे एक दृष्टि से,
महाराज, तमस अब दूर हटेगाजी ॥४॥
मुनिराज करे अब आहार बहुत यत्ना से,
महाराज, : प्राणी का प्राण उगारेजी।
यह दयावान गुणवान मनुष्य को कैसे मारेजी ॥
ऐसे तो मुनि हमने पहले कहां देखे,
महाराज, ध्यान घोलो चित्त लाएयोजी।
तब जातीसुमरण ज्ञान पाय पूरब भव जाएयोजी ॥
उतरे नीचे मुनिवर को शीश नवाया,
अहो भाग्य आज जंगल में दर्शन पाया।
क्या करें गुरु मां बाप हमें बहकाया,
तो तुम से डर के यहां भाग चल आया।
गृहवास त्याग तुम पासे संजम लांगा,
महाराज, कौन अब रोक सकेगाजी ॥६॥
कर नमस्कार झट मात) तात पै आया,
वो निर्दोषी मुनिराज जिन्हों में दोष बतायाजी ॥

(तर्ज:—एक कही)

साधुजी सकल विचारी, तेतो पूरण पर उपकारी हो ॥
पिताजी गजब करी ॥१॥
वे बोले मधुरा वाणी लेवे निर्दूषण अनपाणी हो ॥ २ ॥
लाधे अनलाधे समता राखे पण दीन वचन नहीं भाखे हो ॥ ३ ॥
ना किण ने दुख उपजावे ते तो पाप लग्या पछतावे हो ॥ ४ ॥
गुरु गुणवन्त विवेकी मैं तो प्रत्यक्ष लीनो देखी हो ॥ ५ ॥

(तर्ज —द्रोण)

अब दो आज्ञा मैं संजम को पद लूंगा,
महाराज नहीं तुम से ललचाताजी।
है कौन पुत्र कौन मात तात झूठा सब नाताजी ॥
सुन बात पुरोहित के आंसू आगये नैना,
यों कहे पुत्र से तात मोह वश वैना।

नित नये करो शृङ्गार पहनो गहना,
तुम गृहवास में पालो धर्म की ऐना।
फिर तुम साथे मैं भी संजम लेऊंगा,
महाराज ऐसी फिर कौन कहेगाजी ॥ ७ ॥

कहे पुत्र धर्म में ढील कभी नही करना,
महाराज तात हो गये वैरागीजी।
तब जसरा नामा नार पति से बोलन लागीजी ॥
ये दोनों पुत्र तो निश्चय सजम लेगा,
महाराज होन गत कौन मिटावेजी।
जो जैन मुनि के बैन कही खाली किम जावेजी ॥
नहीं माने पुरोहित पुरोहितानी मन्न विचारे,
मुझ पति पुत्र निज आतम कारज सारे।
घर मांही रह कर यों ही जनम कौन हारे,
मुझे लेना संजम भार इन्हों के लारे ॥
धन माल त्याग कर चारों ही संजम लीनो,
महाराज कीर्ति क्यों नहीं पसरेगाजी ॥ ८ ॥

तब इक्षुकार नृप भग्गु पुरोहित को छंड्यो,
महाराज सभी धन माल मंगायोजी ॥
भर भर गाड़ा के मांय लाय भंडार नखायोजी।
ये सुनी बात रानीजी कहे राजा से,
महाराज, काम आछो नहीं कीनोजी।
इन बातां शोभा नांय दान दे पाछो लीनोजी ॥
यों बिना विचारे बात हमें क्यों कहवो,
तो जान बूझ कर फिर घर में क्यों रहेवो।
सब विषय भोग तज जल्दी संजम लेवो,
हुवे आतम का कल्याण धर्म सुध सेवो।
ऐसा तो वचन हलुकर्मी जीव को लागे,
महाराज, पाप से वही डरेगाजी ॥ ९ ॥

कमलावती रानी संजम की दिल धारी,
महाराज, भूप निज मन समझावेजी।
एक धर्म बिना कोई और जीव के संग न आवेजी ॥

यों कर विचार राजा रानी मिल दोई,
महाराज, भोग छिन में छिटकाणी।
अनुक्रमे होई जीव धाम मुक्ति का पायाजी॥
हो गये सिद्ध भगवान नमो मन माई,
जिनके सुमरण से कमी रहे कुछ नाई।
ये दिल्ली शहर उगणीसे सडसठ माई,
मगसर शुद्ध धरम के दिन जोड़ बनाई।
श्री नन्दलालजी मुनि तणा शिष्य गावे,
महाराज, गुणी को ज्ञान लगावाजी ॥१०॥

[५२]

थावच्चा पुत्र

(तर्ज —लावणी)

जो होवे पुन्यवान जीव, उपदेश उसी को तुरत लगे।
संसार त्याग के मुनि पद धार मोक्ष के पंथ लगे॥
सोरठ देश द्वारिका नगरी धनपति देव बनाई है।
सुरलोक सरीखी सूत्र में वरणन कर दर्शाई है॥
करे राज नंदजी के लाल आनन्द मांही वर्ताई है।
मध अर्द्ध भरत में अखण्डित आण जिन्हों की छाई है॥
उस वक्त श्री नेमजी करते हुवे उपकारजी।
सहस्र अठारा साथ ले, मुनिराज का परिवारजी।
नन्दन वन उद्यान में जहां द्वारिका के बहारजी॥
प्रभुजी पधारे विचरते सुर बोले जय जयकारजी।
हुई खबर शहर में बहु जन आनन्द पाया॥
जिनराज चरण भेटन को मन उमाया।
वस्त्राभूषण सज श्रृङ्गार सवाया॥
सब एक दिशी में मिल मिल वन्दन धाया।

सुनकर कोलाहल शब्द कृष्णजी सोचे,
महाराज तुरत भेरी बजवाईजी।
ले साथ बहुत परिवार आया नन्दन वन माईजी॥
श्री नेमनाथ जिनवर का दर्शन पाया,
महाराज चरन वन्दे धन माईजी।
करे सन्मुख सेवा आप बैठ, परिषदा के माईजी॥
थावच्चा कुंवर भी आविया, सुनो गुणी जन हो२
इभ्य सेठों को नन्द, गुणी जन हो ॥१॥
वेकर जोड जिनंद ने, सुनो गुणी जन हो२
बैठा शीश नमाय गुणी जन हो ॥२॥
दीनी धर्म देशना सुनो गुणी जन हो २
श्री नेमनाथ भगवान गुणी जन हो ॥३॥
प्रसन्न हुई सारी सभा सुनो गुणी जन हो २
खुलिया अन्तर नैन गुणी जन हो ॥४॥
वाह वाह वाणी जिनन्द आप की,
नर नारी गुण करन लगे ॥५॥
वाणी सुन सब गई परिषदा कुंवर थावच्चा अर्ज करे।
प्रभु संजम लेसुं माता से मांगू आज्ञा जाऊं घरे॥
जिम सुख हो तिम करो धर्म में ढील किया नहीं गर्ज सरे।
फरि तुरत वन्दना आया निज भवन माता के पांव परे॥
वाणी श्री जिनराया की सुनी आज मैंने मातजी।
साफ झूठा संसार ये स्वप्ना सम दर्शातजी॥
संयम की मुझ आज्ञा दीजे जननी खुशी के साथजी।
जो जो घडी अनमोल ये जावे सो फिर नहीं आतजी॥
ये सुनी बात जब मात तुरत मुर्छाई।
हुई सावचेत अन्तरमुहूर्त के मांई॥
गद्गद बोले यों नैना जल वर्षाई॥
मत काढो बात मैं जीऊं जहां लग ताई॥
थावच्चा कुंवर कर जोड अभी मुख बोले,
महाराज, काल यह किस दिन आवेजी।
मैं नहीं जानुं यह बात, मात पहले कुण जावेजी॥

बत्तीस नार इदम सेठों की परणाई,
महाराज, रूप रमा दर्शावेजी।
धन का भरिया भंडार रिद्ध छोड़ी किम जावेजी॥
भोग अशुची असाश्वता,सुनो गुणी जन हो२
जो राचे मूढ़ गंवार गुणी जन हो॥ १॥
पाई स्वार्थ की साह्यी सुनो गुणी जन हो २
रत्न जड़ित का महल गुणी जन हो॥ २॥
साधपणो नहीं सोहिलो गुणी जन हो २
चलनो खांडा की धार गुणी जन हो॥ ३॥
करना मुश्किल लोच का सुनो गुणी जन हो२
यह है सुकुमार शरीर गुणी जन हो॥ ४॥
भुजा करि भव सागर ज्यों तिर,
सूरवीर कोई पार लगे॥ २॥
सुनो मात जो सुख अभिलाषी, तिन को कठिन दे दर्शाई॥
संजम में शूरा, उनको तो कुछ भी है मुश्किल नांई॥
दे दे न्याय थावच्चा माता अच्छी तरह लिया समझाई॥
पर एक न मानी, पुत्र को आखिर आज्ञा फरमाई॥
भेटना हरिराय के नजराना कीना लायजी॥
कहो मातजी किम आवीया दीजे मुझे दर्शायजी॥
प्राणप्यारा पुत्र आज गया वंदवा जिनरायजी॥
वाणी सुनतां प्रभु की वैराग्य दिल में छायजी॥
मैं दिया बहुत दृष्टांत कसर नहीं राखी॥
नहीं माना एक समझा समझा कर थाकी॥
फिर दीनी आज्ञा उसको संजम लेवा की॥
है मुझ इच्छा दीक्षा महोत्सव करवा की॥
मैं छत्र चंवर के काज राज पै आई,
महाराज, लवाजमा भी बख्शावोजी॥
सुन बात कहे हरिराय मात अपने घर आवोजी॥
इक पुत्र को दीक्षा महोत्सव मैं करसूं,
महाराज, और होय सो फरमावोजी।
कहे सफल मनोरथ आज कोई शंका मत लावोजी॥

राजन पति महाराजवी, सुनो गुणी जन हो २
बस यही अरज महाराज, गुणी जन हो ॥१॥
इम कह निज घर आगई, सुनो गुणी जन होरे
तब पीछे से हरिराय, गुणी जन हो ॥२॥
बहु परिवार से परवरया, सुनो गुणी जन होरे
हो गज हौदे असवार गुणी जन हो ॥३॥
थावरचा माता के घरे, सुनो गुणी जन होर
आया त्रिखंडका नाथ गुणी जन हो ॥४॥
दिया मात सन्मान जहां पर गोविन्द के गुण होने लगे ॥१॥
लाल बुलाकर लेई गोद में शिर पर हरिजी हाथ धरे ॥
संजम मत लेवो, भोगवो रिद्ध मौज में रहो परे ॥
द्वारिका नगरी स्वर्ग सरीखी, देखे जिन्हों का नैन ठरे ॥
जहां खुशी तुम्हारी, करो दिल चाहे कोई नहीं दखल करे ॥
सुख से बसो नगरी विषे तुम मुझ भुजा की छायजी ॥
कहो साफ दिल खोल के मुझ से तू मत शरमायजी ॥
जो कुछ भी तकलीफ तो तुम दीजिये दर्शायजी ॥
जिसका उपाय वह मैं करूं मन रोग ही मिट जायजी ॥
तब कहे कुंवर कर जोड़ अरज सुन लीजे ॥
मेरे जन्म मरण के दुःख दूर कर दीजे ॥
जो ऐसी दवा देने में ढील नहीं कीजे ॥
मैं मानूंगा उपकार आप यश लीजे ॥
जो घर बैठा सहज ही रोग मिट जावे,
महाराज, तो फिर संजम क्यों लेनाजी ।॥
क्षुधादिक जो बावीस परीषह नाहक में सहनाजी ॥
सुर, असुर, मनुष्य, की भी ये सामर्थ नाहि,
महाराज, कृष्ण यों बोले बैनाजी ॥
निज करनी के अनुसार मिटे सब दुख की सेनाजी ॥
इसीलिये महाराजवी, सुनो गुणी जन हो २
मैं लेऊं संजमभार गुणी जन हो ॥
कर्म रोग सब मेटने, सुनो गुणी जन हो २
मैं जाऊं मोक्ष मझार गुणी जन हो ॥२॥
मुझ को मना मत कीजिये, सुनो गुणी जन होर
दो आज्ञा फरमाय गुणी जन हो ॥३॥

इतनी बात सुनी हरि, सुनो गुणी जन हो२
तब जाग्यो दृढ़ वैराग्य गुणी जन हो ॥४॥
जिम सुख हो तिम करो आल हरि बार बार यों कहन लगे ॥४॥
आज्ञाकारी पुरुष भेजकर कृष्ण पडहो दियो बजवाई।
यह कुंवर थावच्चा लेवे वैराग्य इनी विध हटकाई ॥
इनके साथ नरपति आदि से सेठ और सारथवाई।
कोई संजम लेवे हरि का माफ हुकम उनके ताई ॥
जो जो स्वजन तज नीकले पिछले की सार सम्भालजी।
यथा योग्य जिम सुख हुवे तिम करसी श्री गोपालजी ॥
सहस्र पुरुष त्यागी हुवे मोह ममत दीनो टालजी।
कृष्णजी महोत्सव कीयो बड़ी धूम तत्कालजी ॥
श्रीनेमनाथ जिनवर से संजम लीना।
दुनिया का झगड़ा सभी दूर कर दीना ॥
छति रिद्धि त्यागकर उत्तम कारज कीना।
करी धर्म दलाली लाभ हरिजी लीना ॥
कर विनय गुरु से चौदह पूरब भणीया,
महाराज आज्ञा जिनवर की पायाजी।
एक सहस्र शिष्य ले लार विहार कीनो मुनिरायाजी ॥
जहां गये तहां जय विजय धर्म की कीनी,
महाराज जगत में सुयश पायाजी।
फिर अनशन कर पुण्डरीक गिरि से मुक्ति सिधायाजी ॥
छठे अंग[1] अधिकार छे सुनो गुणी जन हो २
पंचम अध्ययन मुझार गुणी जन हो ॥ १ ॥
से अनुसारे लावणी सुनो गुणी जन हो २
करी पंच रंगत में त्यार गुणी जन हो ॥ २ ॥
महा मुनि नन्दलालजी सुनो गुणी जन हो २
गुरु दीनो हुकम फरमाय गुणी जन हो ॥ ३ ॥
संवत उनीसे इकोतरे सुनो गुणी जन हो २
कियो चार ठाणा चौमास गुणी जन हो ॥ ४ ॥
देश हाड़ोती कोटा शहर जहां धर्म ध्यान का ठाट लगे ॥ ५ ॥

१ सती—मौजूदा। २ ज्ञाताधर्मकथा नामक शास्त्र।

[५३]

प्रद्युम्नकुंवर चरित्र

(तर्ज:—द्रोण)

यह प्रजन कुंवर की प्रगट सुनो पुन्याई,
महाराज मात रुकमणि का जायाजी।
ज्याने भोग छोड़ लिया जोग रोग कर्मो का मिटायाजी॥
एक सोरठ नामा देश द्वारिका नगरी,
महाराज राज पाले हरि रायाजी।
था तीन खंड का नाथ जिन्हों का पुण्य सवायाजी॥
रुकमणि आप की प्रेमवती पटराणी,
महाराज जिन्हों का नन्दन नीकाजी।
हसु प्रजन कुंवरजी नाम हुआ जादव कुल टीकाजी॥
निज मात बात सगपण की दिल में धारी,
महाराज दूत को तुरत बुलायाजी।
तूं जा कुन्दनपुर राय रुकमियां पासे,
महाराज युगल कर जोड़ बधानाजी॥
अरु कुशल क्षेम हैं सभी यहां का हाल सुनानाजी।
फिर कहिजे वल्लभ वेदरवी तुम कुंवरी,
महाराज तुम्हें इतनो यश लीजोजी॥
यों कही आपकी बहिन प्रजन कुंवर को दीजोजी।
ले समाचार कुन्दनपुर दूत सिधाया,
महाराज भूप को आय बधायाजी॥
दिया पत्र नृप के हाथ प्रेम से खोला,
महाराज बांचता रोश भराईजी।
रे दुष्टन! तुमको पत्र भेजतां लाज न आईजी॥
अब चन्देरी को शिशुपाल नृप मोटो,
महाराज जिन्हों से करी सगाईजी।
वो आया परणवा काज युक्ति से [1]जान सजाईजी॥

---

१ बरात।

मैं किया बहुत भगिनी का हर्ष बधावा,
महाराज जिन्होंने कपट कमायाजी।
मिल सुवा भतीजी शुभ पगे गोविन्द को,
महाराज बाग में लिया बुलाईजी।
वहां पूजा के मिस जाय आप हरि संग सिधाईजी॥
कर गई फजीता दुर्जन लोग हंसाया,
महाराज वंश में छाप लगाईजी।
केई शूरवीर सरदार जिन्हों की बात गमाईजी॥
वो मेरी तरफ से मर गई बहिन रुकमणि,
महाराज रोष कर शब्द सुनायाजी।
मुझ इष्ट कान्त वल्लभ वेदरवी कुंवरी,
महाराज डूम को दूं परणाईजी॥
पण भूल चूक मैं कभी न दूं यादव कुल मांहीजी॥
यूं कही दूत को तुरत विदा कर दीना,
महाराज द्वारिका नगरी आयाजी।[1]
रुक्मणी पूछे धर प्रेम दूत सब हाल सुनायाजी॥
यों सुणी विहर की बात हरि पटराणी,
महाराज केइ मन धड़ा उठायाजी।
या बात सुण्या विन किम रहे मामा राणी,
महाराज और जादव की नारीजी॥
जो जाणेगा तो आज हंसी करसी गिरधारीजी।
यों बैठी करत विचार महल के मांही,
महाराज कुंवर इतने चल आयाजी।
दो हाथ जोड़ धर प्रेम मात को शीश नवायाजी॥
क्यों फिकर करो मुझ मात बात फरमावो,
महाराज, करूं सब मन का चायाजी।
तब माता रुक्मणी कही हकीकत सारी,
महाराज, कुंवर यूं कहे मैं जाऊंजी।
जो है मामा को वचन वोही मैं पार लगाऊंजी॥
मुझ मामा की जो है वेदरवी कुंवरी,
महाराज, परण कर निज घर आऊंजी।

---

१ बहाना।

सुए मात आप के लाय वांदणी[1] पाय लगाऊंजी ॥
कर विनय सर्व ही मन का सोच मिटाया,
महाराज, कुंवर अश्व करत चढ़ायाजी।
एक शाम्ब कुंवर श्री जाम्वती का जाया,
महाराज, जिन्हों से राय मिलाईजी।
है खीर नीर सम वीर दोउन के प्रीति सवाईजी ॥
मिल सलाह करी यूं युगल वीर की जोड़ी,
महाराज, तुरत कुन्दनपुर आयाजी।
विद्या के जोर से आप डूम का रूप बनायाजी ॥
केइ घोड़ा ऊंट और साथे पाड़ा पकरा,
महाराज, बाग में डेरा लगायाजी।
वहां दोनों भाई ऊठे आप मध्य राते,
महाराज वंशी और वीणा बजावेजी।
छः राग और छत्तीस रागिनी मिल कर गावेजी ॥
सुन राग कई जंगल का जीव लुभाना,
महाराज, राग पसरयो पुर मांईजी।
सब राजादिक नर नार सुने एक धुन्न लगाईजी ॥
परभात हुआ तो मुख मुख शब्द उचारे,
महाराज, राग में खूब रिझायाजी।
यों चारों दिशि में फिरता राग अलापे,
महाराज, कौन यह कहाँ पर गावेजी।
वन मांय ढूंढता फिरे लोक पण भेद न पावेजी ॥
इम करता इक दिन कुन्दनपुर में आया,
महाराज, फिरे संग लोग लुगाईजी।
या सुनी बात नरनाथ डूम को लिया बुलाईजी ॥
तिहां बैठा जाजम डाल भूप के आगे,
महाराज, मनुष्य नहीं जाय गिनायाजी।
वो वेदरवी कुंवरी पिण देखन आई,
महाराज, तात लें गोद बिठाईजी।
हरिनन्द देख कर रूप मगन होगयी मन मांईजी ॥

---

[1] बहु।

तब प्रजन कुंवरजी तान मिलाकर गावे,
महाराज, राग में राग सुनावेजी।
एक समझे कुंवरी सुने लोक पिण भेद न पावेजी ॥
प्रजन कुंवर कहे तान में सुन कुंवरी ए २
हूँ नहीं ढोली दमाम कुंवरी ए ॥ १ ॥
देवपुरी सम द्वारिका सुन कुंवरी ए २
तिहां राज करे घनश्याम कुंवरी ए ॥ २ ॥
माता रुक्मणी माहरी सुन कुंवरी ए २
उनको नन्दन जाण कुंवरी ए ॥ ३ ॥
जादव वंश बड़ो घणो सुन कुंवरी ए २
तिऊं खण्ड में आण कुंवरी ए ॥ ४ ॥
जो मन होवे ताहरो सुन कुंवरी ए २
तो मुझे करो भरतार 'वरी ए ॥ ५ ॥
तुम हम जोड़ी मारखी सुन कुंवरी ए २
तुष्ट हुआ करतार कुवरी ए ॥ ६ ॥
मेरे जिसा वर नहीं मिले सुन कुंवरी ए २
सर्व विद्या परवीण कुंवरी ए ॥ ७ ॥
जो चूकी इण अवसरे सुन कुंवरी ए २
तो [१]झूरेगी दिन रैण कुंवरी ए ॥ ८ ॥
डाला डोली मन क्यों करे सुन कुंवरी ए २
तूं मन को भर्म मिटाय कुंवरी ए ॥ ९ ॥
डूम बना तुझ कारणे सुन कुंवरी ए २
आया रूप छिपाय कुंवरी ए ॥ १० ॥
विद्या से आपनो रूप लिया पलटाई,
महाराज देख कुंवरी मन भायाजी ॥ ११ ॥
जितने आलिम वहां राज सभा में आये,
महाराज सभी को डूम दिखावेजी।
पिण असली राज कुंवार नजर कुंवरी के आवेजी ॥
तन मन से गाय बजाय लिया विश्रामा,
महाराज डूम से पूछे रायाजी।
तुम कौन देश में बसो कहो तुम कहां से आयाजी ॥

---

१ रोएगी ।

है सोरठ नामा देश द्वारिका नगरी,
महाराज वहां से हम चल आयाजी ॥ १२ ॥
तब राय रुखमियो कहे हूम तुम मांगो,
महाराज सोही तुम को मिल जावेजी।
तप कुंवर कहे धन माल हमारे कुछ नहीं चहावेजी ॥
मैं धोऊ जणा हाथों से करां रसोई,
महाराज हमें या कुंवरी दीजेजी।
तो खटपट सब मिट जाय आप इतनो यश लीजेजी ॥
सुन बात भूप के रोश जोश चढ़ आया,
महाराज धक्का दे बहार कढ़ायाजी ॥ १३ ॥
महेला में सूती कुंवरी आप अकेली,
महाराज सजी शृङ्गार सवायाजी।
या है रजनी की वक्त हुवे अब मन का चहायाजी ॥
तब राजसुता यों मन्न ही मन्न विचारें,
महाराज तुम्हें हरिनन्द कहाओजी।
जो जाणो मन की बात यहां पर जल्दी आओजी ॥
हिम्मत करके बेधड़क आप मुझ व्याहो,
महाराज, होय सब ही मन चायाजी।
सुण प्राणनाथ कहूँ बात ईश्वर की साखे,
महाराज, यदि तुम नहीं आओगाजी।
तो अब हत्या को पाप साफ कहूँ तुम सिर होगाजी ॥
विद्या से जाण झट कुंवर तिहां चल आया,
महाराज बींद का वेश बनाईजी।
कुंवरी को पकड़ कर हाथ नींद से तुरत जगाईजी ॥
हथलेवो जोड़कर विधी व्याह की सारी,
महाराज, कुंवर फेरा फिर आयाजी।
कुंवरी के पास दिन ऊगत दासी चाई,
महाराज, अति मन अचरज पाईजी।
परणेतु वेश लख तुरत राय को बात जणाईजी ॥
सुनते ही दौड़ राजा राणी मिल आया,
महाराज, मौन कुंवरी कर लीनीजी।
रे वंश लजावणहार ते भी चोखी गति कीनीजी ॥

तुम कारण दुष्टन ! वचन डूम से हारा,
महाराज, वहिन से वैर बसायाजी।
कर कोप दूत को भेजा उपवन मांही,
महाराज डूम को लिया बुलाईजी।
निज पुत्री दीनी सौंप नहीं सोची दिल मांईजी॥
कुंवरी को लेकर डूम बाग में आया,
महाराज, मोहनी पीछी लागीजी।
मैं दी डूमड़ को सौंप बात आछी नहीं लागीजी॥
पीछी लेवन को भूप बाग में आया,
महाराज डूम का पता न पायाजी।
बैठा गम खाई भूपति बात बिचारी,
महाराज कुंवर तब फौज बनाईजी॥
दिया वन के बीच पड़ाव राय को बात जणाईजी।
सुन मामाजी मैं प्रजन कुंवर चढ आया,
महाराज मुझे ; कुंवरी परनावोजी॥
या करो युद्ध तो आओ सामने जोर जनाओजी।
या सुणी बात नरपति मन में पछतावे,
महाराज करूँ अब कौन उपायाजी॥
जो करूँ युद्ध तो वैर बसेगा दुगुणा,
महाराज और जादव को पूरोजी।
है कौन अधिक बलवान इन्हों से सूर सनूरोजी॥
मैं प्रजन कुंवर से जाय करूँ नरमाई,
महाराज बात जब रहे हमारीजी।
यों करके खूब विचार आप झट हुआ तैयारीजी॥
जब मामाजी को आता देख कुंवर के, ।
महाराज हिये अति हर्ष भरायाजी।
मारग में कियो मिलाप हेत कर लीन्हों,
महाराज तुरत तम्बू में पेठाजी।
मामाजी और भाणेज दोऊ आसण पर ,बैठाजी।
इतने तो उठ वेदरभी कुंवरी आई,
महाराज तात को शीश नमायाजी॥
मिट गयो सकल जजाल प्रेम से बढे वधायाजी।

पुनि करी ब्याह की रीति दायजो दीन्हों,
महाराज सीख ले कुंवर सिधायाजी ॥
श्री प्रजन कुंवर कर फतह द्वारिका आया,
महाराज कामण्यां कलश बधावेजी ।
घर घर में मंगलाचार लोक मुख मुख यश गावेजी ॥
निज मात तात को नमे कुंवर-कर जोड़ी,
महाराज कीर्ति पसरी पुर मांईजी ।
इन वोही वेदरथी परण मात के पांव लगाईजी ॥
तब मात रुक्मणि मगन हुई मन माही,
महाराज खुशी का पार न पायाजी ।
निज भामणि संग में राजकुंवर सुख भोगे,
महाराज करी मोजां मन मानीजी ॥
फिर लीन्हा संयम भार सुनी जिनवर की वानीजी ।
कर विनय थोग द्वादश कंठे कर लीना,
महाराज तपस्या खूब कमाईजी ॥
था राजकुंवर सुकुमाल जिन्हों को यह अधिकाईजी ।
जिन सोलह वर्ष का पूरण संयम पाला,
महाराज वास मुक्ति का पायाजी ॥
संवत उगणीसे साल कहूं चौसट का,
महाराज धन्न तेरस रविवारेजी ।
यह करी जोड़ परमान ढालसागर अनुसारेजी ॥
एक निम्बाहेड़ा शहर दीपता भारी,
महाराज सभी श्रावक सुखदाईजी ।
हुआ धर्म ध्यान का ठाठ खूब चौमासा मांईजी ॥
श्री नन्दलालजी महाराज तणां शिष्य गावे,
महाराज ज्ञान मुझे गुरु बतायाजी।

[५४]

शाम्बकुंवर चरित्र

(तर्ज:—ख्रोप)

यह प्रजन कुंवर का शाम्ब कुंवर लघु भाई,
महाराज रोहुल की माता न्यारीजी।
है तीन खंड का नाथ तात जिनका गिरधारीजी॥
या युगल वीर की जोड़ दीपती भारी,
महाराज प्रेम आपस में पूराजी।
चले निज कुल की मर्याद घड़ी एक रहे न दूराजी॥
खुश होय एक दिन प्रजन कुंवरजी बोले,
महाराज, भाई तुम शंक न राखोजी।
जो मन की इच्छा होय वही मुझ आगे भाखोजी॥
कर अरज तात से वोही चीज दिलवाऊं,
महाराज मांग जो मरजी थारीजी।
कहे शाम्ब कुंवर कर जोड़ी बात सुन भाई,
महाराज और मुझ कुछ नहीं चहावेजी॥
दिया वचन लगाने पार आप फिर नहीं पलटावेजी।
सुरलोक सारखी है यह द्वारिका नगरी,
महाराज चित्त में खूब उमावोजी॥
कहूं छे महीना तक राज तात से आप दिलावोजी।
लीजे इतनो यश आश सुफल कर दीजे,
महाराज यही बस अरज हमारीजी॥
सब प्रजनकुंवर, ले साथ शाम्ब कुंवर को,
महाराज सभा में दोउ मिल आयाजी।
अति हर्ष सहित कर जोड़ तात को शीश नवायाजी॥
दीनो आदर हरिराय प्रेम से पूछे,
महाराज कहो जो भाव तुम्हाराजी।
करूं सफल मनोरथ आज वचन नहीं फिरे हमाराजी॥
सुन तात आपसे और कछू नहीं मांगूं,
महाराज कुंवर यों कहे विचारीजी।

मैं सोलह वर्ष से आय आपसे मिलियो,
महाराज आज तक कभी न जाचाजी।
अब मांगू सो वक्सवाय समाले आपकी वाचाजी॥

इस द्वारा मति का राज मास खट तांई,
महाराज शाम्भ कुंवर ने दीजेजी।
क्यों धनी रहे सब बात जगत में यो यश लीजेजी॥

सुन बात द्वारिका नाथ वचन का बन्ध्या,
महाराज तुरत दीन्हीं मुख त्यारीजी।
अब शाम्भ कुंवरजी राज मौज से पाले,
महाराज खूब धन धन कहलावेजी॥
पिण तजी लाज मर्यादा आप कुव्यसन कमावेजी।

जो उत्तम कुल की नार नजर में आवे,
महाराज जिन्हों से करत अनीतिजी॥
ऐसे पुरुषों का क्यों न होय जग बीच फजीतीजी।
नगरी का लोक मिल सब यों सलाह विचारी,
महाराज मुकुन्द से अर्ज गुजारीजी॥

सुन बात कृष्ण लोगों को दिया दिलासा,
महाराज आप महलां में आयाजी।
सब जाम्बवती को नावड नन्द का हाल सुनायाजी॥
तब तड़क फड़क कर महाराणीजी बोले,
महाराज विनय इतनी सुन लीजेजी।
ये लोग उडावे बात आप तो चित्त न दीजेजी॥
यदि झूंठ होय तो प्रत्यक्ष आज दिखाऊं,
महाराज उठ चल संग हमारीजी।
तब जाम्बवती झट उठ पति संग चाली,
महाराज हरिजी हो गया आगेजी॥
खुद बहुत वर्ष का बुड्ढा बाबा बन गया सागेजी।
उस जाम्बवती को गूजरी आप बनाई,
महाराज बरस सोलह परमाणेजी॥
इम कियो वैक्रिय रूप लोग कोई भेद न जाणेजी

[५४]

शाम्बकुंवर चरित्र

(तर्ज:—श्रेण)

यह प्रजन कुंवर का शाम्ब कुंवर लघु भाई,
महाराज योहुन की माता न्यारीजी।
है तीन खंड का नाथ तात जिनका गिरधारीजी॥
या युगल वीर की जोड़ श्रीपती भारी,
महाराज प्रेम आपस में पूराजी।
चले निज कुल की मर्याद घड़ी एक रहे न दूराजी॥
खुश होय एक दिन प्रजन कुंवरजी बोले,
महाराज, भाई तुम शंक न राखोजी।
जो मन की इच्छा होय वही मुझ आगे भाखोजी॥
कर अरज तात से थोड़ी चीज दिलवाऊं,
महाराज मांग जो मरजी थारीजी।
कहे शाम्ब कुंवर कर जोड़ी बात सुन भाई,
महाराज और मुझ कुछ नहीं चहावेजी॥
दिया वचन लगावे पार आप फिर नहीं पलटावेजी।
सुरलोक सारखी है यह द्वारिका नगरी,
महाराज चित्त में खूब उमावोजी॥
कहूं छे महीना तक राज तात से आप दिलावोजी।
लीजे इतनो यश आश सुफल कर दीजे,
महाराज यही बस अरज हमारीजी॥
तब प्रजनकुंवर, ले साथ शाम्ब कुंवर को,
महाराज सभा में दोउ मिल आयाजी।
अति हर्ष सहित कर जोड़ तात को शीश नमायाजी॥
दीनो आदर हरिराय प्रेम से पूछे,
महाराज कहो जो भाव तुम्हाराजी।
करूं सफल मनोरथ आज वचन नहीं फिरे हमाराजी॥
सुन तात आपसे और कछु नहीं मांगूं,
महाराज कुंवर यों कहे विचारीजी।

मैं सोलह वर्ष से आय आपसे मिलियो,
महाराज आज तक कभी न जाचाजी।
अब मांगू सो यक्माय समाले आपकी वाचाजी ॥

इस द्वारा मति का राज मास छट तांई,
महाराज शाम्भ कुंवर ने दीजेजी।
ज्यों बनी रहे सब बात जगत में यो यश लीजेजी ॥
सुन बात द्वारिका नाथ वचन का बन्ध्या,
महाराज तुरत दीन्हीं सुख त्यारीजी।
अब शाम्भ कुंवरजी राज मौज से पाले,
महाराज खूब धन धन कहलावेजी ॥
पिण तजी लाज मर्य्याद आप कुव्यसन कमावेजी
जो उत्तम कुल की नार नजर में आवे,
महाराज जिन्हों से करत अनीतिजी।
ऐसे पुरुषों का क्यों न होय जग बीच फजीतीजी
नगरी का लोक मिल सब यों सलाह विचारी,
महाराज मुकुन्द से अर्ज गुजारीजी।
सुन बात कृष्ण लोगों को दिया दिलासा,
महाराज आप महलां में आयाजी।
सब जाम्बवती को माण्ड मन्द का हाल सुनायाजी ॥
तब तड़क फड़क कर महाराणीजी बोले,
महाराज विनय इतनी सुन लीजेजी।
ये लोग उडावे बात आप तो चित्त न दीजेजी ॥
यदि झूंठ होय तो प्रत्यक्ष आज दिखाऊं,
महाराज उठ चल संग हमारीजी।
तब जाम्बवती झट उठ पति संग चाली,
महाराज हरिजी हो गया आगेजी ॥
खुद बहुत वर्ष का बुड्ढा बाबा बन गया सागेजी।
उस जाम्बवती को गूजरी आप बनाई,
महाराज बरस सोलह परमाणेजी ॥
इम कियो वैक्रिय रूप लोग कोई भेद न जाणेजी

(तर्जः—रमा सुन मोहना मोहना)

हरिजी चालिया २ कांई कम्पित तास शरीर।
अति दीपती गूजरी, ज्यों इन्द्राणी अवतार ॥ १ ॥
दीसे वेष सुहामणो, कांई नेवर को भणकार ॥ २ ॥
मोरयां की सिर चूमगी, कांई मटकयां लीनी मेल ॥३॥
लोक देख हांसी करे, कांई जोड मिली परमाण ॥ ४ ॥
गोविंद के परवा नहीं, कांई चाल्या मध्य बाजार ॥५॥
दोउ फिरता २ राज द्वार पे आया,
महाराज जावण्या नीचे उतारीजी ॥ ७ ॥
लो दूध दही लो दूध दही यों बोले,
महाराज कुंवर सुन बाहिर आयोजी।
लख गूजरनी का रूप तुरत मन में मुरझायोजी ॥
कहे कुंवर सुन तू गूजरनी बात हमारी,
महाराज नहीं हम लूट मचावाजी।
तू चाल महल में दूध दही को भाव जचावांजी ॥
बुड्ढा बालम यों कहे यहीं पर ले लो,
महाराज नहीं तो मरजी तुम्हारीजी।
मैं हूँ बुड्ढो या बालक बधू हमारी,
महाराज अवस्था यौवन थारीजी ॥
को जाने मन की बात नहीं परतीत तुम्हारीजी।
दोउ हाथ पकड़ कर खेंचा खेंच मचावे,
महाराज, भपट ले चाल्यो मांहीजी।
अरे मान मूढ़ मतिहीन ऐसी क्यों करत अन्याईजी ॥
तब कृष्ण आप निज रूप प्रगट कर लीन्हा,
महाराज, पुत्र से कहे ललकारीजी।
रे बाला हीन! तू देख मात या तेरी,
महाराज, कहाँ ले जात भागीजी।
भट छोड़ मात को हाथ गयो महलों में भागीजी ॥
तब कृष्ण और महाराणीजी मिल दोनों,
महाराज, आये निज भवन मुझारीजी।
देखो बुध नन्दन खेल बोल यूं कहे गिरधारीजी ॥

१ दूध की मटकी।

तब जाम्बवती कर जोड़ कंत से बोली,
'महाराज, अभी बालक बुध क्यांरीजी।
फिर दूजे दिन गोपाल सिंहासन बैठा,
महाराज, भरी थी सभा रसीलीजी।
तिहां आया शाम्बकुंवर हाथ से घड़ता खीलीजी ॥
क्या चीज बनाओ तात बात यूं पूछे,
महाराज, कुंवर कहे गेश भराईजी।
क्यों करे काल की बात ठोकूं उनका मुख मांहीजी ॥
कोपित हो गोविन्द देश निकला दीन्हा,
महाराज, कर्म गति टरे न टारीजी।
सुन प्रजन कुंवर यह बात तात पै आया,
महाराज, बहुत कीन्ही नरमाईजी।
है मुफ बान्धव नादान, हाल कुछ समझे नाहींजी ॥
मैं जानूं जबर अपराध आपका कीना,
महाराज, राज तो बड़ा कहावोजी।
यह गुन्हा मुझे बकशाय वचन पीछा पलटावोजी ॥
(तर्जः—नागजी पूनम के दिन जन्मीया हो नागजी)
तातजी, प्रजन कुंवर इम विनवेरे कांई,
करजोड़ी पावां पड़ी हो तातजी।
तातजी, राजनपति प्रभु आपकी रे कांई,
महिमा जग में है बड़ी हो तातजी ॥१॥
तातजी, 'पुत्र कुपूत होवे सही रे कांई,
मावित अलग करे नहीं हो तातजी।
तातजी, छेदन भेदन जो करे रे कांई,
चन्दन गुण छोड़े कहीं हो तातजी ॥२॥
तातजी, यंत्र में पीले शेलड़ी[1] रे कांई,
दुश्मन को नरपति करे हो तातजी।
तातजी, लकड़ जल ऊपर तिरे रे कांई,
पानी अवगुण नहीं धरे हो तातजी ॥३॥
तातजी खुशबु देकर फूलडारे कांई,
मर्दक पै नहीं ध्यान दे हो तातजी।

१ ईख।

तातजी, पन्नग तर्जन सभी मद्दे रे कांई,
गऊ मधुर पय, दान दे हो तातजी ॥४॥
तातजी यदुपत विरद विचार ने रे कांई,
पुत्र पे कोप न कीजिये हो तातजी।
तातजी सुदृष्टि निहार ने रे कांई,
प्रीति आश्वासन दीजिये हो तातजी ॥५॥

निज नन्दन की हरि एक बात नहीं मानी,
महाराज तर्क इसनीक निकारीजी ॥१२॥

है सत्यभामाजी जो तुम मोटी माता,
महाराज हस्ति ऊपर बैठायेजी।
और चमर उड़ाती आप द्वारिका मांही लावेजी ॥
तो है तुम आज्ञा रहो राज के मांही,
महाराज कुंवर सुन वहां से चलियोजी।
अति हर्ष सहीत झट आय शाम्भकुंवर से मिलियोजी ॥
मैं सुखदायक उपाय करी आया हूं,
महाराज फिरतो तकदीर तुम्हारीजी ॥१३॥
कहे शाम्भकुंवर तुम मन्धत यात विचारो,
महाराज मान देखा नहीं चहावेजी।
तो ऐसी अदब के साथ कहो कैसे लइ जावेजी ॥
वैताढ्यगिरि विद्याधर उत्तर श्रेणी,
महाराज 'मेघकुट' नगर तुम्हारोजी।
तिहां दीजे जल्दी मेल खुशी चित होय हमारोजी ॥
लीजे यश यह भी वक्त निकल जावेगी,
महाराज, आप हो पर उपकारीजी ॥१४॥

जरा धीरज धर तू क्यों इतनो घबरावे,
महाराज, जोर विद्या को भारीजी।
झट पलट दिया वसु रूप करी जिम देवकुमारीजी ॥
भामाजी का रमणीक बाग के मांही,
महाराज, वृक्ष की शीतल छायाजी।
शिला पट्ट पर बैठाय कपट का वचन सिखायाजी ॥
यों खेल रचा कर गया द्वारिका मांही,
महाराज, बात तो खूब सुधारीजी ॥१५॥

ले सखियों लार तिण अवसर मामा राणी,
महाराज, बाग में खेलन आईजी।
अति दिव्य रूप कुंवरी को देख मन अचरज पाईजी ॥
मामाजी भोली भेद कछु नहीं पाई,
महाराज, पास कुंवरी के आईजी।
बहु दे आदर सन्मान बात पूछे हुलसाईजी ॥
तुम कुन हो बाईराज बात फरमावो,
महाराज, मूर्ति तुम मोहनगारीजी ॥१६॥
तब शाम्भ कुंवर कहे नयना जस बरनाई,
महाराज, मात सुन बात हमारीजी।
इस मृत्यु लोक के मांय मैं हूँ इक दखनी नारीजी ॥
मैं विद्याधर राजा की वल्लभ कुंवरी,
महाराज, यहां मामो लेई आयोजी।
सूती तरु तल मर नीन्द दुष्ट मुझ छोड़ सिधायोजी ॥

(तर्जः—हे सुण पंथीड़ा बात कहो घर खेद थी)

हे सुण मायड़ली, पिता है बे परवाह जो,
माता ने मैं छू वल्लभ हीवरी रे लो ॥ १ ॥
हे सुण मायड़ली, चक्रवर्ती पाले राज जो,
तिणथी अर्ध राज छे म्हारा तात ने रे लो ॥ २ ॥
हे सुण मायड़ली, बात सुणेगा मात जो,
झुर झुर ने पिंजर ते होसी सही रे लो ॥ ३ ॥
हे सुण मायड़ली, यह मुझ बालक वय जो,
भोली ढाली कुछ समझूं नहीं रे लो ॥ ४ ॥
हे सुण मायड़ली, कौन करे मुझ सार जो,
सुख दुख की बात कौन मुझे पूछसी रे लो ॥ ५ ॥
हे सुण मायड़ली, अब मुझ राह बताव जो,
गुण नहीं भूलूं मैं जीवूं जहां लगे रे लो ॥ ६ ॥
कहे सत्य भामाजी पाई रुदन मत कर तू,
महाराज, खुली तकदीर तुम्हारीजी ॥१७॥

---

१ सूरत।

सुभानू कुंवर सुभ पुत्र दीपतो भारी,
महाराज, कहावे नन्द हरि कोजी।
नन्याणु[1] कुंवरयां माय व्याह अब होसी नीकोजी॥
जो मन्न होय तो तूं यो अवसर मत चूके,
महाराज, मौज कर जो मन मानीजी।
सब कुंवरान्यां के मांय तुमे करसूं पटरानीजी॥
सुन मात बात परमान कहूं मैं थारी,
महाराज, अरज इतनीक हमारीजी॥१८॥

मैं भूधर सो सपना में कभी नहीं बंछु,
महाराज, आज का वक्त विचारूंजी।
मुझे हर्ष सहित ले चलो तो दिल में निश्चय धारूंजी॥
फिर गज होदे तुम हाथे चमर ढुराऊं,
महाराज, हुई खुश भामारानीजी।
मोटे मंडान[2] बधाय तुरत नगरी में आनीजी॥
अब बजे बधायाँ खूब शहर के मांही,
महाराज, करे महिमा नर नारीजी॥१६॥

अब सतभामाजी विवाह कुंवर को रचियो,
महाराज, द्रव्य खरचे दिल चायोजी।
घुर रहे बाजिन्तर नाद लगन दिन नेड़ो[3] आयोजी॥
तब सुभ पसे कुंवरी ब्राह्मण से बोले,
महाराज, रीति कुल की नहीं छोडूंजी।
मैं ऊपर रखूं हाथ तभी हथलेवो जोडूंजी॥
सुण भामाजी यूं कहे तुरत कुंवरी से,
महाराज,रीति होय सो कर थारीजी॥२०॥

तब कुवरी अपना हाथ रखा ऊपर ही,
महाराज फिरे फेरा अब सागेजी।
निन्याणवे कुंवरियां मांय आप हुई सब के आगेजी॥
अति हर्ष सहित किया व्याह मात नन्दन का,
महाराज, अधन दीना बकसाईजी।
सुभानू कुंवर की नार सबी मिल भीतर आईजी॥

---
१ निन्यानवे २ बड़ा ठाट-बाट। ३ नजदीक।

तब प्रद्युन कुंवर सत्प्रण विद्या की सुमरी,
महाराज, किया निज रूप तैयारीजी ॥२१॥
अब शाम्भ कुंवरजी देव कुंवर जिम दीपे,
महाराज, सेज पर बैठा आईजी।
सब राण्या देखी रूप तुर्त मन में मुरझाईजी॥
चौ तर्फ सेज के सर्व प्रेमदा बैठी,
महाराज, फूली जिम केशर क्यारीजी।
कर अलंकार सुभानू कुंवर आया उस वारीजी॥
तिहाँ शाम्भ कुंवर को बैठा देख पलंग पै,
महाराज, कोप चढ़ियो अति भारीजी ॥२२॥
रे लाज हीन ! मुझ सेजा में किम आयो,
महाराज, तुझे कुमति भरमायोजी।
तब शाम्भ कुंवर कर नेत्र लाल उनको धुरकायोजी॥
सुभानु कुंवर झट दौड़ मात पां आयो,
महाराज, हकीकत माण्ड सुनाईजी।
सुन सतभामाजी शीघ्र गति तिहाँ चल कर आईजी॥
अति क्रोध करीने करड़ा वचन सुनाया,
महाराज, दुष्ट तू निकल बहारीजी ॥२३॥
जब देश निकला तात तुझे दीना था,
महाराज, यहाँ कैसे विलमायोजी।
माधव की आज्ञा भंग करी पीछी किम आयोजी॥
छिप के कब तक रहसी इस आंगन में,
महाराज, नाम जिनको गिरधारीजी।
यदि लगी खबर फिर बोल कौन गति करसी थारीजी॥

(तर्जः—फाग)

मुरली वारो रे २ वो शीश पर मुकुट वारो रे॥
शाम्भ कुंवर ने सत भामा कहे सुन ले बात हमारी
तीन खंड को नाथ तात थारो गिरधारी रे ॥१॥
कंसराम को मुकट पाडियो परभव में पहुँचायो रे।
स्वयम्वर मंडप मांय से मुझे ब्याही लायो रे ॥२॥
काली दह में कूद पड़या अरु करी वज्र की छाती रे।
गेंद लेइने पाछो निकल्यो नाग नाथी रे ॥३॥

जरासिंघ को मान विडारयो हस्ती दंत उखाडया रे।
जेष्टी मल से युद्ध करी ने पकड़ पछाडया रे ॥४॥
देश वट पंडवा ने दीनो जरा काण नहीं राखी रे।
पंडु मथुरा जाय बसाई सूतर[1] साखी रे ॥५॥
प्रजन कुंवर थारी भई ऊपर मदद करे छे भारी रे।
जाम्बवती पण छाजमी था माता थारी रे ॥६॥
बड़ां बड़ां की शान बिगाड़ी ऊं थारी कव राखे रे।
इण लक्षण से जाणजे कई स्वाद चाखे रे ॥७॥
तब शाम्भकुंवर कर जोड़ मात से बोले,
महाराज अर्ज एक सुनो हमारीजी ॥२४॥
मैं किया वचन परमाण श्राण नहीं लोपी,
महाराज जोर हो जहां पुकारोजी।
मैं हूँ निरदोषी आज तात क्या करे हमारोजी ॥
मैं पुढवी शिहत्रा पट ऊपर बैठो थो,
महाराज बाग की शीतल छायाजी।
मुझे गज होदे बैठाय आप यहाँ लेकर आयाजी ॥
सुन माता तुझ उपकार कभी नहीं भूलूं,
महाराज रोष की हद विस्तारीजी ॥२५॥
फिर शाम्भ कुंवर निज स्थान गया निकल के,
महाराज मौज में रहे सदाईजी।
तब भामा रानी तुरत कंथ के सन्मुख आईजी ॥
दो हाथ जोड़ सब बीतक हाल सुनाया,
महाराज हरीजी यूं हंस बोलाजी।
उसे गज होदे बैठाय चमर कहो किसने ढोलाजी ॥
मैं सांच कहूँ राणीजी रोष नहीं कीजे,
महाराज कुबुद्ध या है थारीजी ॥ २६ ॥
तब सतभामाजी रोष अत्यन्त चढाया,
महाराज करी तुम झूठी मुझ ने जी।
तेरो पलट्यो नहीं स्वभाव गवाल्या जाणूं तुझ ने जी ॥
यों बड़ बड़ करती गई महल के मांई,
महाराज बड़ी ममता दिल धारीजी।

---

[1] सूत्र-साक्ष। २ वह, श्रीकृष्ण से अभिप्राय है।

यह कपट भरा संसार खूब रहना होशियारीजी ॥
फिर शाम्भ कुंवर पच्चास अंतेवर परनी,
महाराज सेज सुख विलसे भारीजी ॥२७॥
फिर नेमि जिनन्द की सुनी आपने वाणी,
महाराज धर्म का मर्म पिछानाजी ।
है झूठा सब संसार सार एक संजम जानाजी ॥
हरि की आज्ञा ले तुर्त भोग छिटकाया,
महाराज सूत्र में वर्णन चाल्योजी ।
श्री प्रजन कुंवर की तरह आय शुद्ध संजम पाल्योजी ॥
कर अष्ट कर्म को अन्त सिद्ध पद पाया,
महाराज काज सब किया सुधारीजी ॥२८॥
संवत उन्नीसो पैंसठ चैत सुदि मांही,
महाराज तिथि एकम गुरुवारेजी ।
यह जुगत बनाई जोड़ ढाल सागर अनुसारेजी ॥
मेवाड़ देवगढ़ चित्रकूट सुखकारी,
महाराज तीन मुनि विचरत आयाजी ।
वहां है श्रावक गुणवान मेरा दिल लगे सवायाजी ॥
श्री नन्दलालजी मुनि तणां शिष्य गावे,
महाराज गुरु मेरा है उपकारीजी ॥२६॥

[५४]

दान की महिमा

(तर्ज.—लावणी)

अभयदान प्रभाव भविकजन भव भव में सुख पावेगा ।
मुनिराज सुनावे वही नर ज्योति में ज्योति समावेगा ॥
पूर्वभव हस्ती के भव में एक जीव की करी दया ।
हुवे मेघकुंवरजी श्रेणिक राजा के घर आ जन्म लिया ॥
यौवनवय में आए कुंवरजी बहत्तर कला में प्रवीन भया ।
तब श्रेणिक राजा आठ कन्या के संग व्याह किया ॥

राजकुंवर सुकुमाल हैं और पलते कुल की चालजी।
सुख भोगवे संसार का बीता है कितना कालजी॥
पुण्य योग से उस नगर में छै काय के प्रतिपालजी।
समोसरे चौबीस मे जिनराज श्रीन दयालजी॥
हुई खबर शहर में बहुत लोग हुलसाया।
राजादिक वन्दन मेघ कुंवर भी आया॥
तब तीन लोक के नाथ जिनेश्वर राया।
प्रभु समोसरण के बीच उपदेश सुनाया॥
सुनी मेघ कुंवार जान्यो अथिर संसार,
जिसने लिया संजम भार काम सफल किया।
किया उग्र विहार बहु तारे नर नार,
खूब किया उपकार जग यश लिया॥
संजम पाल के सुजान, गए विजय विमान,
बत्तीस सागर के प्रमान भोगे सुख तिहां।
छट्ठे अङ्ग के मंझार हैगा बहु विस्तार,
सुन लेना नर नार यहां संकोच दिया॥
महा विदेह क्षेत्र में जन्म ले के,कर्मों का रोग मिटावेगा।
प्रथम देवलोक के अन्दर शक्रेन्द्र ने किया बखान॥
मनुष्य लोक में दयालू, मेघरथ जैसा नहीं इनसान।
एक देवता ने यूं सुनकर, दिल में शंका लीनी ठान॥
मैं जाय डिगाऊं, उसी दम रूप वैक्रिय किया महान्।
धर्म ध्यान में लीन नृपति, पौषध शाला मांयजी॥
देवता कबूतर हो गिरा, जल्दि से गोदी मांयजी।
तब पारधी कहने लगा, सुनिए श्री महारायजी॥
मम भक्ष्य मुझ को दीजिये, रहा भूख से घबरायजी।
तब राय कहे सरणे, आया नहीं पावे।
तेरी इच्छा हो सो मांग, और मिल जावे॥
तब कहे पारधी, इस पै दया जो आवे।
तो इसके बरायर अपना मांस खिलावे॥
सुनके राजा ने यह हाल, तराजू मंगवाई तत्काल।
करके कुछ भी नहीं ख्याल, काया खण्डन करी॥
देव अवधि से जान, सच्चा दयालू राजन।
झुका कदमों में आन, नहीं देरी करी॥

पीछे मेघरथ राय, व्रत पाले चित्त लाय।
गए सर्वार्थ सिद्ध मांय, पूर्ण स्थिति करी ॥
वहां से चवकर के आन, हस्तिनापुर के दरम्यान।
पिता विश्वसेन लो जान, अचला मातेश्वरी ॥

शान्ति नाथ हुवे स्मर्ण कीजे, शान्ति २ वरतावेगा।
यदुकुल भूषण समुद्रविजय की, शिवादेवी हैं महारानी ॥
अङ्गजात जिन्हों के, हुये हैं रिष्टनेमि जिनवर ज्ञानी।
जूनागढ चले ब्याह करन श्री कृष्ण चन्द्र हैं अगवानी ॥
चली वरात धूम से, देख छवि जनता मन में हुलसानी।
नगर जूनागढ़ पति श्री उग्रसेन के द्वारजी ॥
तोरण वन्दन आवतां पशु गण की सुणी पुकारजी।
पशु इकट्ठे क्यों किए कहे नेमिजी उस वारजी ॥
सुन सारथी ने यूं कहा, तुम ब्याह हित सरकारजी।
यूं सुन के नेमि प्रभु दिल में करे विचारा ॥
मुझ ब्याह निमित्त पशुओं का होय संहारा।
दिए भूषण खोल कर सारथि को उस वारा ॥
फिर सहस्र पुरुष संग, प्रभुजी ने सयम धारा।
सुनके राजुलजी यह हाल, मुरछानी तत्काल।
फेर सूरत संभाल, ऐसे प्रकट कही २ ॥
बिन गुनाह भरतार, मुझ छोड़ी निराधार।
अब कौन का आधार, लेना संयम सही २ ॥
संग सात सौ कुंवारी, निश्चय दिल में विचारी।
लीना मुनि व्रतधारी, गिरनार पै गई २ ॥
उत्तराध्ययन के मझार, हैगा बहुत विस्तार।
दोनों किया खेवा पार, केवल ज्ञान लही २ ॥
रिष्टनेमि राजुलजी का गुण, कोई तन मन से गावेगा।
जगह जगह सूत्रों के अन्दर बहुत किया जिनवर विस्तार ॥
दया धर्म को धार कर, भवसागर से होगए पार ॥
धर्मरुचि मुनि दया निमित्त, कडुवे तूम्बे का किया आहार ॥
पर नागसिरि पै, उन्होंने, द्वेष भाव नहीं किया लगार ॥
दया धर्म दिल धारके, कई पाए अविचल स्थानजी ॥
अल्प बुद्धि है मेरी किन २ का दूं प्रमानजी ॥

जीव रक्षा धर्म पर, जिनका हमेशा ध्यानजी ॥
देव स्वर्गों के झुके उनके चरण में आनजी ॥
यों जान सभी जीवों की जतना करना ॥
तो भवसागर से जलदी होगा तरना ॥
मुनिराजों की नित शिक्षा दिल में धरना ॥
जो शिव रमणी को चाहो भाई वरना ॥
ऐसी अरिहंत वानी, जिसमें दया ही बखानी,
जिनके चित्त में समानी, हुए भव पारी २ ॥
ऐसी लावनी बनाई, साल चौपन के मांही,
जीवागंज मांही गाई, सुनो नर नारी २ ॥
नन्दलालजी महाराज, तरण तारण की जहाज,
सारे आतमा के काज, बड़े उपकारी २ ॥
हीरालालजी महाराज, वाणी घन जिम गाज,
ठाण सात से विराज, रहे यश धारी २ ॥
खूबचन्द और चौथमल कहै, दया पाल तिर जावेगा ॥

---

[५५]

शील की महिमा

(तर्ज.—लावणी)

शील रत्न का करो जतन, श्री जिनवर ऐसे फरमावे, ।
श्री शील व्रत के नियम से मन वांछित सम्पति पावे ॥
चम्पा नगरी सुभद्र सेठ, धनवन्त बसे उस नगरी मांय ॥
सुभद्रा नामा, कहीजे एक पुत्री वल्लभ सुख दाय ॥
बालपने से जैनधर्म श्रावक के व्रत पाले चित्त लाय ॥
मां बाप उसी को एक दिन मिथ्यात्वी घर दी परणाय ॥
सती सुभद्रा ऊपरे सासू करे तकरारजी ।
जैन धर्म को छोड़ दे शुचि धर्म ले तूं धारजी ॥
सुभद्रा कहे सासु सुनो, जिन धर्म है एक सारजी ॥
सत्य से सती रहती सदा, आगे सुनो अधिकारजी ॥

तिण अवसर विचरत, जिनकल्पी मुनिराया ॥
कृपा करके चम्पा नगरी में आया ।
चक्षु में वायु योगे फूस भराया ॥
नैनों से झरता नीर शहर में आया ॥
सती देख मुनिराय, हर्ष आया दिल माय,
मुनि वन्दे चित लाय, गुण ग्राम करे २ ॥
सती आंख सामे देख मन आया है विवेक,
फूस काढ़ दिया एक, सासु शंक धरे २ ॥
यह कुलक्षणी नार, शर्म आई ना लगार,
छू लिये अणगार, मिथ्या कलंक धरे २ ॥
सुभद्रा नित्यमेव, करे प्रभुजी की सेव,
जिन शासन का देव, कैसे शान्ति करे २ ॥
सुभद्रा सती को कलंक उतारन, देव अति मन हुलसावे ॥१॥
चारों पोल चम्पा नगरी के, जड़ दीने सुर मन आनी ॥
कइ लोक नगर का, आये खोलन को मिल राजा रानी ॥
यह द्वार जब खुले देवता यु' बोले नभ से बानी ॥
सती काचा सूत से, चालनी बांध काढ़ छिटके पानी ॥
नृप उपाय कीने बहुत, पर खुले नहीं वह द्वारजी ॥
लोक आश्चर्य हो रहे, यह हुवा कौन विचारजी ॥
नृप कराई घोषणा, धन २ पुरुष घर नारजी ॥
द्वार खोले नगर के, वह सतियों में है सारजी ।
सुभद्रा सती सुन सासू से बतलावे ॥
मैं करूं यही प्रयत्न द्वार खुल जावे ॥
यह कुलक्षणी तू' नार मुझे समझावे ॥
फिर सती होन को जाय शर्म नहीं आवे ॥
सती आई दिल धार, कच्चे सूत से बस धार,
बांधी चालनी ततकार, जल काढ़ लिया २ ॥
सती गिना नमोकार, जल छींटा है तिवार,
चम्पा नगरी के द्वार, तिन खोल दिया २ ॥
यह देख नर नारी, खुशी हुवे है अपार,
यह सतियों में सरदार, जग यश लिया २ ॥
सासू आई तिणवार, नमी सती के चरणार,
कलंक दिया है उतार, हृदय हुलस रहा २॥

जीव रक्षा धर्म पर, जिसका हमेशा ध्यानजी ॥
देव स्वर्गों के झुके उसके चरण में आनजी ॥
यों जान सभी जीवों की जतना करना ॥
तो भवसागर से जलदी होगा तरना ॥
मुनिराजों की नित शिक्षा दिल में धरना ॥
जो शिव रमणी को चाहो भाई वरना ॥
ऐसी अरिहंत वानी, जिसमें दया ही बखानी,
जिनके चित्त में समानी, हुए भव पारी २ ॥
ऐसी लावनी बनाई, साल चौपन के मांही,
जीवागंज मांही गाई, सुनो नर नारी २ ॥
नन्दलालजी महाराज, तरण तारण की जहाज,
सारे आत्मा के काज, बड़े उपकारी २ ॥
हीरालालजी महाराज, वाणी घन जिम गाज,
ठाण सात से विराज, रहे यश धारी २ ॥
खूबचन्द और चौथमल कहै, दगा पाल तिर जावेगा ॥

---

[५५]

शील की महिमा

(तर्ज.—लगणी)

शील रत्न का करो जतन, श्री जिनवर ऐसे फरमावे, ।
श्री शील व्रत के नियम से मन वांछित सम्पति पावे ॥
चम्पा नगरी सुभद्र सेठ, धनवन्त बसे उस नगरी मांय ॥
सुभद्रा नामा, कहीजे एक पुत्री वल्लभ सुख दाय ॥
बालपने से जैनधर्म श्रावक के व्रत पाले चित्त लाय ॥
मां बाप उसी को एक दिन मिथ्यात्वी घर दी परणाय ॥
सती सुभद्रा ऊपरे सासू करे तकरारजी ।
जैन धर्म को छोड़ दे शुचि धर्म ले तूं धारजी ॥
सुभद्रा कहे सासु सुनो, जिन धर्म है एक सारजी ॥
सत्व से सती रहती सदा, आगे सुनो अधिकारजी ॥

तिण अवसर विचरत, जिनकल्पी मुनिराया ॥
कृपा करके चम्पा नगरी में आया ।
चक्षु में वायु योगे फूस भराया ॥
नैनों से झरता नीर शहर में आया ॥
सती देख मुनिराय, हर्ष आया दिल मांय,
मुनि वन्दे चित लाय, गुण ग्राम करे २ ॥
सती आंख सामे देख मन आया है विवेक,
फूस काढ़ दिया एक, सासु शंक धरे २ ॥
बहु कुलक्षणी नार, शर्म आई ना लगार,
छू लिये अणगार, मिथ्या कलंक धरे २ ॥
सुभद्रा नित्यमेव, करे प्रभुजी की सेव,
जिन शासन का देव, कैसे शान्ति करे २ ॥
सुभद्रा सती को कलंक उतारन, देव अति मन हुलसावे ॥१॥
चारों पोल चम्पा नगरी के, जड़ दीने सुर मन आनी ॥
कहे लोक नगर का, आये खोलन को मिल राजा रानी ॥
यह द्वार जब खुले देवता युं बोले नभ से वानी ॥
सती काचा सूत से, चालनी बांध काढ़ छिटके पानी
नृप उपाय कीने बहुत, पर खुले नहीं वह द्वारजी ।
लोक आश्चर्य हो रहे, यह हुवा कौन विचारजी ।
नृप कराई घोषणा, धन २ पुरुष घर नारजी ॥
द्वार खोले नगर के, वह सतियों में है सारजी ।
सुभद्रा सती सुन सासू से जतलावे ॥
मैं करूं वही प्रयत्न द्वार खुल जावे ॥
बहु कुलक्षणी तूं नार मुझे समझावे ॥
फिर सती होन को जाय शर्म नहीं आवे ॥
सती आई दिल धार, कच्चे सूते से उस बार,
बांधी चालनी ततकार, जल काढ़ लिया २ ॥
सती गिना नमोकार, जल छींटा है तिवार,
चम्पा नगरी के द्वार, तिन खोल दिया २ ॥
बहु देख नर नारी, खुशी हुवे हैं अपार,
यह सतियों में सरदार, जग यश लिया २ ॥
सासू आई तिणवार, नमी सती के चरणार,
कलंक दिया है उतार, हृदय हुलस रहा २॥

जय जय शब्द सुर बोले गगन में, पुष्प वृष्टि तिहां वर्षावे ॥२॥
रामचन्द्रजी बहु पुन्यवन्ता, शीलवती तसु सीता नार ॥
बन वास सिधारे, भाई लक्ष्मणजी भी रहते थे लार ॥
उसी समय त्रिखंडपति, राजा रावण आया ततकार ॥
रघुवर की नारी, सती सीता को ले गया लंक मझार ॥
सती सीता दिल बीच में, लीना नियम यह यह धारजी ॥
रघुवर दिन इकीसवें; मिल जांय, तो लूं आहारजी ॥
सतो प्रति रावन कहै, मुझ लो पति सिर धारजी ॥
सब रानियों के बीच में कर दूं तुझे पटनारजी ॥

बहु लाल पाल कर, रावन चित्त ललचावे ।
सीता रघुवर बिन सुपनेमें और नहीं ध्यावे ॥
बड़े २ भूप मिल रावण को समझावे ।
सीता दो पीछी सौंप बात रह जावे ॥
त्रिखंडराय बात मानी कुछ नांई ।
रहा मोह में उलझाय, समझे कुछ नांई २ ॥
रावन कहै दिलधार,भाईलक्ष्मण दोनों लार ।
बसे बन के मझार, कैसे सके आई २ ॥
पवनसुत हनुमान, कहीए महा पुन्यवान ।
आप लंका के दरम्यान,तिहां बाग मांही २ ॥
कहे सीता से आवाज,रामचंद्रजी महाराज ।
सुख चैन में है आज, चिंता मिटवाई २ ॥

रामचन्द्रजी के समाचार सुन, सती अति मन हर्षावे ।
सीताजी का समाचार लेकर हनुमान सिधाया है ॥
श्रीरामचन्द्रजी जिन्हों के पास तुरत ही आया है ।
रामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी सुनकर अति सुख पाया है ॥
दल बादल लेकर शीघ्र लंकागढ़ पर चढ़ आया है ।
रामचन्द्रजी जीतिया, जिसका बहुत अधिकारजी ॥
नगरी अयोध्या आ गये, सीता को लेकर लारजी ।
लोक शहर के यूं कहे, शील त्यागा सीता नारजी ॥
शंका मिटाने को सती अब [1]धीज करे दिल धारजी ।

१ अग्नि परीक्षा ।

तब स्नान करी अग्नि का कुण्ड भराया।
नगरी का बहु नर नार देखने आया॥
सती कहे राम तज अवर पुरुष जो चाया।
तो अग्नि कुण्ड के बीच भस्म हो काया॥
ऐसा कहके हवाल सती पड़ी तत्काल।
कुछ आया नहीं आल देखे नर नारी २॥
सीता सती के गुणगान कर रहे नमदरस्थान।
देव स्वर्गों से आन जय जय कारी २॥
शील सीतल करादे आग विघ्न जाते हैं सब भाग।
यश मिलता है अथाग सम्पत्ति भारी २॥
जवाहरलालजी महाराज तरण तारण जहाज।
सारे आत्मा के काज बड़े उपकारी २॥
'दूधचन्द' और चौथमल कहे।
शील सदा सुख प्रगटावे॥

[५६]

तप की महिमा

(तर्ज:—लंगड़ी)

शासन पति शास्त्रों के बीच, तपस्या का महातम फरमाया,
शुद्ध करके करनी, गये कई स्वर्ग कई शिव-पद पाया॥
सावत्थी नगरी के बाहर रहता एक खंधक सन्यासी॥
गृद्ध भालीजी का है वो शिष्य वेद पुराण का अभ्यासी॥
पिंगल निर्ग्रन्थ श्रावक आकर, पांच प्रश्न कीने खासी॥
तब पड़ा भर्म में, जवाब नहीं आया होगया उदासी॥
कयंगला के बाग में, समोसरे जिनराजजी॥
खन्धकजी सुन के चले, निज संशय मेटन काजजी॥
वीर कहे सुन गोयमा, तुम मित्र मिलेगा आजजी॥
यों चले गौतम, यह लेगा संयम, यह कहो गरीबनिवाजजी॥

हाँ संयम लेगा प्रभु मुख से फरमाया ॥
इतने खन्दकजी आके शीश नमाया ॥
कहीं मन की बात सब खोल जिनेश्वरराया ॥
प्रश्नों का किया खुलासा - भर्म मिटाया ॥

तब हितकरजी उपदेश जिनेश्वर दीना, खन्दकजी संयम लीना ॥
एकादशाजी अंग भणी हुवा प्रवीना, रहे नित्य वैराग्य में भीना ॥
तप मोटाजी गुण रत्न[1] छम छर कीना, आदेश लेइ प्रभु जीना ॥
बारा पड़िमाजी करि शरीर सुकाई दीना, ले आज्ञा अनशन कीना ॥

द्वादश में सुरलोक गये, भगवती में जिनवर फरमाया ॥१॥
श्रेणिक नृप की दशमी भार्या, महासेण कृष्णा राणी ॥
कोणिक राजा की छोटी माता है शास्त्रों स जानी ॥
उसी समय में विचरत आये, महावीर केवल ज्ञानी ॥
सती गई वन्दने, सुनी वैराग्यमई अमृत वानी ॥
समवसरण के बीच में, यों कहे कर जोड़जी ॥
जनम मरण को आग से, बचने की यही ठौड़जी[2] ॥
वैराग्य दिल में लायके, दिया मोह ताता तोड़जी ॥
कोणिक भूप महोत्सव किया,संयम लिया घर छोड़जी ॥

चन्दनबालाजी की हुई चेली गुणवन्ती ।
पढ गई इग्यारह अङ्ग विनय नित्य करती ॥
शुद्ध संयम पाले रहे पाप से डरती ।
गुरुजी से पूछ वृद्धमान आंबिल तप करती ॥

एक आंबिलजी एक वास दो आंबिल कर गई अनुक्रमे सौ तक चढ़ गई ।
बिच २ में जी एक २ वास करती गई एक २ आंबिल बढ़ती गई ॥
वर्ष चौदहजी तीन मास बीस दिन भर गई तप कर २ काया गर गई ।
किया अनशनजी सब गरज जीव की सर गई संसार समुद्र तर गई ॥

सत्तरह वर्ष का संयम पाला, अन्तगड़ शास्त्र में दर्शाया ॥२॥
आनन्द नामा गाथापति रहे वाणिया गाम नगर मांही ॥
श्री वीर जिनन्द की वाणी सुन, श्रावक व्रत लिया हुलसाई ॥
एक दिवज करके विचार, घर सौंप दिया निज सुत तांई ॥
पौषध शाला में आय, शुद्ध इग्यारह पड़िमा ली ठाई ॥

१ गुणरत्न संवत्सर एक प्रकार की तपस्या है जिसमें —२ ठौर-स्थान ।

तप कर और लगा रहे, नहीं मन में ग्लानजी ॥
रक्त मांस बहु सूख गया, शास्त्र में बहुत बयानजी ॥
अवसर जान अनशन किया, और ध्यावे निर्मल ध्यानजी ॥
शुभ भावनां वर्तावतां उपजया है अवधि ज्ञानजी ॥
तिंन अवसर विचरत वीर जिनेश्वर आया ।
बहु शिष्य गौतम अणगार महा मुनिराया ॥
ले आज्ञा गोचरी करण शहर में आया ।
लोगों के मुख आनन्द की बात सुन पाया ॥

दर्शन देवेजी गौतम स्वामीजी आया, आनन्दजी शीश नमाया ।
किया प्रश्नजी मैंने अवधिज्ञान यह पाया, तब गौतम फरक बताया ॥
कहे आनन्दजी मैंने सत्य स्वरूप बताया, शंका युत गौतम आया ।
सुना आनन्दजी कहें वीर जिनेश्वर राया, गौतमजी आन खमाया ॥
बीस वर्ष श्रावक धर्म पाली, प्रथम स्वर्ग में सिधाया ॥ ३ ॥

कई साधु कई महासती, कई श्रावक कई का हो गया निस्तार ।
जिन आगम मे देख लो, बहुत किया जिनवर विस्तार ॥
पंचम आरे के कई जीव जिन-मार्ग को जाने निज सार ।
करे तपस्या जिससे होता, अपना आतम उद्धार ॥
शक्ति जान शरीर की कई, करते हैं उपवास जी ।
शूरवीर परिणाम से कई, करते दो दो मास जी ॥
जिन मार्ग में जूझते, कर्मों का करते नाश जी ।
वैराग्य में नित लीन रहे, करे ज्ञान का अभ्यास जी ॥
इस विधि करनी कर कई मोक्ष जाते हैं ।
वहां गए बाद फिर यहां नहीं आते हैं ॥
करनी से कई सुरगति के सुख पाते हैं ।
तपस्या का महातम मुनिराज गाते हैं ॥

उगणीसेजी उगणीसे तिरसठ सुन भाई, मगसिर सुदि चौदश आई ।
छै ठाणाजी, मिल शहर निम्बाहेड़ा मांई, छे रात रहा सुखदाई ॥
गुरु वन्दूंजी श्रीजवाहरलालजी चितलाई, जिनकी कीर्ति जग में सवाई ।
कर कृपाजी-मुझ दिया ज्ञान बकसाई, मैंने सब ही सम्पत्ति पाई ॥
'खूबचन्द' और 'चौथमल' कहे, सदा रहे सुयश छाया ॥ ४ ॥

[५७].

भाव की महिमा

(तर्ज.—लंगणी)

शुद्ध लेश्या परिणाम जोग, शुभ भली भावना भावेगा।
चेतन सुन प्यारे तू इस से ज्योति निरंजन पावेगा॥
आदिनाथ महाराज जिन्हों के नन्दन भरतेश्वर भूपाल।
छै खण्ड मांही जिन्हों की वरते आण अखण्ड रसाल॥
चौदहरत्न नवनिधि के नायक,सोलह सहस्रसुर अंगरखवाल।
राज सभा में विराज्या, सोहे ज्यों मोत्या बीच लाल॥
राणियां इतनी हैं जिनके, एक लाख बाणवे हजारजी।
महल बयालीस भूमियाँ, नाटक तणां झणकारजी॥
बत्तीस सहस नृप मुकुट धारी, हाजिर रहै दरबारजी।
और घणी है साहबी, क्या क्या करूँ विस्तारजी॥
एक दिन भरतजी सब सिणगार सजाया।
तन निरखन काजे शीश महल में आया॥
तिहां रत्न सिंहासन बैठ निरखते काया।
मुंदरी बिन उंगली देख, अचम्भा आया॥
दूजी मुंदरीजी जब खोली हाथ से पूरी, तब लागत सूनी सूनी।
पुद्गल का जी पुद्गल का स्वरूप विचारा,तब सब सिणगार उतारा॥
शुद्ध मन से जी फिर भली भावना भाई, जब केवल प्रगट्या थाई।
लियो संजमजी दश सहस्र भूप समझाया, भरत मुनिवर मोक्ष सिधाया॥
मन वाञ्छित कारज सिध होवे, जो ऐसी भावना भावेगा॥
चन्द्रगुप्त राजाजी के नन्दन, नाम जिन्हों का [1]प्रशनचन्द्र।
वीर जिनन्द की वाणी सुन, जोग लिया तजिया सब फंद॥
राजगृही नगरी तिण अवसर, विचरत आये वीर जिनन्द।
लेकर आज्ञा वन में, ध्यान धरा मुनि प्रशनचन्द्र॥
सूर्य सन्मुख नेत्र अरु, ऊँचे किये दोऊ हाथ जी।
ध्यान से चित्त चल गया, लोगों की सुन कर बात जी॥
जिनवर वन्दन कारने, सब निकला नर नाथ जी।
वन में आते हुवे, मुनि देखिया साक्षात जी॥

१ प्रसन्नचन्द्र।

श्रेणिक नृप प्रभुजी को वन्दे शीश नमाई।
प्रश्न पूछा कर जोड़ एक चितलाई॥
वन मांही खड़ा एक मुनि ध्यान के मांही।
इस वक्त चवें तो कौन गति में जाई॥

त्रिसला नन्दनजी त्रिसला नन्दन इम फरमावे, अब चवे तो सातवीं जावे।
विहां मुनिवरजी तत्क्षण मन को सुलटावे, भर्म मिटा ध्यान शुद्ध आवे॥
क्षण अन्तरजी फिर पूछ्यां जिनन्द फरमावे, अब चवे तो सर्वार्थ सिद्धि जावे।
श्रेणी चढतांजी तब केवल प्रगट्या आई, सुर महोत्सव किया हुलसाई॥

प्रसनचन्द्र मुनिराज मोक्ष गये, जिनका ध्यान लगावेगा॥२॥
धनदत्त सेठ का पुत्र कहिए, इलायचीनामां कुमार।
यौवनवन्ती देख नटवी का रूप मोह्या ततकार॥
आय महल में सोवा एकन्त,बात कही नहिं जावे बाहर।
जब मात पिता ने पूछिया कहो बेटा है कौन विचार॥
नटवी ब्याहो मुझ भणी, यों पुत्र कहे सुणो तातजी।
एक बात मानी नहीं समझा लिया बहु भांतजी॥
नट के पास आय कर यों सेठजी कहे बातजी।
कन्या दे मुझ पुत्र को, बहु द्रव्य दूं साक्षातजी॥

कहे नटवा सेठजी सुनिये बात हमारी।
कन्या ब्याहूँ तुम पुत्र रहै मुझ लारी॥
घर आय सेठ सुत से कहता हितकारी।
नहिं छोड़ी हठ जो ली मन मांही विचारी॥

एक नगरी जी नगरी में नाचने आया, बांसों पर खेल रचाया।
एक मुनिवर जी एक तपस्वी महा मुनिराया नगरी में गोचरी आया॥
रूपवन्तीजी कई तिरिया आहार बहरावे, मुनि नीची नजर लगावे।
नट चिंतवेजी अहो धिगधिग काम विकारा,धन जग में यह अणगारा॥
शुद्ध भावों से केवल पाया, यों कोई मोह छिटकावेगा।
नगरी अयोध्या आदिनाथ महाराज पधारे दीन दयाल॥
माता मोरा देवी पुत्र से मिलन काज आई ततकाल।
आदेश्वर तूं ध्यान खोल मुख बोल मुझे बतलाओ लाल॥
जिनवर नहिं बोलें, मात जब चले पीछे फिरके ततकाल।
हाथी ऊपर बैठ कर आते थे शहर मंझार जी।
माजी तो यों मन चिंतवे झूंठा सभी संसार जी॥

शुक्लध्यान में मोहकर्म का ततक्षण किया संहार जी।
भाव चरित शुद्ध कर पाया है केवल सार जी ॥
माजी मोरा देवी, उसही वक्त शिव पामी।
सूत्रों के बीच फर्माया सुधर्मा स्वामी ॥
यों शुद्ध भावों से कई जीव मोक्ष में जावे।
फिर फिर का चराऊ नाम पार नहीं आवे ॥
उगणीसेंजी उगणीसे छपन सुन भाई, फागन वदि चौदश आई।
तिन दिवसजी तिण दिवसे जोड़ बनाई, मैंने बैठ सभा में गाई ॥
मोटा मुनिवरजी कहूँ नाम देवजी जाहरो, चौदह ठाणा परिवारी।
गुरु चन्दूजी श्रीजवाहरलालजो अणगारी, तसु शरणो तुम चरणा रो
'खूबचन्द' और 'चौथमल' कहे सुख मिले भाव शुद्ध भावेगा ॥३॥

[५८]

परदेशी राजा का चरित्र

(तर्जः—लावणी)

केशी कुंवर महाराज सगण भव-सागर से तिरने वाले,।
मुनि मान ज्ञान क, आप अज्ञान तिमिर हरने वाले ॥
पार्श्वनाथ महाराज गये शिव धाम नाम जयकारी है ॥
जिनके शासन म हुवे मुनि आप बडे गुणधारी हैं ॥
चार ज्ञान चवदे पूर्वो अप्रतिबंध विहारी है ॥
तरु जिम समभावी दया निधि पूरण पर उपकारी है ॥
सावत्थी का बाग मे आये विचरते महाराजजी ॥
मुनि आगमन सुन वदवा कई जा रहे इन्सानजी ॥
परदेशी राजा का है चित नामा परधानजी ॥
भेजा हुआ आया यहा राजा के घर महमानजी ॥
इस ने भी सुनी यह बात हुलसाया ॥
बैठे रथ में मुनिराज समीपे आया ॥
फिर मौका देख गुरु ऐसा ज्ञान सुनाया ॥
खुल गये जिगर के नैन प्रेमरग छाया ॥

व्रत धार चित्त जी हुआ श्रावक सेठा,
महाराज विनय कर शीश नमायाजी।
रथ माही बैठ कर आप पीछा नगरी में आयाजी ॥
राज की तरफ से मिली खोल चितजी को,
महाराज, हिये अति हर्ष भरायाजी ॥
मुनिराज दर्शन के काज बाग में चल कर आयाजी ॥
करके वंदना सिताप, चित्तजी बोले यूँ साफ,
नगरी सितम्ब का आय, कभी करजो मया २ ॥
परदेशी नामा राय, एक माने जीव काय,
मोटो करे छे अन्याय, घट घालो दया २ ॥
मुनिराज ततकाल, दीनी बाग के मिसाल,
करक जवाब सवाल, मन प्रशन भया २ ॥
अर्ज कबूल कराय, वहा से तुरत सिधाय,
नगरी सितम्बका आय, हाल भूप को कया २ ॥

कब आवे मेरे गुरु यहा अब गय कारज सरने वाले ॥१॥
सावत्थी नगरी से इधा निधि सीतम्बका नगरी आया ॥
उपकार जानके, पाच से सतों को सग मे लाया ॥
चित्त प्रधान सुनि सुनि आगमन अति चैन चित मे पाया ॥
परदेशी भूप को करी तजबीज वहा लकर आया ॥
राजा और प्रधान दोनों, अश्व लिया कर धारजी ॥
इधर उधर टेलावता, आया नजर अणगारजी ॥
सुण चित्त यह जड़ मूढ, कौन है बेकारजी ॥
बैन तो मीठा लगे, है दीपता दीदारजी ॥
तब चतुर चित यू कहे सुनो महाराया।
यह केशी कुवर महाराज मैं भी सुन पाया ॥
यह अलग अलग दो मान जीव और काया ॥
है पूरण ज्ञान भण्डार तजी मोह माया ॥
इतनी सुन के नृप चितजी से रहा पूछी,
महाराज मुनि पां दोऊ मिल आयाजी ॥
ई अवधि ज्ञान तुम पास पूछे परदेशी रायाजी ॥
ज्यों दाण चोर बनिया उपट राह पूछे, मुनि दृष्टांत सुनायाजी।
तैने सतों का अपराध किया नहीं शीष नमायाजी ॥

सुन कर संतों के बैन, नृप किया नीचे नैन,
मेरे महल में सेन, जय कठिन कही २ ॥
राजा बोले यों मिजाप, क्षम्यावन्त साधु आप,
गुन्हा कीजे सब माफ, मेरी भूल रही २ ॥
थोड़ी वक्त के काज, यहां बैठूँ मैं आज,
मरजी होय तो महाराज, दीजे हुकम सही २ ॥
जरा समग राजान, यह तो तेरा ही आराम,
हम तो साधु है महान, करें मना नहीं २ ॥
राजा मन में जान गया ये मुझे निहाल करने वाले ॥२॥
बैठा भूप पूछे कर जोड़ी क्या मानो तुम करो मया ॥
सब भरी सभा में मुनीश्वर जीव अरु काया अलग कहा ॥
मेरा दादा था अति पापी नहीं थी उनके जरा दया।
वह आयुष्य करके तुम्हारी कहेन मुजब तो नर्क गया ॥
मैं पोता अति प्राण प्यारा, कहे मुझे वह आयजी।
तो जीव काया है अभेदी, मानूं तो तुम वायजी ॥
मधुर बैन मुनिवर कहे, सुन ध्यान धरके रायजी।
तेरा दादा नर्क से कैसे सके वह आयजी ॥
तेरी सूरीकन्ता नार करके सिणगारा।
अन्य पुरुष के साथे विलसे सुख ससारा॥
तेने खुद आंखों से देख लिया कर्म सारा।
सब बोल उसे क्या देवे दण्ड भूपारा ॥
तत्काल खड्ग निकाल उसे मैं मारूं,
महाराज करे तुमसे नरमाईजी।
मत मारो मुझे महाराज करू ऐसा कभी नाईजी ॥
क्या कहो आप मैं हरगिज कभी न छोड़ूं,
महाराज कहे फिर तर्क उठाईजी।
मैं मिलू कुटम्ब से जाय आऊं पीछे क्षण माहीजी ॥
राजा कहे यूं विचार, मेरा है वह गुन्हेगार,
में तो छोड़ू नहीं लगार, कैसे घर जावे २ ॥
इसी भव में साक्षात, उसके कुटम्ब के साथ,
दु ख आराम की बात, किम दरसावे २ ॥
तेरा दादा कहूँ साफ, करके अष्टादश पाप,
गया नरक में आप, यहां किम आवे २ ॥

जीव काया न्यारी मान, राज तू है विद्वान,
झूंठी टेक मती ठान, मुनि फरमावे २ ॥
नहीं मानूं महाराज तुम तो बुद्धि से कथन करने वाले ॥३॥
मेरी दादी थी गुणवन्ती दया धर्म से हटी नहीं।
करी बहुत तपस्या तुम्हारी कहन मुजब सुरलोक गई ॥
उनको कौन रोकने वाला वह अपने आधीन रही।
मैं था अति प्यारा आज दिन तक नहीं मुझ से आन कही ॥
दादी आ वर्णन करती, सुरलोक का बयानजी।
तो जीव काया है अलेदा, लेतो क्यों नहीं मानजी ॥
भूप कहे इस न्याय से, मेरा है मत परमानजी।
कीजे खुलासा बात का, बैठे हैं सब इन्सानजी ॥
इतनी सुन कर मुनिराज नजीर सुनावे।
कर स्नान भूप तूं देव पूजवा जावे ॥
एक पुरुष देख [1]ठारछ में तुझे बुलावे।
सच बोल वहां तूं जावे के नहीं जावे।
नरनाथ कहे जाना तो दूर रहने दो,
महाराज उधर देखुं भी नाईजी ॥
वह महा अशुची स्थान और दुर्गन्ध उस मांईजी ॥
इस मनुष्य लोक की दुर्गन्ध ऊंची जावे,
महाराज पांच सौ जोजन तांईजी।
इस कारण करके राय देव यहाँ सके न आईजी ॥
अब तो समझ तू राय, पक्ष छोड़ दे अन्याय,
अलग मान जीव काय, अपनी क्यों ताने २।
सच्ची कहूँ मुनिराय, यह तो बुद्धि से बनाय,
दीनी युक्ति जमाय, हम नहीं माने २ ॥
एक चोर हाथ आया, लोह कोठी में धराया।
पूरा जाबता कराया, ठाया पुरुषाने २ ॥
केही दिनों में कढ़ाया, वह तो मरा दर्शाया,
छेक नजर न आया, करी पहिचाने २ ॥
कैसे मानूं जीव अलग कहो संशय दूर करने वाले ॥४॥
लेकर ढोल को कोई पुरुष जाकर बैठे भूहरां मांई।
ऊपर से सिल्ला ढांक कर लेप करे अति चतराई ॥

[1] संडास, अशुचि स्थान।

भीतर ढोल का शब्द करे वहां बाहर निकसे के नाई।
मच बोल नरपति छिद्र कथा देवे किसी को दर्शाई।
छिद्र यदि के नहीं पड़े, पर शब्द निकले आयजी॥
प्रतीत कर इस न्याय म, परदेशी नामा रायजी।
जीव भेद पाषाण को, ऊंचा इसी तरह थायजी॥
दोनों चीजें हैं अलग, मान ले मुझ वायजी।
तुम बुद्धिमान मुनि मीनी युक्ति जमाई॥
मेरे तो दिल में हरगिज बैठे नाई
एक दिन चोर को मारा सास रुकाई।
लोह की कोठी में दीना उसे धराई॥
फिर ढक्कण दाँव छिद्र को बंध कराया,
महाराज रक्खा कीतने दिन तोईजी।
देखा तो ढोल के कीड़े बहुत उसके तन मांईजी॥
बाहिर से भीतर जीव जिधर से आए,
महाराज छिद्र देता दर्शाईजी।
तो लेता मान महाराज तर्क करता भी नाईजी॥

गोला लोहे का झाल, दिया अग्नि में डाल,
धमता देखा थे भूपाल, हाँ हाँ भूप कही २॥
धमे धमण दबाए, तामे अग्नि भराए,
उस गोले के राय, छिद्र होय या नहीं २॥
नृप कहे यों विचार, उस गोले के मझार,
छेद होय न लगार, यह तो बात सही २॥
बस यही मिसाल, मान मान महिपाल।
मिथ्या भरम को टाल मुनि बहुत कही २॥

नहीं मानूं महाराज तुम, तो बुद्धि मे कथन करने वाले॥४॥
मब जीवों की शक्ति सरीखी है या नहीं मुझे दीजे कही।
तब मुनिवर बोले सरीखी शक्ति है इसमें फर्क नहीं॥
तरुण पुरुष दिल चाहे यहां खूब डाले तीर तो पड़े जहीं।
इतनी ही दूर पै लघु बालक से कहो किम जाए नहीं॥
मनुष्य नया जीवा नयी ... धन्य समझे राय जी।
तरुण पुरुष जब तीर पाव जाय के नहीं जाय जी॥
भूप कहे हा क्यों न जावे मुनि दिया फिर न्याय जी।
धनुषादिक-करुणा हुवे तो फिर जाय-के नहीं जाय जी॥

इतना तो दूर यह तीर जाय कभी नाई।
बस यही न्याय तू समझ नृप मन मांही॥
यह तरुण पुरुष सम जीव धनुष तन मांई।
जैसा हो वैसा प्राक्रम दे दर्शाई॥
क्यों करे तान ले मान जीव और काया।
महाराज भूप कहे शीष हिलाईजी॥
तुम बुद्धिमान् महाराज मानूं मैं हरगिज नांई जी।
जितना लोहे का भार तरुण ले जावे॥
महाराज धरी कावड़ के मांई जी।
उतनी ही दूर अति वृद्ध क्यों न ले जाए उठाई जी।

जो यह बात मिलती महान जीव काया लेता मान॥
इतनी करने से तान मेरे गरज कहीं २।
कावड़ नवी हो तो राय, लोहा धरके उस माय,
तरुण पुरुष उठाय, लेकर जाय या नहीं २॥
नृप कहै हाँ ले जाय, फिर बोले मुनिराय,
कावड़ जीरण हो तो राय, अब बोल सही २॥
नहीं नहीं कृपाल, कावड़ जीरण दयाल।
मुनि जीव ये मिसाल, उतार दई २॥

नहीं मानूं महाराज तुम तो बुद्धि से कथन करने वाले।
पहले तोल आजू में चोर कू मारा खून निकला भी नहीं॥
किया प्रश्न सातवां फिर तोला तो वजन में आया नहीं।
कमती होता जरा वजन में तो मैं लेता मान सही॥
फिर तर्क उठा के सन्तों से झूठी तान करता भी नहीं।
हवा भरी चर्म बीवड़ी, देखी कभी ये रायजी॥
हां हां देखी स्वामीजी, कृपा करी फरमायजी।
पहले तोल बंध खोल के, नहीं रहे हवा उस मांयजी॥
फिर तोले तो वजन में, कमती होवे या नांयजी।

वह वजन मांय कमती तो हुवे कभी नहीं॥
बस यही न्याय तू समझ नृप मन मांही।
जो रूपी हवा नहीं देवे भार दर्शाई॥
तो जीव अरूपी ये क्या वजन गिनाई नांई।

क्यों करे तान, ले मान जीव और काया ।
महाराज भूप कहे शीष हिलाईजी ।
तुम बुद्धिमान महाराज मानूं मैं हरगिज नांईजी ॥
एक मारा चोर तत्काल बहुत खंड करके ।
महाराज जीव फिर देखा मांईजी ॥
जो आता नजर तो लेता मान हठ करता नांईजी ।
मुनि कहे यों विचार, राजा तूं तो है गंवार ॥
जैसा था वो कठियार, कोई फर्क नहीं २1
कठियारा किस न्याय, मुझे कहो मुनिराय ॥
आय दीजे फरमाय, मिटे भरम सही २ ।
मिल कर बहु कठियार, गया वन के मझार ॥
उसमें था एक गंवार, उसको ऐसे कही २ ।
इस अरणी से तत्कार, लीजे अग्नि निकार ॥
करजे रसोई तैयार, आवां इन्धन लही २ ।
वो मूर्ख अरणी को कापी खंड २ में अग्नि माले ॥
नहीं मिली अरणी में अग्नि, सोच करे आँसू डारे ।
इन्धन ले लेकर आए जंगल से वे सब कठियारे ॥
पूछी बात मूर्ख से तब तो वितक हाल कहा सारे ।
अरणी को घीस के बताई अग्नि काढ़ कर तत्कारे ॥
अहार कर फिर इन्धन लेकर गये वे नगरी मायजी ।
जैसा काम उसने किया वैसा करो थे रायजी ॥
[illegible] नहीं आवे नजरे रायजी ।

ऋषियों की सभा माय कोई वाद करे आय।
चाल सीधी चले नाय तैंना दुष्ट हिया २॥
जोश साधु को आय जद भूप फरमाय।
यह तो यही दण्ड पाय कहूँ सोफ इहां २॥
इस नीति को सभाल तू भी चला टेढी चाल।
तब मैंने भी महिपाल यही दण्ड दिया २॥
तुम सुणो हो कृपाल जी था पहला ही सवाल।
उस पै देने से मिसाल मैं तो समझ गया २॥

क्यों इतनी हट करी पूछे मुनि शिव सुख के वरने वाले।
दानादिक के काज आज महाराज प्रश्न किया विस्तारी॥
मुनि पूछे नृप से होते कहो कितनी किसम के व्यौपारी।
चार तरह के होते वणिक जाने बात दुनिया सारी॥
ले माल उधारा दाम देना फिर उनके अख्त्यारी।
देवे गुण बोले नहीं, गुण बोले देवे नाम जी॥
देवे और गुण भी करे, नहीं देवे शठ भिड़ जाय जी।
तीन योग्य व्यवहारिये अयोग्य एक कहेवाय जी॥
मैं भी जाणू है नृप तू चौथे सरीखा नाय जी।

विद्वान पुरुष तुम मांही बहुत चतुराई।
क्यों त्यों करके देते हो युक्ति जमाई॥
नवमों प्रश्न नृप करे सभा के माई।
है कैसा जीव तुम देवो अपना दर्शाई॥
मुनिराज कहे सुण नृपति इस दरखत का।
महाराज पत्र कहो कौन हिलावे जी।
नहीं देवादिक महाराज पवन इनको कपावेजी॥
क्या पवन चीज सब बोल नृप तू देखे।
महाराज नजर यह तो नहीं आवे जी॥
तो जीव अरूपी चीज कहो हम कैसे बतावेजी।
अरे बस तो छोड तान राजा तू है बुद्धिमान।
जीव काया न्यारी मान, बहुत देर भई २॥
प्रश्न करे फिर राय हाथी कुथुवा के मांय।
जीव सम है या नाय मुझे कहीजे वई २॥

क्यों करे तान, ले मान जीव और काया ।
महाराज भूप कहे शीष हिलाईजी।
तुम बुद्धिमान महाराज मानूं मैं हरगिज नांईजी ॥
एक मारा चोर तत्काल बहुत दंड करके।
महाराज जीव फिर देखा नांईजी ॥
जो आता नजर तो लेता मान हठ करता नांईजी ।
मुनि कहे यों विचार, राजा तूं तो है गंवार ॥
जैसा था वो कठियार, कोई फर्क नहीं २१
कठियारा किस न्याय, मुझे कहो मुनिराय ॥
आप दीजे फरमाय, मिटे भरम सही २ ।
मिल कर बहु कठियार, गया वन के मझार ॥
उसमें था एक गवार, उसको ऐसे कही २ ।
इस अरणी से तत्कार, लीजे अग्नि निकार ॥
करजे रसोई तैयार, आवां इन्धन लही २ ।
वो मूर्ख अरणी को कापी खंड २ में अग्नि भाले ॥
नहीं मिली अरणी में अग्नि, सोच करे आँसू डारे।
इन्धन ले लेकर आए जंगल से वे सब कठियारे ॥
पूछी बात मूर्ख से सब तो वितक हाल कहा सारे।
अरणी को घीस के बताई अग्नि काढ़ कर तत्कारे ॥
आहार कर फिर इन्धन लेकर गये वे नगरी मायजी।
जैसा काम उसने किया वैसा करो ये रायजी ॥
छती अग्नि अरणी माही नहीं आये नजरे रायजी।
जीव काया है अलेगी मान ले इम न्यायजी ॥
प्रतिष्ठित पुरुष तुम होकर सन्त सयाणा ।
इन बहुत मनुष्य का हुआ यहां पर आना ॥
जड़ मूढ़ कहा सो मुझे तो है गम खाना ।
पर है क्या योग आपको ऐसा वचन फरमाना ॥
तूं जाणे नृप सच बोल परिषदा कितनी ।
महाराज परिषदा चार बताई जी ॥
अब अलग अलग देंड नीति चारों की दे दरशाई जी ।
जो कोई पुरुष अपराध करे राजों का ।
महाराज देवे उसे सूली चढाई जी ॥
करे वैश्य जाति के बाहर महाण दे छाप लगाईजी ।

ऋषियों की सभा मांय कोई वाद करे आय।
चाल सीधी चले नाय सैना हुए दिया २॥
जोश साधु को आय जड़ मूढ फरमाय।
यह तो यही दण्ड पाय कहूँ साफ दहां २॥
यस नीति को संभाल तू भी चला टेढ़ी चाल।
अब मैंने भी महिपाल यही दण्ड दिया २॥
तुम सुणो हो कृपाल जो या पहला ही सवाल।
उस पै देने से मिसाल मैं तो समझ गया २॥

क्यों इतनी हट करी पूछे मुनि शिव सुख के वरने वाले।
ज्ञानादिक के काज आज महाराज प्रश्न किया विस्तारी॥
मुनि पूछे नृप से होते कहो कितनी किसम के व्यौपारी।
चार तरह के होते वणिक जाने बात दुनिया सारी॥
लें माल उधारा दाम देना फिर उनके अख्त्यारी।
देवे गुण बोले नहीं, गुण बोले देवे नाम जी॥
देवे और गुण भी करे, नहीं देवे शठ भिड़ जाय जी।
तीन योग्य व्यवहारिये अयोग्य एक कहेवाय जो॥
मैं भी जाणूं है नृप तूं चौथे सरीखा नाय जी।

विद्वान पुरुष तुम मांही बहुत चतुराई।
क्यों त्यों करके देते हो युक्ति जमाई॥
नवमां प्रश्न नृप करे सभा के मांई।
है कैसा जीव तुम देवो अपना दर्शाई॥
मुनिराज कहे सुण नृपति इस दरखत का।
महाराज पत्र कहो कौन हिलावे जी।
नहीं देवादिक महाराज पवन इनको कंपावेजी॥
क्या पवन चीज सच बोल नृप तू देखे।
महाराज नजर यह तो नहीं आवे जी॥
तो जीव अरूपी चीज कहो हम कैसे बतावेजी।
अरे अब तो छोड़ तान राजा तू है बुद्धिमान।
जीव काया न्यारी मान, बहुत देर भई २॥
प्रश्न करे फिर राय हाथी कुंथुवा के मांय।
जीव सम है या नाय मुझे कहीजे यहं २॥

निश्चय समझ तू राय हाथी कुंथुवा के माय।
जीव सरीखा गिनाय कोई फर्क नहीं २ ॥
मोटी चीज मुनिराय कैसे छोटी में समाय।
कहो नजीर लगाय मिटे मर्म मई २ ॥

दी नजीर दीपक भाजन की न्याय पंथ चलने वाले।
अब तो मान जीव और काया क्यूं इतनी तू कहलावे।
तब बोला नरपति पुराणी श्रद्धा नहीं छोड़ी जावे ॥
लोह बनीयां की तरह याद रख अरे नृप तू पछतावे।
मुनि साफ सुनाई छोड़ मिथ्या श्रद्धा क्यों शरमावे ॥
लोह वनियां कैसा हुवा, तुम कहो मुझे समझायजी।
तब मुनि कहै यह भी सुन ले, एक ध्यान धर कर रायजी ॥
धनार्थी बहु वाणिया जाता था जंगल मांयजी।
एक खान देखी लोहे की, लीना है सब ने उठायजी ॥

आगे आता तांबा की खान जब आई।
ले लिया तुर्त सब लोह दिया छिटकाई ॥
था एक अनाड़ी उसने माना नाई ॥
कर दया दृष्टि सब लोक रया समझाई।

रूपे की खान, सोने की फिर रत्नों की,
महाराज वज्र हीरों की आईजी।
ले लिया अधिक से अधिक तजा सस्ते कुं वहां हीजी ॥
सब लोक कहे लेले तू भी क्या देखे,
महाराज मूढ हठ छोड़े नाईजी।
मैं बहुत दूर का लिया भार किम दूं छिटकाईजी ॥

ले ले के धन माल, अति होके खुशहाल,
घर आये सब चाल, अति सुख पावे २।
उस मूरख की बात, अब सुनो नरनाथ,
लिया लोहे कुं साथ, बेचन जावे २।
सीधा बाजार में आया, बेचा लोहा जो लाया,
मूल्य थोड़ासा आया, मन पछतावे २।
दीनी मैंने जो मिसाल, ऐसा तू है महीपाल,
लीजो अब ही संभाल, मुनि फरमावे २।
साफ साफ मुनिराज कही राजा से नहीं डरने वाले ॥१०॥

नहीं यनूं ओछ बनिया जैसा कहे नृप यों कर जोड़ी।
मन वच काया से मैंने तो मिथ्या श्रद्धा छोड़ी॥
मान लिया जीवादिक मैंने बहुत करी लम्बी चौड़ी।
दिल में मत लाना क्यों कि महाराज मेरे में बुध थोड़ी॥
अब मुझको धर्म देशना, फरमावो कृपानाथजी।
वैराग्य रंग ऐसा चढ़े, उतरे नहीं दिन रातजी॥
मधुर कथा मुनिवर कही, तब जोड़ी दोनों हाथजी।
श्रद्धया वचन मैंने आपका यूं विनवे नरनाथजी॥
वे धन्य पुरुष जो संयम का व्रत धारे।
ऐसे तो भाव नहीं है महाराज हमारे॥
मुझे श्रावक का व्रत दीजे कीजे भव पारे।
बिन ऐसे गुरु के कौन करे निस्तारे॥
तब मुनिराज महिपति को व्रत धराया,
महाराज बहुत उपकार कमायाजी।
गया निज स्थानक महिपाल, खुशी का पार न पायाजी॥
फिर दूजे दिन बहु विधि सज कर असवारी,
महाराज महिपति वंदन आयाजी।
कर जोड़ नमाकर शीष सभी अपराध खमायाजी॥
राजा सुन ले एक सीख, मत होजे अरमणीक,
अरे पालजे तू ठीक, व्रत नेम लिया २।
मेरा जितना है राज, उस राज के महाराज,
कुल चार हिस्से आज, मैंने किया २।
चौथे हिस्से का आदान, दुःखी दुर्बल गिल्यान,
ताकूं दूंगा मैं दान, कहूं प्रगट इयां २॥
पाये सुयश अपार, करके बहु उपकार,
लेकर संतों को लार, मुनि विहार किया २॥

(तर्जः—गुरु निर्ग्रन्थ नहीं जोया जीव तैमें गुरु निर्ग्रन्थ नहीं जोया रे)

गुरुजी मिले मुझे ज्ञानी पुण्य से गुरुजी मिले मुझ ज्ञानी रे॥
कर जोड़ी राजा परदेशी इण विधि बोले वाणी रे।
मोह नींद से आप जगायो छिटक ज्ञान को पाणी रे॥१॥
भेद दियो अपुन अन्धेरो, दो शिक्षा हित आनी रे।
मैं उपकार कभी नहीं भूलूं, निश्चय लिजो जानी रे॥२॥

दया करी फिर दर्शन दीजो, मिष्ट [१]सुनाजो वानी रे।
भव दुःख से मुझ आप छुड़ाजो, भक्त आप को जानी रे॥ ३॥
दो ठाणा मिल आया रोहतक से, अर्ज मायां की मानी रे।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य साथे, जोड़ बनाई [१]कानी रे॥ ४॥
नर नारी गुण बोल रहे नगरी में सुख करने वाले॥
महिपति भी निज भवन गया श्रावक का व्रत शुद्ध पाले हैं।
वैराग्य रंग में मस्त अतिचार दोष को टाले हैं।
करके तपस्या पूरब संचित पाप कर्म को गाले हैं॥
सुद उसी दिन से राज्य का काज भी नहीं संभाले है।
प्राणवल्लभ रायनी तब सुरीकंता नार जी॥
कोई दिन मन चिंतये मर्यो है मुझ भरतार जी।
निज पुत्र को लिया बुलवायके यों बोले शंक निवार जी।
तुम पिता को अग्नि या विष शस्त्र से दे मार जी॥
सब राज्य पाट मैं देऊंगी तुझ तांई।
इतनी सुन के हां ना भी कहा कछु नांही॥
फिर वही बात दो तीन दफे फरमाई।
बिन उत्तर दिया गया तत्क्षण कुंवर चलाई॥
तब पापण बुद्धि नार विचारे मन में महाराज कीजे अब कौन उपायाजी।
विष मिश्रित आहार बनाय पति को न्यौत जिमाया जी॥
एक लेता मांस नृप जाण गया बुद्धि से।
महाराज राणी पर रोष न लाया जी॥
उठ चला आप सिताप, धर्म स्थानक में आया जी।
विधि सहित चट पट, किया अणसण झट पट॥
नहीं काहूँ से लट पट, नृप अडोल रया २।
पूर्व पाप को पखाल, शुद्ध भावों में भूपाल॥
करके काल समय काल, पहले स्वर्ग गया २।
महा विदेह क्षेत्र मांय, अष्ट कर्म को खपाय॥
जासे मुक्ति के मांय, जिनराज कया २।
संवत गुणोसे छत्तीस, ऊपर अधिक बत्तीस॥
पूरे दिन एक विश, स्यालकोट रया २।
मेरे गुरु नन्दलालजी मुनि जिनवर से ध्यान धरने वाले॥

---

१ कहानी।

[५६]

टके टके की चार बातें

(तर्ज:-जंबू कह्यो मान लेरे माया मति लेवो संजम भार)

चतुर नर सांभलो कहूँ बात कथा अनुसार ॥टेर॥
जंबूद्वीप सुद्वीप काजी, भरत क्षेत्र के मांय,
नगरी भली सोभावतीजी, बलवंत नामा राय ॥१॥
चतुरंग सेना सामटीजी, धन का भरया है भंडार।
महाराणी सुज मालिकाजी, भोगवे भोग उदार ॥२॥
एक दिन नृप इच्छा हुईजी, हयवर[1] आरूढ होय।
सैर करन ने नीकल्योजी, साथे नौकर नहीं कोय ॥३॥
चमक्यो हय कोई कारणेजी, धावे जंगल मांय।
जिम जिम खेंचे लगामने जी, तिम तिम आघो[2] जाय ॥४॥
भूपति पिण सेठो[3] रह्योजी, साहस दिल माही धार।
सहजे ही हय उभो रह्यौजी, नृप लीनो पुचकार ॥५॥
पानी को प्यासो थकोजी, घबरायो महाराय।
व्याकुल चित्त हय फेरियोजी, आयो मारग मांय ॥६॥
चलता दूरथी देखियोजी, सुग्रीव नामा ग्राम।
तरुवर शीतल छाह मे जी, आय लियो विश्राम ॥७॥
जाट सुणो थको जांणियोजी, पंथी को देख दीदार।
खाट बिछायो आपणोजी, बैठाय कर मनुहार ॥८॥
निज नारी ने इम कहेजी, आव आव इहां आव।
शीतल जल लोटो भरोजी, पुण्यवंत नर ने पाव ॥९॥
ते कहे तुम ही ऊठनेजी, क्यों नहीं देवो पिलाय।
किण किण ने पाया करूंजी, कई आवे कई जाय ॥१०॥
बावली मान मेरो कह्योजी, हठ मत कर इणवार।
तुमे टका एक एक नीजी, बात सुणावसुं चार ॥११॥
तब तो उठ उतावलीजी, दीनो उदक पिलाय।
अब कहो चारों बातडीजी, नृप ही सुणे चित लाय ॥१२॥

१ घोड़ा। २ आगे। ३ पक्का।

१ मारी रक्खें आते पीहर मेंजी, २ पर को सौंपे निज काय।
३ निर्दय की करै नौकरीजी, ४ धूर्त के घरियो दाम ॥१३॥
चारों ही अयोग्य छेजी, इण में संशय नाय।
ऋषियों के मुंह सांभलयोजी, आखिर ते पछताय ॥१४॥
झटपट. उठ्यो भूपतिजी, अश्व हुयो असवार।
निज नगरी में आवियोजी, हर्ष्यो सहु परिवार ॥१५॥
चट पट लागी चित में जी, खुद ससुराल में जाय।
राणी की परीक्षा करूंजी, भर्म सहु मिट जाय ॥१६॥
तुरत बुलाय दीवाननेजी, राज को काज भोलाय[1]।
प्रजा की करजो पालनाजी, निरपक्ष लेकर न्याय ॥१७॥
बात किहां करजो मतीजी, जाऊं छूं मैं सुसराल।
मास दो मास के अंतरेजी, शीघ्र ही आऊं चाल ॥१८॥
मोहरां लीनी डेढ सौ जी, फिर लीनी पंच लाल।
ब्राह्मण रूप बनायने जी, पहुंच्यो वे ससुराल ॥१९॥
ब्राह्मणी के घर ठेरियोजी, आठों ही पहर निवास।
मोहरां भी थापण रखीजी, जाण अति विश्वास ॥२०॥
नौकरी काजे फिर रह्योजी, करतो बहुत तलास।
फिरतां फिरतां आवियोजी, राय का रक्षक पास ॥२१॥
इहां करो तुम नौकरीजी, कर ली खुलासा बात।
पांच रुपये माहवार के जी, जीमो रसोड़े भात ॥२२॥
हुक्को पाणी पिलावणो जी, मौज करो दिन रात।
कर मंजूरी रह गयोजी, श्रोता सुणो आगे बात ॥२३॥
राणी इणहिज रायनीजी, रक्षक घर हर बार।
आवे जावे रामत करेजी, अनुचित भी व्यवहार ॥२४॥
रे निर्लज्ज कुलक्षणी जी, भूल गई कुल जात।
जब मुझ को निश्चय हुओजी, जाट कही सच बात ॥२५॥
छिणछिण साम्हे देखतीजी, राणीजी नजर पसार।
अनुमाने कर [2]ओलख्योजी, यो तो मुझ भरतार ॥२६॥
रोष करी कुलटा कहेजी, नौकर की बदनीत।
छिद्र रहे नित देखतो जी, तुम को करसी फजीत ॥२७॥

१ सम्भला कर। २ पहिचाना।

मूल थी एह द्दणावणीजी, तब मुझ मन संतोष।
नहीं तो मुझ हत्या तणीजी, तुम सिर होगा दोष ॥२८॥
शीघ्र सोवाग बुलायनेजी, भृत्य दियो पकड़ाय।
प्राण घात इणकी करोजी, जंगल मांय ले जाय ॥२९॥

किहां ले जावो मुझ भणीजी, पूछे तव महिपाल।
ले जावां तुझ मारवाजी, हुकम दियो कोटवाल ॥३०॥
मत मारो करुणा करोजी, तुम आवो मुझ लार।
मोहरां देऊं डेढ सो जी, मुझ छोड़ो इण वार ॥३१॥

सब मिल आवे पंथ में जी, मन सोचे नरनाथ।
निर्दय की बुरी नौकरी जी, जाट कही सच बात ॥३२॥
ब्राह्मणी के घर आवियोजी, बात कहे चुप चाप।
मोहरां रक्खी थी डेढसौजी,ते सब दो इणको आप ॥३३॥

ब्राह्मणी सुन साम्हे पडीजी,जाय तेरो सत्यानाश।
रे रे नपूता[१] खोजम्याजी,मोहरां रक्खी किण पास ॥३४॥
कुछ भी बोल नहीं सक्योजी, मौन रह्यो महिपाल।
दीधी तुरत सोवागनेजी, पांचों ही लाल निकाल ॥३५॥

आपत्ति सब दूरी टलीजी, मन चिंते नरनाथ।
धूर्त के घातीन स्थापवोजी, जाट कही सच बात ॥३६॥
धन गया की चिंता नहींजी, बचिया अपना प्रान।
कोई किसी को सगो नहींजी,सब जग लीनो जान ॥३७॥

जावो भाई घर आपणेजी,मैं भी जाऊं निज ठाम।
एम कही सब चालियोजी, पहुंचे निज निज गाम ॥३८॥
आपणो राज संभालियाजी,आनंद में दिन जाय।
अब मैं जाऊं निज सासरेजी, इम चिंते महाराय ॥३९॥

मंत्री ने राज भोलावियोजी, आडम्बर लेई लार।
आयो निज ससुराल में जी,दियो आवास उतार॥ ४०॥
राणी देख विचारियोजी, ते तो हो नर और।
पति मारी ने मरावियोजी, पाप कियो महा घोर ॥४१॥

कई दिन राख्या पाहुणाजी, कर करके मनुहार।
अन्त विदा में दियो घणोजी, धन वस्त्रादिक सार ॥४२॥

---

१ हरामखोर-चाण्डाल । २ सत्यानाशी ।

और चहावे सो मांगो तुम्हेजी, इम बोले महिपाल ।
एक तो दीजे यो ब्राह्मणीजी, दूजो दीजे कोटवाल ॥४३॥
मुंह मांगा दोही दे दियाजी, निज राणी लेई लार ।
चाल्यो नृप सुसराल से जी, करके आप जुहार ॥४४॥
शोभावती नगरी विषेजी, आयो बलवन्त राय ।
आपणो राज संभालियोजी, आनंद में दिन जाय ॥४५॥
एक दिन कोप्यो भूपतिजी, कहे चक्षु कर लाल ।
एक राणी दूजी ब्राह्मणीजी, तीजो आणो कोटवाल ॥४६॥
तीनों खड़ा किया सामनेजी, रक्षक से पूछे एम ।
उन नौकर को बेगुनाहजी, तुम मरवायो केम ॥४७॥
हुको पाणी भर लावतोजी, करतो वक्त व्यतीत ।
इण दुष्टा की केण से जी, क्या समझी बदनीत ॥४८॥
ते कहे हां सब सत्य छै जी, इण में झूंठ न कोय ।
भूप कहे करणी जैसाजी, अब फल लीजो जोय ॥४६॥
अब राणी ने इम कहेजी, रोष करी महाराय ।
रे निर्लज व्यभिचारणीजी, मर जाति विष खाय ॥५०॥
अपणो शब्द संभालले जी, किण की है बदनीत ।
आपणा पति छोड़ के जी, पर नर सेवी प्रीत ॥५१॥
इम सुण राणी चितवेजी, मैं थी खुद असराय ।
मनुष्य मराव्यो ते सहीजी, प्रगट हुओ ते पाप ॥५२॥
भोगव तूं कृत्य आपणोजी, कब हूँ न छोड़ूं तोय ।
भृत्य की जो हुई गतिजी, वही गति तुझे होय ॥५३॥
भूप कहे सुन ब्राह्मणीजी, तुझ घर कीधो निवास ।
मोहरां रखी थी डेढसौजी, जाणी अटल विश्वास ॥५४॥
जब आपत्ति के वक्त मेंजी, मोहरां मांगी थी आय ।
मातंग को देई आपणाजी, ले सूं प्राण बचाय ॥५५॥
ब्राह्मणी निम सान्हे पड़ीजी, बोली सो बोल संभाल ।
निर्दय होय दगो दियोजी, कर्म किया थे चंडाल ॥५६॥
तीनों को जेल धरावियाजी, फेर होगा सब न्याय ।
मंत्री आय मुजरो कियोजी, तब बोले महाराय ॥५७॥
लाभ खर्च भंडार को जी, दीजे हिसाब बताय ।
इम सुण मंत्री कंपियोजी, कीजे कौन उपाय ॥५८॥

जांच परताल पंचा करीजी, एक लियो सत्य पक्ष ।
सर्व हिसाब मिलावताजी, घाटो जच्चो तीन लक्ष ॥५६॥
ये सुन बात दिवान की जी, रोष भरयो महाराय ।
चारों को शूली की संजाजी, आज्ञा दीनी फरमाय ॥६०॥
प्रजा मिल अरजी करेजी, आप दीन दयाल ।
ये दंड माफ करो तुम्हेजी, दूसरी राह निकाल ॥६१॥
हट खैंची मानी नहींजी, आखिर भूप दयाल ।
चारों का नाक कटायनेजी, दे दियो देश निकाल ॥६२॥
इम राजा मन चिन्तवेजी, पूर्ण करी पहिचान ।
जिसको अपणा जाणियेजी, सो ही करे नुकसान ॥६३॥
अहिंसा धर्म है आपणोजी, सब सुख को दातार ।
चोथो शरणो जिन कह्योजी, जगत में एक आधार ॥६४॥
सुमीत नाम का आट नेजी, बुलवायो तिण वार ।
बात टका टका एक नीजी, तुम्हें कही थी सार ॥६५॥
मैं भी सूतो सुणी आट पैजी, बात कही जब चार ।
चारों परीक्षा मैं करीजी, सांच कहूँ इण वार ॥६६॥
प्राण बचा जीव तो रह्योजी, पायो नवो अवतार ।
राज रिद्ध सब भोगवूंजी, सब तेरो उपकार ॥६७॥
भूप खुशी हुवो आट पैजी, प्रगट्यो प्रेम अथाग ।
दीधो बहुत इनाम मैं जी, सहस्र दीनार पोशाक ॥६८॥
जिन धर्म छै सांचो सगोजी, और सगो नहीं कोय ।
आराधन जो कोई करेजी, ते नर सुखिया होय ॥६९॥
उस ही दिन से भूपति जी, पांचो इन्द्रिय वश कीध ।
दानादिक शुभ कार्य में जो, बहु विध लाहो लीध ॥७०॥
ममत्व नहीं कोई वस्तु पैजी, समभावे महिपाल ।
स्वर्ग सिधाई आत्माजी, काल समय कर काल ॥७१॥

[६०]

श्री भरत चक्री सूर्योदय

(तर्ज:—ख्याल)

भरतेश्वर राजा,, पाया पूरण रिद्ध पूरव पुण्य से ॥
जम्बू द्वीप का भरत क्षेत्र में, तीजा आरा मांय।
देवलोक सम कही विनीता, नगरी श्री जिनराय हो ॥१॥
तिहां भोगवे राज भरतजी, पुरुषोत्तम नरनाथ।
ऋषभदेवजी तात आपका, सुमंगला अंगजात हो ॥२॥
चक्र रत्न[1] आय उपनो सरे, शस्तर शाला मांय।
आयुध घरियो पुरुष देख कर, दीनी बधाई आय हो ॥३॥
भूपति सूण लिया पुरुष को सरे, कीनो बहु सतकार।
चक्र रत्न जाय पूजियो सरे, कर महोत्सव विस्तार ॥४॥
विधि सहित पूज्या थकां सरे उठयो आप स्वमेव।
चन्द्र मंडल जिम शोभतो सरे, सहस्र देव करे सेव हो ॥५॥
चउ विध सेना सज करी सरे, भरतेश्वर महाराज।
गजारूढ हो निकलिया सरे, षट खंड साधन काज हो ॥६॥
चक्र रत्न आगे चल्यो सरे, गगन पथ के मांय।
योजन योजन अतरे सरे, सुख से बसता जाय हो ॥७॥
मारग में नृप आण मनाता, लेता भेटणो आप।
आगे आगे बढतो जावे, प्रगटे तेज परताप हो ॥८॥
पूर्व दिशा में चालता सरे, लवण समुद्र पास।
चक्र रत्न तिहाँ उतरियो सरे, कीनो आप निवास हो ॥९॥
गज हौदे वरधान[1] रत्न पर, दियो हुक्म प्रकाश।
पौषध शाला तुरत बनाओ, और एक आवास हो ॥१०॥
देव प्रभावे दोनों चीजाँ, मुहुर्त एक मझार।
हुक्म होन की देर काम में लगे, नही कछु वार हो ॥११॥
गज से उतर पधारिया सरे, पौषध शाला मॉय।
मागध नामा देव को सरे, तेलो दीनो ठाय हो ॥१२॥

---

१ चक्रवर्ती के चौदह रत्न होते हैं।

चौथे दिवस पार कर पौषध, लेकर सेना लार।
रथ में बैठ भरतजी चाल्या, लवण समुद्र मझार हो ॥१३॥
द्वादश योजन दूर रहीने, खैंच चलायो बाण।
मागध नामा देव की सरे, पड्यो सभा में आण हो ॥१४॥

बाण देख कर कोपियो सरे, बोलयो होकर लाल।
नाम बांच तत्क्षण देवता, प्रसन्न हुओ तत्काल हो ॥१५॥
कुंडल मुकुट कडावलि वस्तर, और गला का हार।
बाण सहित ले भेटणो सरे, आय नम्यो चरणार हो ॥१६॥

लेय भेटणो भरतजी सरे, कर सुर को सन्मान।
आण मनाय विदा कर दीनो, देव गयो निज स्थान हो ॥१७॥
हुई फतह रथ फेरियो भरे, आया कटक के माय।
कर तेला को पारणो सरे, बैठा सभा में जाय हो ॥१८॥

अट्ठाई महोत्सव कियो सरे, मागध सुर को राय।
कटक उठाई चालिया सरे, दक्षिण दिशा में जाय हो ॥१९॥
समुद्र के तट कटक स्थापके, तेलो दीनो ठाय।
पूर्ववत वरदाम देव को, दीनो आण मनाय हो ॥२०॥

इम दिज फिर तीजो तेलो कर, साध्यो सुर परभास।
उत्तर दिशा में चालतां स कियो, सिंधु तीर निवास हो ॥२१॥
सिंधु देवी साधवा सरे, चतुर्थ तेलो ठायो।
तत्क्षण आसण कंपियो सरे, अवधि ज्ञान लगायो हो ॥२२॥

कनक कुंभ मणि रत्न जडित, एक सहस्र अष्ट प्रमाण।
दो भद्रासन मुंघामोल का, और पूर्ववत जाण हो ॥२३॥
नजराणो कियो भेट में सरे, भरत भूप पे आय।
देवी आण अंगीकार करीने, आई निज दिश जाय हो ॥२४॥

अट्ठाई महोत्सव कियो सरे, चाल्या कोण ईशाण।
पास गिरि वैताढ के सरे, कटक स्थापियो आण हो ॥२५॥
गिरि वैताढ कुमार देव को, तेलो पंचमो ठायो।
सिंधु देवी की तरह सरे, लेय भेटणो आयो हो ॥२६॥

भरत भेटणो लेय ने सरे, दीनी आण मनाय।
महोत्सव कर निज कटक उठाई, पश्चिम दिशा में जाय हो ॥२७॥

इसी प्रकार।

तमस गुफा के बारणे सरे, डेरा दीना राय।
कर तेलो कृत माल देव को,स्मरयो ध्यान लगाय हो ॥२८॥
चौदश भूषण को भर हाथों, श्री देवी के काज।
किया भेटणो आयने सरे, भेट्या श्री महाराज हो ॥२६॥
कर सत्कार विदा कर दीनो, सेनापति बुलाय।
पश्चिमखंड जाय वश करो सरे,हुकम दियो महाराय हो ॥३०॥
सेनापति सुसेण नाम महा, शूरवीर ने धीर।
षटविध सेना सज्ज कर आयो, सिंधु नदी के तीर हो ॥३१॥
धर्मरत्न जल ऊपर स्थापियो, हुओ नाव आकार।
सेना सहित, बैठ किश्ती में, उतरयो पैली पार हो ॥३२॥
सम विषम ऊंची और नीची, सर्व ठिकाणे जाय।
भरत भूप का नाम की सरे, दीनी आण मनाय हो ॥३३॥
सेनापति के आयो भेट में, क्रोडां को धन माल।
पीछो फिर सिंधु नदी के, आयो किनारे चाल हो ॥३४॥
चरमरत्न से वही विधिकर,पार उतर कर आया।
जय,विजय कर भरत भूप को, सेनापति बधाया हो ॥३५॥
जो जो अर्थ भेट में आयो, ठव्यो भूप के पास।
कर सत्कार विदा कर दीनो,आयो निज आवास हो ॥३६॥
कर स्नान भोजन करी सरे, निज तम्बू के मांय।
शब्दादिक सुख भोगवे सरे, आनंद में दिन जाय हो ॥३७॥
कई दिना के अंतरे सरे, सेनापति बुलवाय।
तमस गुफा का खोलो द्वार यों,हुक्म दियो महाराय हो ॥३८॥
सेनापति हिये हर्ष धरीने, कियो वचन परमाण।
तीन दिवस को तेलो करके, रथ में बैठो आण हो ॥३६॥
लेकर सेना साथ में सरे, और घणो परिवार।
आयो गिरि वैताढ़ जहां पर, तमस गुफा द्वार हो ॥४०॥
प्रथम पुंजियो द्वार को सरे, फिर कूडी जल धार।
चंदन चर्ची, धूप देयकर, पुष्प चढाया सार हो ॥४१॥
रूपा का चांवल से मांड्यों, आठ आठ मंगलीक।
पंच वर्ण फूलां तणां सरे, कियो पुंज रमणीक हो ॥४२॥

१ रक्खा।

सात आठ पग पाछो हट कर, दंड रत्न ले हाथ ।
कर प्रणाम द्वार को फूट्यो, जोर जोर के साथ हो ॥४३॥
तीन देफे कूट्या थकां सरे, सररर खुलिया द्वार ।
भरत भूप को दीनी बधाई, आकर कटक मझार हो ॥४४॥
कर तेला को पारणो सरे, सेनापति सरदार ।
शब्दादिक सुख भोगवे सरे, नाटक का झणकार हो ॥४५॥
कटक उठायकर चालिया सरे, गज पर बैठ नरेश ।
तमस गुफा के दक्षिण द्वारे, हुवा आप प्रवेश हो ॥४६॥
मणिरत्न को गज मस्तक पर, मेल्यो होय हुल्लास ।
अन्धकार को नाश हुवो जिम, पूनम को प्रकाश हो ॥४७॥
लेय कांगणी रत्न नरपति, पूर्व दिशा के मांय ।
प्रथम मांडलो खैंचियो सरे, सूरज सम दरसाय हो ॥४८॥
लिखता जावे मांडला सरे, योजन योजन दूर ।
उमगजला मोटी नदी स, तिहां आया श्री हजुर हो ॥४९॥
बेरा दे तरखान रत्न पर, हुक्म दियो महाराय ।
स्तम्भ अनेक अचल पुल बांधी, दीनी आशा भलाय हो ॥५०॥
पुल पर भूप कटक ले निकल्या, होतां शब्द का नाद ।
निमंगजला नदी फिर आई, दो योजन के बाद हो ॥५१॥
निमहिजे ते पिण उतरिया सरे, भरतेश्वर पुण्यवंत ।
पहुँच गया दरवाजे जहांपर तमस गुफा को अंत हो ॥५२॥
बारह योजन चौड़ाई में, ऊंची योजन आठ ।
आर पार लम्बी कही सरे, साठ मांय दस बाठ हो ॥५३॥
आप ही आप खुल गई गुफा जद, सेना निकली बहार ।
देख अभाड़ खिलायती सरे, सज आव्या तिणवार हो ॥५४॥
भिड़िया भरत की फौज सु सरे, दशोंदिश दीनी भगाय ।
सेनापति चढ़ अश्व रत्न पर, कर में खड्ग समाय हो ॥५५॥
लोकों के पीछे पड़या सरे, पीछा दिया भगाय ।
वस्त्र तजे सिंधु की रेत में, तेला दीना ठाय हो ॥५६॥
मेघ मुख नागकुमार देवता, समरिया ध्यान लगाय ।
कष्ट तणो प्रभाव सूं सरे, हाजिर होगया आय हो ॥५७॥
कहो किण कारण याद किया तब, सब जन बोल्या वाय ।
कौन अभागी आवियो सरे, इनको देवो हटाय हो ॥५८॥

देव कहे सुणजो सब लोकां, ये भरतेश्वर राय ।
सामर्थ्य नहीं सुरेन्द्र की सरे, इनको देवे हटाय हो ॥५९॥
अंतर चले न मंतर इन पर, साफ साफ हम केहवां ।
सो पिण तुम्हारी प्रीत निभावा, कुछ उपसर्ग कर देवां हो ॥६०॥
एम कही भरतेश्वर ऊपर, आविया गगन के मांय ।
गाज बीज बादल पाणी की, दीनी झड़ी लगाय हो ॥६१॥
चर्म रत्न होगयो धीठरो, छत्र रत्न की छाया ।
पसर गया बारह योजन में, कटक सभी सुख पाया हो ॥६२॥
सात दिवस होगया बरसतां, कीनो भरत विचार ।
कौन अकाल मरण को वांछक, छोड़ रह्यो जल धार हो ॥६३॥
भरतेश्वर महाराज का सरे, सोलह सहस्र सुर जाय ।
नागकुमार मेघमुख सुर से, बोल्या इण पर आय हो ॥६४॥
अहो देव तुम नहीं जाणो यह, भरतेश्वर महाराज ।
रिद्ध समेटो आप की सरे, नहीं तो परभव आज हो ॥६५॥
बात सुणी सुर धूजिया सरे, लीनी रिद्ध समेट ।
आय कहे तिण लोक को सरे, निर्भय रहो नहीं पैठ हो ॥६६॥
जो सुख चाहो आप को सरे, भरत भूप पा जाय ।
मुंघा मोल को करो भेटणो, लेवो अपराध खमाय हो ॥६७॥
या विधि कह कर देव गया तब, उठ्यो सगलो साथ ।
कर स्नान नजराणो लेयकर भेट्या आय नरनाथ हो ॥६८॥
लेय भेटणो भरतजी सरे, कर पीछो सत्कार ।
आण मनाई आपकी सरे, हो रह्या जय जयकार हो ॥६९॥
सेनापति सुसेण बुलाई, हुक्म दियो महाराय ।
उत्तर भरत पश्चिम खंड साध्यो, तिणविध लीजो जाण हो ॥७०॥
सेना सज कर निकलियो सरे, कर आज्ञा परमाण ।
दक्षिण भरत पश्चिमखण्ड साध्यो, तिणविध लीजो जाण हो ॥७१॥
आगे कोण ईशाण में सरे, चलिया भरत नरेश ।
चूल हिमवंत पर्वत पासे, कीनो आप प्रवेश हो ॥७२॥
वहां पर फिर पौषध शाला में, तेलो सातमो ठायो ।
चूल हिमवत गिरी देव को, साधन काज सिधायो हो ॥७३॥
पर्वत के नजदीक आय कर, रथ को आप ठहरायो ।
धनुष बाण कर धारने सरे, नभ में खेंच चलायो हो ॥७४॥

बहत्तर योजन गयो गगन में, पड्यो सभा में जाय।
मागंध सुर की तरह भेट कर, आयो तिण दिश जाय हो ॥७५॥
रथ को फेर पधारिया सरे, ~~आयो होय हुल्लास हो~~ दिग्गज कूट पर
नामो लिख निज नाम को सरे, आयो होय हुल्लास हो ॥७६॥
कर तेला को पारणो सरे, सेना लेय सिधाया।
दक्षिण दिश वैताढ्य गिरि जहां, डेरा आय लगाया हो ॥७७॥
विद्याधर श्रेणी को नरपति, तेलो आठमो करियो।
नमि और विनमि नृप को, देव योग मन फिरियो हो ॥७८॥
लेय भेटणो आवियो सरे, भरत भूप के पास।
नमि नृप कन्या ब्याही जी, श्री देवी हुई खास हो ॥७९॥
विनमि कर रत्न भेटणो, दोनों गया निज ठाम।
गंगा कुण्ड के पास आयने, दीना भरत मुकाम हो ॥८०॥
नवमो तेलो कियो आय, तब गंगादेवी आय।
सिंधुवत सब जाणज्यो सरे, कियो भेटणो लाय हो ॥८१॥
दक्षिण दिशा के मांयने सरे, चलिया कटक उठाय।
खंडपरपात गुफा है जहां पर, डेरा दिया लगाय हो ॥८२॥
सेनापति पूर्व खंड साधण, भेलियो श्री महाराय हो।
मुंघा मोल को लेय भेटणो, आयो तिण दिश जाय हो ॥८३॥
आराधियो नटमाल देवता, दसमो तेलो ठाय।
सिंधुवत कर भेटणो सरे, आयो तिण दिश जाय हो ॥८४॥
खंडपरपात गुफा झट खोलो, दीना हुक्म चढाय।
सेनापति जिम समस गुफा का, द्वार खोलिया आय हो ॥८५॥
योजन दो पच्चीस की सरे, लम्बी गुफा मझार।
निकलता गुणपच्चास मांडला, हुआ भरतजी पार हो ॥८६॥
दक्षिण भरत के मायने सरे, डेरा दीना लगाय।
नव निधान को तेलो ठायो, पौषधशाला मांय हो ॥८७॥
तुरत सरक पग हेठे आया, रत्न भरिया भरपूर।
पूर्व जन्म की करी कमाई, सन्मुख हुई हजूर हो ॥८८॥
दक्षिण भरत का पूर्व खंड में, दियो सेनापति भेज।
आयो आण मनाय ने सरे, करी न वहां पर जेज हो ॥८९॥
साठ सहस्र वर्ष लागिया सरे, पूर्ण करके काज।
कटक उठाई चालिया सरे, राजन पति महाराज हो ॥९०॥

लाख चौरासी गज रथ घोड़ा, पैदल छिनवे क्रोड़ ।
राज सहस्र बत्तीस साथ में, सेवा करे कर जोड़ हो ॥६१॥
पंथ लियो वनिता नगरी को, श्री भरतेश्वर राय ।
योजन योजन अन्तर सूं, ये सुख से बसता जाय हो ॥६२॥
नहीं नजदीक नहीं अति दूरा, सेना दीनी स्थाप ।
द्वादशमो वनिता तणो सरे, तेलो कीनो आप हो ॥६३॥
तेलो पार लेय सेना, गज पर होय सवार ।
निज नगरी में चालता सरे, हो रह्या जय जयकार हो ॥६४॥
नव निधान और चारों ही सेना, बाहिर राखी भूप ।
नगरी मांय पधारिया सरे, निज की छवि अनूप हो ॥६५॥
सब का मुजरा केलता सरे, राज भवन में आया ।
हर्ष वधावा हो रह्या सरे, धन जननी सुत जाया हो ॥६६॥
सोलह सहस्र देवता और, नृप बत्तीस हजार ।
दीनी सीख वली चार रत्न को, कर सब को सत्कार हो ॥६७॥
श्री देवी प्रमुख पटराणया, परणी चौसठ हजार ।
राज पधारया महल में सरे, मिलियो सब परिवार हो ॥६८॥
मणि मंडप में मंजन करके, पहरी सब पोशाग ।
कर तेला को पारणो सरे, विलसे सुख महाभाग हो ॥६६॥
राजतख्त को तेरमो सरे, तेलो कियो विचार ।
सोलह सहस्र देवता सब ही, नृप बत्तीस हजार हो ॥१००॥
सेठ सेनापति सारथवाही, बड़े बड़े साहूकार ।
कियो राजअभिषेक सभी मिल, जय जय शब्द उचार हो ॥१०१॥
कर श्रृंगार बैठ गज होदे, सिर पर छत्र धराय ।
चार चवर होता थका सरे, आया नगरी मांय हो ॥१०२॥
भूपति आय सिंहासन बैठा, राज सभा के मांय ।
सब को आदर मान करी ने, दीनी सीख महाराय हो ॥१०३॥
द्वादश वर्ष [1]दाण और हांसल, माफ खुशी के मांय ।
आज्ञाकारी पुरुष भेज कर, दीनो पडहो बजाय हो ॥१०४॥
कर तेला को पारणो सरे, राज भवन के मांय ।
करणी का फल भोगवे सरे, आनन्द में दिन जाय हो ॥१०५॥

---

१ लगान ।

नव निधान और सोलह सहस्र सुर, रत्न चतुर्दश सार।
सहस्र बत्तीस नृप आज्ञा में, राणया चौसठ हजार हो ॥१०६॥
बहत्तर सहस्र नगर घलि पाटण, अड़तालीस हजार।
छिनवे क्रोड ग्रामों की संख्या, भाषी सूत्र मझार हो ॥१०७॥
बीस सहस्र सुवर्ण की खानें, धन का भरया भंडार।
पायदल छिनवे क्रोड चौरासी लक्ष रथ,दंती तुखार हो ॥१०८॥
नृत्यक सहस्र बत्तीस, तीन सौ साठ रसोईदार।
कवड सहस्र चौबीस बलि, मंडप चौबीस हजार हो ॥१०९॥
मरुदेवी दादीजी कहिये, बहु विध साता पाई।
क्रोड पूरब को आयुष्य पाल, गज होदे मुक्ति सिधाई हो ॥११०॥
शूरवीर बाहुबल आदिक, सौ भाइयों की जोड़।
ब्राह्मी सुन्दरी दोनों बहिनें, मुक्ति गई कर्म तोड़ हो ॥१११॥
और घणी है साहबी सरे, लीजो सूत्र संभाल।
मौज करे रंगमहल में सरे, नाटक ना झणकार हो ॥११२॥
एक दिवस राजन् पति राजा, मंजन घर में आय।
विधि सहित मंजन कियो सरे, फिर पोशाक बनाय हो ॥११३॥
सिर पर मुकुट कान में कुण्डल,कर भूषण सब सार।
मणिरत्न को पहिन गला में, चौसठ लडियो हार हो ॥११४॥
अलंकार चउविध करके, सोले सजे शृङ्गार।
काच महल में आय सिंहासन, बैठा निरखे दीदार हो ॥११५॥
तन को जान असार भरतजी, ध्यायो निर्मल ध्यान।
अनित्य भावना भावता सरे, पाया केवलज्ञान हो ॥११६॥
ओघा पात्रा दीना देवता, कर मुनिवर को वेश।
राजसभा में आविया सरे, दीनो सत् उपदेश हो ॥११७॥
दश हजार राजा प्रतिबोधि, लीनो संजम भार।
महि मंडल में विचरता सरे, करता पर उपकार हो ॥११८॥
लाख सत्तंतर पूरबताई, कुंवर पद के मांय।
चक्रवर्त्त पद छः लक्ष पूरब को, पालियो श्री महाराय हो ॥११९॥
चारित्र एक लक्ष पूरब को, पाल्यो निर्मल आप।
भव जीवां ने तारता सरे, मेटी भव दुःख ताप हो ॥१२०॥
सर्व आयुष्य पाइया सरे पूरब चौरासी लाख।
ऊग ऊग ने ऊगिया सरे, ठाणयंग नी साख हो ॥१२१॥

अष्टापद पर्वत के ऊपर, लियो संथारो ठाय।
एक मास को अणसण छेदी, गया मोक्ष के मांय हो ॥१२२॥
तिणहिज कांचमहल के माही, जिम भरतेश्वर राया।
आठ पाट आदित्य जसादिक, तिमहिज केवल पाया हो ॥१२३॥
मनुष्य जन्म दुर्लभ मिल्यो है, जो अपना सुख चाहो।
दया दान तप नेम धर्म को, लीजो तन से लाहो हो ॥१२४॥
उगणीसो पच्चत्तर चौमासो, कियो शहर अजमेर।
महा मुनि नन्दलाल गुरु की, है मुझ ऊपर महर हो ॥१२५॥

[६१]

द्रौपदी

(तर्ज —ख्याल)

धन सती द्रौपदी, निश्चल मन पाल्यो साबत[1] शील ने ॥
अमरकंका नगरी भली सरे, धात्रीखंड[2] भरत के माय।
राज लीला सुख भोगवे सरे, पदमनाभ तिहा रायजी ॥१॥
सब अन्तेवर साथ से सरे, एक दिन भवन मझार।
सिंहासन पर बैठ बीच में, निरख रयो भूपालजी ॥२॥
हस्तनापुर नगर थकी सरे, नारदजी तत्काल।
तिण वेला मे आविया सरे, सीघ्र दूर थी चालजी ॥३॥
पदमनाभ नृप उठने सरे, दीनो आदर मान।
कुशल क्षेम परस्पर पूछी, तब बोले राजानजी ॥४॥
कहो नारदजी ऐसी रचना, कहीं पर देखी तुमने।
सुणता को अति प्रेम ऊपनो[3], ये सब भाखो मुझनेजी ॥५॥
कहे नारदजी है तू नरपति, कूप ददूर[4] समान।
अन्तेवर निज देख अनूपम, फूल रयो धर मानजी ॥६॥

१ अखण्ड। २ मध्यलोक के असंख्य द्वीपों में से एक द्वीप। इस जम्बूद्वीप के बाद लवण समुद्र है और लवणसमुद्र के बाद धातकीखण्ड द्वीप है। वहां भी भरत आदि नाम से ही सात खण्ड है। मगर हैं दो दो। ३ उपजा। ४ ददु र मेंढक।

जम्बू द्वीप का भरत में सरे, हस्तनापुर एक स्थान।
पांडुराजा राज करे तस, सुत पंच पांडव जानजी ॥७॥
जिनके घर नारी द्रौपदी, रूप कला गुण सार।
कहां तक करू बयान जिन्हों का,मैं नहीं पाऊं पारजी ॥८॥

नृपति प्रेम परी ने पूछे, तदपी कैसा स्वरूप।
कर विस्तार कहो मुझ आगल, है सुणवा की चूंपजी[1] ॥६॥
तुम अन्तेवर रूप सभी, द्रौपदी नख तुल्य मिलावे।
दोनूं रूप निज प्रगट देखता, सौवें भाग नहीं आवेजी ॥१०॥

भूपति मन अचरज हुवो सरे,नारद मुख सुणी वखाण।
उस नारी से मैं सुख भोगूं, जब हो मनुष्य जन्म परमाणजी ॥११॥
पद्मनाभ नृप ऊठ के सरे, आयो पौषध साला मांय।
अष्ट भक्त कर देव को सरे, सुमरयो ध्यान लगायजी ॥१२॥

कष्ट तणो परभाव प्रगट हो, सुर बोल्यो कर साद।
इण वेला के मायने सरे कैसे कियो मुझ यादजी ॥१३॥
जम्बूद्वीप का भरत में सरे हस्तनापुर के मांय।
पंच पांडव की भारजा सरे, मुझ को देवो लायजी ॥१४॥

देव कहे सुण बात हमारी, सती द्रौपदी बाजे।
मन वचन काया करी स था, शील कभी नहीं भांजेजी ॥१५॥
तिण ने सुधर्म इन्द्रादिक मिल, चौसठ इन्द्र डिगावे।
मन करने वछे नहीं स तू, मन से क्यों ललचावेजी ॥१६॥

परदारा का लम्पट नरपति, टेक आपणी ताने।
भांत भात समझावियो तदपि, एक बात नहीं मानेजी ॥१७॥
देव चाल गगन में आया, हस्तनापुर के माय।
निद्रा में छक होय रही थी, लीनी तुरत उठायजी ॥१८॥

शीघ्र चाल ले आवीयो सरे, लवण समुन्दर ठेल।
पद्मनाभ राजा का बाग में, दीनी द्रौपदी मेलजी ॥१६॥
नरपति ने सुर समाचार कहे, मैं निज स्थानक जासूं।
कोई दिन मुज ने याद करे तो,फेर कभी नहीं आसूजी ॥२०॥
ऐसा कह कर गया देव तब, हुलसा अति भूपाल।
कर शृंगार अन्तेवर लेईने, आया बाग में चालजी ॥२१॥

---

१ उत्कंठा।

विण अवसर निद्रा उड़ी सरे, सती विचारे एम।
हुआ देव प्रयोग शील का, यतन करूंगा केमजी ॥२२॥
इतने भूपति सज सवारी, आयो तिणहीज बाग।
कहे सती को मत कर चिंता, खुलियो थारो भागजी ॥२३॥

हूँ छू पति शिर ताज तुम्हारा, बोले मधुरी वाणी।
सब राण्यां के मायने सरे, तुम्के करूं पटराणीजी ॥२४॥
सती कहे सुण राजन् पति, अभी लगे मत केड़े।
कोई आवे तो वाट देख लू, छै महिना मत छेड़ेजी ॥२५॥

हे भोळी यहां कुण आसी, लूणसमुन्दर आड़ो।
सब ही आशा छोड़ दे स तूं, फोल करे मत गाढ़ोजी ॥२६॥
कृष्ण नरेशर त्रिखंड भुक्ता, इसकी आश धरूंगी।
छे महिना में नहीं आवे तो,तुम कहोगा सो ही करूंगीजी ॥२७॥

भूपति मन समता धरी सरे, नहीं ताण में सार।
कुंवारा अन्तेवर मांही, मेल दीनी तत्कारजी ॥२८॥
सुख में द्रौपदी विचरे निश दिन, शील का यतन करंत।
बेले बेले पारणा सरे, आंबिल करे निरंतजी ॥२९॥

हस्थनापुर नगर विषे सरे, हेरो पड्यो विचार।
न जाणे कोई देवता सरे, ले गयो पांडव नारजी ॥३०॥
लोभ बताई द्रव्य को सरे, भूपति पड़हो बजायो।
कीनी बहुत गवेषणा पर, पतो कठे नहीं पायोजी ॥३१॥

गज हौदे बैठ भूवाजी, पंच पांडव की माता।
नगर द्वारिका आविया सरे, कहेण हरि ने बातजी ॥३२॥
हरि पूछे कृपा कर मो पर, कैसे हुवो है आवो।
सभी कारज सिद्ध करू स थे, भूवाजी फरमावोजी ॥३३॥

समाचार सब भाखिया सरे, गोविन्द ध्यान लगावे।
समरथाई[१] थायरी[२] सरे, और नजर नहीं आवेजी ॥३४॥
गोपाल कहे सुण भूवाजी, चिंता नहीं कोई बात।
जहां तहां से लाके द्रौपदी, सूंपसु हाथों हाथजी ॥३५॥
भूवाजी सुण वचन हरि को, फिर हथनापुर आई।
जायो द्रौपदी आय मिली जु, सोच फिकर कछु नांईजी ॥३६॥

१ सामर्थ्य । २ तुम्हारी ।

गोविन्द करी गवेषणा पर, पतो कठे नहीं पायो।
इतने राज भवन के मांई, नारद ऋषिश्वर आयोजी ॥३७॥
पूछे कृष्णजी कहो नारदजी, कोई राजस्थाने।
देखी होवे, द्रौपदी तो थे पतो बतावो म्हानेजी ॥३८॥
तब नारद कहै धात्री खंड का, भरत क्षेत्र के मांय।
एकदा कोई समय पाय के, मैं वहां गया चलायजी ॥३९॥
अमरकंका नगरी भली सरे, पदमनाभ तिहां राय।
देखी द्रौपदी सारखी वहां, राज भवन के मांय जी ॥४०॥
कृष्ण विचारी कहै नारद ने, कर्म तुम्हारा दीसे।
सुण नारदजी उड़े गगन में, हुलसो द्वारकाधीसे जी ॥४१॥
समाचार हस्थनापुर भेज्या, दूत गयो जिम नीर।
पांचों पांडव सज कर आईज्यो, समुन्दर 'उल्ली तीर जी ॥४२॥
पंडु राजा समाचार पढ़, पांडव भेज्या तत्काल।
जोवे वाट समन्दर के तीरे, कब आवे गोपाल जी ॥४३॥
द्वारापति उमेद घरी ने, निकले सज असवारी।
समुद्रतट पांचों पांडव सामिल, आय मिले तिणवारीजी ॥४४॥

(तर्जः—भाई प्रेम स्नेह हंसावे हो)

पांडव मत सरमाओ हो।
धावा कर लो प्रेम की मांसु राय मिलाओ हो।
लुण समुन्दर ठेल ने, धात्री खंड सिधावां हो।
हिम्मत राखो पांडवा, भव पार लगावां हो ॥१॥
पदमनाभ कुण नरपति, दो दो हाथ बतावां हो।
युद्ध करां सन्मुख हुई, तेनी शान गमावां हो ॥२॥
चलती वात सुणी हमें, देखां खबर लगावां हो ॥
सुवाजी आय कही कही तब, केम छिपावां हो ॥३॥
अपणी वस्तु जाण ने, चाहे कौन गमावा हो।
होतव[2] टाल्यो ना टले, नाहक पछतावां हो ॥४॥
सब ही मिल उद्यम करां, पीछी द्रौपदी लावां हो।
महा मुनि नन्दलालजी सुख सम्पति पावां हो ॥५॥

---
१ इस पार। २ होनी।

(तर्ज:—ख्याल)

तेलो कियो हरि तिण परभावे, लूण सटी सुर आयो।
कहो किण कारण याद कियो मुझ, तब हरि सब फरमायोजी ॥४५॥
पांचों ही पांडव जाणजो सरे, छठा द्रुपद सुत काज।
धात्री खंड में जावणो सरे, राम्ना देओ आजजी ॥४६॥
देव कहे सुण अहो द्वार पति, हुक्म मुझे फरमाय।
आप कहो तो द्रौपदी यहाँ, हाजर कर दूं लायजी ॥४७॥
आप कहो तो पदमनाभ की, नगरी फौज समेत।
लुण समुन्द्र में लाय डुबोऊं, नहीं हमारे हेतजी ॥४८॥
कृष्ण कहे या बात न करणी, वचन दियो किम लोपुं।
जहां होवा वहाँ से लाके द्रौपदी, मैं हाथों हाथ लाई सौपुंजी ॥४९॥
समुद्र में रास्तो दियो सरे, सुर कहे वेग पधारो।
धात्री खंड में हरि आविया, पंच पांडव लेई लारोजी ॥५०॥
दारुण नामा सारथी सरे, भेजो पत्र देई हाथ।
पदमनाभ का सिंहासन के, एक मारजे लातजी ॥५१॥
जय विजय कर राज सभा में, भूपति आय बधायो।
यह भक्ति मुज जाणजो स अब, कहूं स्वामी फरमायोजी ॥५२॥
अपथिया[१] पथिया इम बोल्यो, रोस करी असराले।
सिंहासण के मारी लात झट, पत्र दियो अणी भालेजी ॥५३॥
कहूं सामनो द्रौपदी नहीं दूं, काढ्यो बिन सत्कार।
सारथी पाछो आय कृष्ण पैं, कहा सभी समाचारजी ॥५४॥
करो सामना समरथ होय तो, पदमनाभ चढ़ आयो।
पांचो ही पांडव इम कहे सरे, समरथ छे हरि रायोजी ॥५५॥
वह है हम नहीं इम कही चढिया, पांचों ही पांडव लार।
हार गया तब आये कृष्ण पैं, कहा सभी समाचारजी ॥५६॥
जीतूं एम कही चढ्या कृष्णजी, करी सख धुधुकार।
पदमनाभ की सेना भागी, तीजे भाग ततकारजी ॥५७॥
इतन लीनो हाथ में सरे, करी धनुष्य टंकार।
एक भाग फिर भागियो सरे, एक भाग रयो लारजी ॥५८॥
तत्क्षण भागो नृपति सरे, जड़िया नगर दुवार।
कियो हरिजी वैक्र[२] सरे, सिंह रूप तत्कारजी ॥५९॥

---

१ अप्रार्थितप्रार्थी अनिष्ट की कामना करने वाला। २ विक्रिया मन चाहा रूप बना लेना।

रोस करी पंजो मारयो तब, थर थर पृथ्वी धूजी[1]।
कोट कांगरा भवन पड्या जिम, नगरी हो गई दूजीजी ॥६०॥
पदमनाभ मन चिंतवे सरे, अनरथ हुवा अपार।
प्राण की रक्षा कारणे सरे, कीजे कौन विचारजी ॥६१॥
सती द्रौपदी के शरणे, भूपति पड़ियो जाय।
बुद्धि उपाई मुझ भणी स तू, जीतव दान दिरायजी ॥६२॥
सती कहे रे निर्लज तुझ ने, जरा लाज नहीं आई।
काम अंध होई रयो स तू, अवे करे नरमाईजी ॥६३॥
[2]आला कपड़ा पहेर लेस तूं, छोड़ मर्द का [3]भेक।
रत्नादिक ले भेटणो सरे, और उपाव नहीं एकजी ॥६४॥
कर आगे मुझ को सौंप दे सरे, मन में मत सरमाजे।
गोविन्द के चरणार नमीने, सब अपराध खमाजे रे ॥६५॥
भलो होय सती थारो सरे, ठीक उपाय बतायो।
विप्रहिज कर त्रिखंड नायक से,सब अपराध खमायोजी ॥६६॥
कृष्ण विचारी समता धारी, भूप त्रिया के रूप।
अभयदान देई मूकियो सरे, गयो द्रौपदी सू'पजी ॥६७॥
हाथों हाथ लेई द्रौपदी, पच पाण्डव ने सौंपी।
वचन सफल हुवो तेहनो, भुवा की बात नहीं लोपीजी ॥६८॥
कृष्ण और पाण्डव रथ सज कर, लेई द्रौपदी लार।
सफल काज कर निकल्या सरे, उतरे समुद्र पारजी ॥६९॥
तिण अवसर तिहां चम्पानगरी, मुनिसुव्रत भगवान्।
पूर्ण भद्र बाग के मांई, समोसरया पुण्यवान जी ॥७०॥
कम्पिल नामें वासुदेव था, बात सुणी हुलसायो।
वाधिशमा जिनराज ने सरे, तुरत वन्दवा आयो जी ॥७१॥
तीन बार वन्दना करी सरे, सन्मुख सारे सेव।
हित उपदेश सुणावियो सरे, श्री तीर्थंकर देवजी ॥७२॥
वाणी सुणता समोसरण में, सुण्यो शंख को नाद।
कम्पिल नामा वासुदेव के, चित्त में हुवो विषाद जी ॥७३॥
कहे श्री जिनराज कृपा कर, सुण हो त्रिखंडी नाथ।
मेटो मन की भर्मना स या, कभी न होवे बातजी ॥७४॥

१ कांपी। २ गीला। ३ भेष।

नव पदवी में आद की मरे, प्रभु पार फरमाई।
दो दो एक समय नहीं लाधे, एक क्षेत्र के मांई जी ॥७४॥
अहो जिनवर मुझ संशय मेटो, अरज करे कर जोर।
[1]साग्रे शब्द मुझ शंख सरीखो, यहां करे कुण और जी ॥७६॥

जम्बूद्वीप का भरत को मरे, वासुदेव यहाँ आयो।
ज्यों का त्यों सब सोंदने मरे, प्रभु भेद समझायो जी ॥७७॥
सुणतां ही तत्क्षण नरपति, मिलवा मन उमायो।
नजरा देखूं जाय ने स जद, प्रभु एम फरमायो जी ॥७८॥

सुण हो नरपति चार जणा तो, तीन काल के मांय।
एक समान पदवीधर वे, मिले न आपस मांय जी ॥७९॥
तदपि वंदना करी भूप, गज होदे बैठ सिधाया।
पवन वेग जिम चालता सरे, समुदर के तट आया जी ॥८०॥

हस्ती पर बैठा थका सरे, लम्बी नजर लगाई।
उड़ती ध्वजा देख रथ ऊपर, खुशी हुवा मन मांही जी ॥८१॥
उत्तम पुरुष मुज सारखा सरे, वासुदेव वे जावे।
सुख से आप पधारजो सरे, ऐसे कही शंख पूरावे जी ॥८२॥

सुणियो शब्द कृष्णजी पाछो, शंख बजायो आय।
समज गया दोई सेन में सरे, मन सुं कियो मिलाप जी ॥८३॥
कंपिल नामा वासुदेव फिर, पीछा तुरत सिधाया।
पदमनाम राजा सुं मिलवा, आप शीघ्र चल आयाजी ॥८४॥

पदमनाम नृप वासुदेव को, आदर कियो अपार।
राज रिद्ध सभी आपकी सरे, करु कांही मनवार जी ॥८५॥
पूछे बात यों त्रिखंड नायक, सुण पदमोत्तर राय।
बिगड़ गई नगरी किण कारण, इसका भेद बताय जी ॥८६॥

जम्बूद्वीप का भरत को सरे, वासुदेव यहाँ आयो।
राज जमावा कारणे सरे, तिण ने धूम मचायो जी ॥८७॥
मैं उमराव [2]राज को वाजूं, ऐसो कियो उपाय।
सनमुख होकर करी लड़ाई, पाछो दियो भगाय जी ॥८८॥

इस कारण से नगरी सारी; बिगड़ गई सुण नाथ।
पूरा पुण्य आपका जिण से, रही चौगुणी भात जी ॥८९॥

---

१ साक्षात। २ आपका।

सुणता ही श्री वासुदेव यों, रोस करी फरमावे ।
लाजहीण [1]लापर मुज आगल, झूठी बात बणावे जी ॥९०॥
म्हारे सरीखा उत्तम पुरुष ने, निरदोषी शिरदार ।
ज्यामें दोष बतावियो स थांने,मनुष्य जन्म धिक्कार जी ॥९१॥
काढ दियो नगरी सुं तिण ने, करणी का फल पाया ।
राज दियो उस पुत्र को सरे,आनंद ही आनंद बरसायाजी॥९२॥
सुणो सयाणा पर नारी का, संग करो मत कोय ।
इण भव में शोभा घणी सरे, परभव में सुख होय जी ॥९३॥
सागर उतर श्रीकृष्णजी आया,जम्बूद्वीप भरतखंड माँई ।
आगे चालो पाडवाँस मैं, आऊँ आज्ञा मलाई जी ॥९४॥
तुरत बैठ रथ माँही पाँडव, लेइ द्रौपदी नार ।
गंगा नदी तिर गया सरे, मन मे करे विचार जी ॥९५॥
नाव लेई ने कोई मत जायो, इण अवसर के माँय ।
ताकत देखाँ लेहिनी सरे, किम आवे हरि राय जी ॥९६॥
गोविन्द आज्ञा मलायने सरे, आयो गंगा के तीर ।
पाँचों पांडव नाव बिना वे, कैसे गए मुज बीरजी ॥९७॥
हरि हिम्मत कर एक हाथ मे, रथ घोड़ा सग लीन ।
एक हाथ से जल तीरे सरे, शक्ति हुई न हीनजी ॥९८॥
गंगा के मध्य भाग में सरे, घबराणो हरिराय ।
पुण्य प्रभावे तुरत करी आ, गगादेवी सहायजी ॥९९॥
क्षण मात्र विसराम लेई ने, फिर कीनी हुँसियारी ।
भुजा करी नदी तीरी सरे, उतर गयो गिरधारीजी ॥१००॥
पांडव देख विचारियो सरे, ये आया हरिराय ।
हाथ जोड़ जय विजय करीने, सन्मुख लिया वधायजी ॥१०१॥
कृष्ण कहे सुनो पांडव स थे, पूरा हो बलवान ।
बिना नाव निज भुजा करीने, गगा तिरिया महानजी ॥१०२॥
पौरुष चढ़ियाँ पीछे में तो, कबहूँ न रहेवो बारवा ।
जो ऐसा समर्थ था हो, क्यों पद्मनाभ से हारयाजी ॥१०३॥
सांच बात कहूँ सुणो नाथजी मैं,किस्ती पर चढ़ आया ।
फक्त आपको बल देखण ने, बैठ रया तरु छायाजी ॥१०४॥

---

[1] लोफर-बदमाश ।

सुनके बात पांडवां ऊपर, रोस हरिने आयो।
बल दिखलाऊं आपनो सरे, इम कही वज्र उठायोजी ॥१०६॥
बेरज द्रौपदी अर्ज करे प्रभु, तुम हो दीन दयाल।
मुझ अबला पर कृपा कीजे, अपनो बिरध[1] सम्भालजी ॥१०६॥

सुन कर दया ऊपनी दिल में, हरिजी आप विचारयो।
राख्यो सुहाग द्रौपदी को जब, रथ पर कोप उतारयोजी ॥१०७॥
या कोई कुमति उपनी थाने, कृतघ्न पणो कमायो।
[2]देशवटो है पांडवांस यूं, हरि हुक्म फरमायोजी ॥१०८॥

गया द्वारका कृष्णजी सरे, पांडव हस्तनापुर आया।
मात पिता ने मांडनेस सब, बीतक हाल सुनायाजी ॥१०९॥
पंडुराय कहे पांडवांने थाने, भूंडो कीनो काम।
गुण ऊपर अवगुण कियोस थे, जग में हुवा बदनामजी ॥११०॥

सब ही मिल सल्ला[3] करी सरे, गुन्हो करानो माफ।
गज पर बैठ तुरंत भुवाजी, गया द्वारका आपजी ॥१११॥
विनय कर बंशीधर पूछे, कैसे हुवो है आवो।
जो मुझ लायक काम होवे सो, भुवाजी फरमावोजी ॥११२॥

सुन गोविन्द थारी तीन खंड में, आण अखंड वरताय।
कहां जाय पांडव बसेस तूं, मुजकों राह बतायजी ॥११३॥
मैं तो बोल बदलूं नहीं सरे, भूमी आपने आवी।
समुद्र पाणी हटाय बसे पांडव, मिले न आय कदापिजी ॥११४॥

काम करी कुन्ता महाराणी, फिर हस्तनापुर आई।
पांचों पांडव हरि हुकम से, मथुरा जाय बसाईजी ॥११५॥
साधु तपसी भूपति सरे, ज्ञानी और धनवान।
चतुर होवो तो पांच जणा को, मत करजो अपमानजी ॥११६

नेम धर्म तन मन से पालो, भव भव में सुख दाई।
सती शील में दृढ रही तो, निज घर अपने आईजी ॥११७॥
पांडव साथे सती भोगवे, पंचेन्द्रिय सुख भोग।
कितनोक काल निकल्यां पीछे, स्थेवरों को लागो जोगजी ॥११८॥
वाणी सुण वैराग धरीने, पांचों ही पांडव लार।
सती द्रौपदी साध हुई, छेंड़े लीनो संयम भारजो ॥११९॥

१ बिरद। २ देशनिकाला। ३ सलाह।

पांचों ही पांडव करणी करने, आठों ही कर्म खपाय।
जन्म मरण दुख मेटने सरे, मोक्ष विराजा जायजी ॥१२०॥
इम जाणीने सुणो सयाना, शील अखंडित पालो।
नर भव लावो[1] लेयने सरे, मोक्षपुरी झट चालोजी ॥१२१॥
चंदन बाला राजमतीजी, सीता सुभद्रा जान।
शील व्रत में दृढ रहीस ज्योंरा, जिनवर किया वखानजी ॥१२२॥
सती द्रौपदी संयम पाली, गई पंचमें देवलोक।
तिहां से चव महा विदेह जन्म ले, सती जायगा मोक्षजी ॥१२३॥
उगणीसें सत्तावन वर्ष, चौमासो श्रेयकार।
शहर जावरे जोड़ बणाई, सूत्र के अनुसारजी ॥१२४॥
महा मुनि नन्दलाल तणा शिष्य, खूबचन्द इम गावे।
शीलवती सतियां का नाम से, मन वंछित सुख पावेजी ॥१२५॥

[६२]

सुबाहु कुंवर

(तर्ज:—ख्याल)

धन कुंवर सुबाहु, सफल कर लीनो नर भव आपणो ॥
इण हिज जम्बूद्वीप का सरे, भरत क्षेत्र के मांय।
हस्थिशिखर नगर भलो सरे, अदीणशत्रु तिहां रायजी ॥१॥
सहस्र अन्तेवर मांय धारणी, राणी है परधान।
नाम राणी अंग जात सुबाहु, कुंवर एक पुण्यवानजी ॥२॥
विनयवंत है मात पिता का, पूरण आज्ञाकारी।
यौवन वय में जान कुंवर को, परणाई पांचसौ नारीजी ॥३॥
सुख भोगे संसार का सरे, तिण अवसर के मांय।
विचरत वीर जिनेश्वर आया, परिषदा वंदन जायजी ॥४॥
खबर हुई तब कुंवर सुबाहु, कीनी तुरत तयारी।
वीर जिनंद को वंदन कारण, निकल्यो सज असवारीजी ॥५॥

---
१ लाभ।

वंदना कर जिनवर के सन्मुख, बैठा परिषद मांय।
वाणी सुण आनन्द भयो सरे, कायो कह्यों लग जायजी ॥६॥
हाथ जोड़ यूं अरज करे प्रभु, धन्य यो नरभव पाय।
संयम पद धारण करे सरे, ये मुझ शक्ति नायजी ॥७॥
मुझ ने तो कृपा कर प्रभुजी श्रावक का व्रत दीजे।
वीर कहे जिम सुख हो तिम कर, धर्म में ढील न कीजेजी ॥८॥
श्रावक का व्रत आदरया सरे, मगन होय मन माय।
तीन वार वन्दन करी सरे, आयो तिण दिशि जाय जी ॥९॥
रूप देख गौतम स्वामी के, मन में उपनो खंत।
वीर जिनन्द ने पूछियो सरे, पूरव भव विरतन्त जी ॥१०॥
वीर कहे सुन गौयमा सरे, पूरव भव के मॉय।
सुमुखनामा गाथापति थो, रिद्धिवन्त कहवाय जी ॥११॥
विचरत विचरत धर्मघोष, स्थेवर आया तिणवार।
तस्य शिष्य है घोर तपस्वी, सुदत्तजी अणगार जी ॥१२॥
आज्ञा ले गुरुदेव की सरे, असणादिक के काज।
मास खमण के पारणे सरे, गया महामुनि रायजी ॥१३॥
फिरता फिरता आया मुनिवर, सुमुख घर तिण वार।
दान दियो शुद्ध भाव से सरे, परत कियो संसार जी ॥१४॥
ये हिज कुंवर सुबाहु प्रत्यक्ष, वहां से चवकर आयो।
दान तणा परभाव से सरे, रूप सम्पदा पायो जी ॥१५॥
हे भगवंत ये कुंवर सुबाहु, लेसी संजम भार।
वीर कहे हाँ संजम लेसी, संशय नहीं लगार जी ॥१६॥
हस्तिशिखर नगर थकी सरे, जिनजी कियो विहार।
भव जीवां ने तारवा सरे, करवा पर उपकार जी ॥१७॥
कुंवर सुबाहु श्रावक सेंठा[1], जीवादिक ना जान[2]।
अथिर जान संसार को सरे, पाले जिनवर ध्यान जी ॥१८॥
एक दिवस पौषध शाला में, तेलो कियो कुंवार।
धर्म जागरणा जागतां सरे, मन में कियो विचार जी ॥१९॥
धन्य है गाम नगर पुर पाटण, जहां प्रभु रहे विराज।
धन्य पुरुष जो संयम लेकर, [3]सारे आतम काज जी ॥२०॥

१ पक्का। २ ज्ञाता। ३ सिद्ध करे ।

ये संसार समुन्दर भारी, जिसका [1]छेय न पार।
जन्म मरण इस जीव ने सरे, किया अनन्ती वार जी ॥२१॥
जो खुद कृपा कर इहां सरे, समोसरे जिनराय।
तो संजम लेनो सही सरे, जन्म मरण मिट जाय जी ॥२२॥

भगवन्त केवल ज्ञान करी ने, जाण्या मन का भाव।
सुखे सुखे प्रभु विचरता सरे, आया तिण प्रस्तावजी ॥२३॥
हस्ति शिखर नगर में सरे, खबर हुई तिण वार।
सुबाहु कुंवर वन्दन चल्यो सरे, और घणो परिवार जी ॥२४॥

वन्दना कर जिनवर के सन्मुख, बैठा धर अनुराग।
वाणी सुण वीतरागनी सरे, अधिक चढ्यो वैराग जी ॥२५॥
हाथ जोड़ ने अर्ज करे प्रभु, यह संसार असार।
मात पिता को पूछने म मैं, लेवु संयम भार जी ॥२६॥

वीर कहे जिम सुख हो तिमकर, वन्दना कर घर आयो।
माता के चरणार नमनकर, सब विरतान्त सुनायो जी ॥२७॥
संयम लेसूं मातजी सरे, आज्ञा दो मुझे आप।
एम सुणी माता मुरछानी, लागो वचन को ताप जी ॥२८॥

सावचेत हो माता विलखती, बोले वचन विचार।
संजम मारग दोहिलो सरे, चलणो खांडा धार जी ॥२९॥
विविध भांत समझावियो सरे, एक न मानी बात।
महोत्सव की त्यारी करी सरे, आज्ञा आपी मातजी ॥३०॥

सहस्र पुरुष उठाये ऐसी, [2]सेवका तुरत बनाय।
गोद लेई बैठा माता जी, तकरयां बींजे वाय जी ॥३१॥
तप संयम में प्राक्रम करता, तू कायर मत [3]वीजे।
अष्ट कर्म को अन्त करी ने, शिवपुर डेरा दीजे जी ॥३२॥

जा सौंप्या जिनवर के सन्मुख, बोले यूं कर जोड़।
ये मुझ वल्लभ नानड्यों सरे, संयम ले घर छोड़जी ॥३३॥
क्षमावन्त समता को सागर, घणा गुणों को दरियो।
संयम दीजे नाथजी स यो, जन्म मरण से डरियोजी ॥३४॥

माला मोती खोलिया सरे, खोल्या सब शृंगार।
सनमुख ऊभी मातजी सरे, पड़ रही आंसू धारजी ॥३५॥

---

१ है। २ शिविका-पालकी। ३ ।

वेस कियो मुनिराज को सरे, कर पंच मुष्टी लोच।
पाप अठारा त्यागिया सरे, मिट गयो मन को सोचजी ॥३६॥
जिनवर को निज नंद मौंप के, मात ठिकाने आई।
सदा विषय सुख भोगवे सरे, मगन रहे मन मांईजी ॥३७॥
हस्ति शिखर नगर में सरे, प्रभुजी कियो विहार।
साथ रहे सेवा करे सरे, सुवाहु अणगारजी ॥३८॥
शुद्ध संयम पाले शिवपुर की, मन में बड़ो उमंग।
विनय करी स्थेवरों के पासे, भएया इग्यारे अंगजी[1] ॥३९॥
बहु वर्षों का संयम पाली, टाली आतम दोष।
साठ[2] भक्त अणसण आराधी, गया प्रथम सुरलोकजी ॥४०॥
अंग इग्यारमें वीर जिनेश्वर, कर दीनो निस्तार।
पन्द्रह भव करी महा विदेह में, जासी मोक्ष मझारजी ॥४१॥
उगणीसे इकसठ के वर्षे, चैत महीनो जान।
शुक्ल पक्ष की छट्ठ बुधवारे, करी जोड़ परमाणजी ॥४२॥
महा मुनि नन्दलालजी सरे, ज्ञान तणा दातार।
जिहों तिहों तस शिष्य के सरे, वरते मंगलाचारजी ॥४३॥

---

[६३]

नमिराज ऋषि

(तर्जः—पणिहारी)

मिथिला नगरी ना राजवी, नमिराजाजी २,
विदेह देश को नाथ राजाजी ॥
सहजे ही मन वैराग्य में, नमिराजाजी २, हित परजा के साथ, राजाजी ॥१॥
देवलोक सम पाविया, नमिराजाजी २, अन्तेवर सुख भोग, राजाजी।
एक दिन तस तन ऊपनो,नमिराजाजी२,सबल दाह ज्वर रोग, राजाजी ॥२॥
वनिता मिल चन्दन घिसे,नमिराजाजी२,पति हितकाज उच्छाव राजाजी।
खन खन बाजे चूड़ियाँ, नमिराजाजी २, शब्द सुहावे नांय राजाजी ॥३॥

---

१ अङ्ग शास्त्र। २ एक मास का अनशन।

एक एक राखि दूजी सहु, नमिराजाजी २,
दीनी तुरत उतार राजाजी ।
पति परमेश्वर सारसा, नमिराजाजी २,
जो जाने सो पतिव्रता नार राजाजी ॥ ४ ॥

पूछे भूपति कहो प्रिया, नमिराजाजी २,
अब नहीं होत अवाज राजाजी ।
खट खट होवे बहु मिल्यां, नमिराजाजी २,
सोचो गरीबनिवाज राजाजी ॥ ५ ॥

पर संजोगे दुःख हुवे, नमिराजाजी २,
इण में संशय नहीं कोय राजाजी ।
रमन करे यों ज्ञान में, नमिराजाजी २,
फिर दुःख काहे को होय राजाजी ॥ ६ ॥

एकत्व भावना भावता, नमिराजाजी २,
जाति स्मरण पायो ज्ञान राजाजी ।
शीतल चन्दन लेपतां, नमिराजाजी २,
मिट गई तन की ताप राजाजी ॥ ७ ॥

भोग रोग सम जाणने, नमिराजाजी २,
दियो पुत्र को राज राजाजी ।
मुनि हुआ ममता तजी, नमिराजाजी २,
केवल मोक्ष के काज राजाजी ॥ ८ ॥

शब्द कोलाहल हो रया, नमिराजाजी २,
उस वक्त नगरी के माय राजाजी ।
सक्रेन्द्र भी आवियो, नमिराजाजी २,
ब्राह्मण रूप बनाय राजाजी ॥ ९ ॥

करण वैराग्य की पारखा, नमिराजाजी २,
यूं बोले वचन विचार राजाजी ।
तुम दीक्षा से महामुनि, नमिराजाजी २,
यह रुदन करे नर नार राजाजी ॥ १० ॥

स्वार्थ का सब झूरणा, विप्र म्हालाजी २,
दियो तरु पक्षी को न्याय म्हालाजी ।
जोवो नजर लगाय ने, नमिराजाजी २,
थारा भवन जले महाराय राजाजी ॥ ११ ॥

धेन कियो मुनिराज को मरे, कर पंथ मुग्ति लोच।
पाप अठारा त्यागिया मरे, मिट गयो मन को सोचजी ॥३६॥
जिनवर को निज नंद सौंप के, मात ठिकाने आई।
सदा विषय सुख भोगवे सरे, मगन रहे मन मांईजी ॥३७॥
हस्ति शिखर नगर से मरे, प्रभुजी कियो विहार।
साथ रहे सेवा करे मरे, सुषाहु अणगारजी ॥३८॥
शुद्ध संयम पाले शिवपुर की, मन में बड़ी उमंग।
विनय करी स्थेवरों के पासे, भएया इग्यारे अंगजी[1] ॥३९॥
बहु वर्षों का संयम पाली, टाली आतम दोप।
साठ[2] भक्त अणसण आराधी, गया प्रथम सुरलोकजी ॥४०॥
अंग इग्यारमें वीर जिनेश्वर, कर दीनो निस्तार।
पन्द्रह भव करी महा विदेह में, जासी मोक्ष मझारजी ॥४१॥
उगणीसे इकसठ के वर्ष, चैत महीनो जान।
शुक्ल पक्ष की छट्ठ बुधवारे, करी जोड़ परमाणजी ॥४२॥
महा मुनि नन्दलालजी सरे, ज्ञान तणा दातार।
जिहाँ तिहाँ तस शिष्य के सरे, वरते मंगलाचारजी ॥४३॥

---

[६२]

नमिराज ऋषि

(तर्ज:—पणिहारी)

मिथिला नगरी ना राजवी, नमिराजाजी २,
विदेह देश को नाथ राजाजी॥
सहजे ही मन वैराग्य में, नमिराजाजी २, हित परजा के साथ, राजाजी ॥१॥
देवलोक सम पाविया, नमिराजाजी २, अन्तेवर सुख भोग, राजाजी।
एक दिन तस तन ऊपनो, नमिराजाजी २, सबल दाह ज्वर रोग, राजाजी ॥२॥
वनिता मिल चन्दन घिसे, नमिराजाजी २, पति हितकाज उच्छाव राजाजी।
खन खन बाजे चूड़ियाँ, नमिराजाजी २, शब्द सुहावे नांय राजाजी ॥३॥

---

१ अंग शास्त्र। २ एक मास का अनशन।

एक एक रहि दूजी सहु, नमिराजाजी २,
कीनी दुरत - उतार राजाजी।
पति परमेश्वर सारखा, नमिराजाजी २,
जो जाने सो पतिव्रता नार राजाजी ॥ ४ ॥

पूछे भूपति कहो प्रिया, नमिराजाजी २,
अब नहीं होत अवाज राजाजी।
खट खट होवे बहु मिल्यां, नमिराजाजी २,
सोचो गरीबनिवाज राजाजी ॥ ५ ॥

पर संजोगे दुःख हुवे, नमिराजाजी २,
इण में संशय नहीं कोय राजाजी।
रमन करे यों ज्ञान में, नमिराजाजी २,
फिर दुःख काहे को होय राजाजी ॥ ६ ॥

एकत्व भावना भावता, नमिराजाजी २,
जाति स्मरण पायो ज्ञान राजाजी।
शीतल चन्दन लेपतां, नमिराजाजी २,
मिट गई तन की ताप राजाजी ॥ ७ ॥

भोग रोग सम जाणने, नमिराजाजी २,
दियो पुत्र को राज राजाजी।
मुनि हुआ ममता तजी, नमिराजाजी २,
केवल मोक्ष के काज राजाजी ॥ ८ ॥

शब्द कोलाहल हो रया, नमिराजाजी २,
उस वक्त नगरी के मांय राजाजी।
सुरेन्द्र भी आवियो, नमिराजाजी २,
ब्राह्मण रूप बनाय राजाजी ॥ ९ ॥

करण वैराग्य की पारखा, नमिराजाजी २,
यूं बोले वचन विचार राजाजी।
तुम दीक्षा से महामुनि, नमिराजाजी २,
यह रुदन करे नर नार राजाजी ॥ १० ॥

स्वार्थ का सब भूरणा, विप्र म्हालाजी २,
दियो सत पत्नी को न्याय म्हालाजी।
बोयो नजर लगाय ने, नमिराजाजी २,
थारा भवन जले महाराय राजाजी ॥ ११ ॥

राज तजा रमणी तजी विप्र म्हालाजी २,
तज्या पुत्र पोता परिवार म्हालाजी।
निर्मोही थई ने निकल्यो विप्र म्हालाजी २,
मैं लीनो संजम भार म्हालाजी ॥ १२ ॥

मुझ वस्तु कोई नहीं जले विप्र म्हालाजी २,
तुम बोलो वचन विचार म्हालाजी।
रक्षा निमित्त कराय ने नमिराजाजी २,
गोपुर सहित [1]पागार राजाजी ॥ १३ ॥

भीतर फिरणी खाई बारणे नमिराजाजी २,
बुरजों पर शस्त्र धराय राजाजी।
इतनो करने जावतो नमिराजाजी २,
तुम फिर होजो मुनिराय राजाजी ॥ १४ ॥

सम्यक श्रद्धा मुझ नगर के विप्र म्हालाजी २,
क्षमा को दृढ़ पागार म्हालाजी।
त्रण गुप्तिना मैं किया विप्र म्हालाजी २,
फिरणी खाई और द्वार म्हालाजी ॥ १५ ॥

शरीर धनुष तप बाण से विप्र म्हालाजी २,
करूं कर्म रिपु को नाश म्हालाजी।
रक्षा करी मैं नगर की विप्र म्हालाजी २,
तुम समझो बुद्ध विकास म्हालाजी ॥ १६ ॥

भवन करावो बहु भोमिया नमिराजाजी २,
एक पाणी बीच प्रासाद राजाजी।
पिछे तुम्हारे वंश में नमिराजाजी २,
कुटुम्ब करेगा याद राजाजी ॥ १७ ॥

चालतां मारग बीच में विप्र म्हालाजी २,
लेणो टुक विश्राम म्हालाजी।
वह नर घर कहो क्यों करे विप्र म्हालाजी २,
जिनके करनो मोक्ष मुकाम म्हालाजी ॥ १८ ॥

चोरादिक ने वश करो नमिराजाजी २,
देकर दण्ड करूर राजाजी।

१ प्राकार-शहरपनाह।

क्षेम करी निज ग्राम में नमिराजाजी २,
फिर लीजो योग जरूर राजाजी ॥ १६ ॥
छोड़ के असली चोर कूं विप्र म्हालाजी २,
नकली कुण पकड़े जाय म्हालाजी।
असली चोर कूं वश कीवे विप्र म्हालाजी २,
जो थे विषय कषाय म्हालाजी ॥ २० ॥
आय नम्या नहीं आपने नमिराजाजी २,
जो जो सबल सिरदार राजाजी।
उनको जीती वश करो नमिराजाजी २,
तुम फिर होजो अणगार राजाजी ॥ २१ ॥
शूर कहावे वो जगत में विप्र म्हालाजी २,
जो जीते सुभट दश लाख म्हालाजी।
जिससे शूरो कौन है विप्र म्हालाजी २,
धारी सुगता उगड़े आंख म्हालाजी ॥ २२ ॥
दुर्जय पंच इन्द्रिय पुनः विप्र म्हालाजी २,
सबल क्रोधादिक चार म्हालाजी।
जो नर आने जीतियो विप्र म्हालाजी २,
सो नर जीत्यो सब संसार म्हालाजी ॥ २३ ॥
मोटो यज्ञ करो तुम्हे नमिराजाजी २,
विप्र जिमावो स्वाम राजाजी।
होजो कर से दक्षिणा नमिराजाजी २,
फैलो जगत में नाम राजाजा ॥ २४ ॥
दान कोई नर दे सके विप्र म्हालाजी २,
कोई से दियो नहीं जाय म्हालाजी।
दोनों को संयम श्रेय है विप्र म्हालाजी २,
मुक्ति तणो फल थाय म्हालाजी ॥ २५ ॥
घोराश्रम को छोड़ के नमिराजाजी २,
कियो सोहिलो श्रम से प्रेम राजाजी।
इनसे तो यांही रहेणो सिरे नमिराजाजी २,
करणी कुछ व्रत नेम राजाजी ॥ २६ ॥
मास मास तप जो करे विप्र म्हालाजी २,
कुशाग्र सम अन्न खाय म्हालाजी।

सम्यक् श्रद्धा बिन जीव को विप्र म्हालाजी २,
सिरजो हुवे कभी नाय म्हालाजी ॥२७॥
हिरण्य सुवर्ण रत्ना करी नमिराजाजी २,
धन का भरो भण्डार राजाजी।
चतुरंग सेना बढ़ायने नमिराजाजी २,
फिर होवो अणगार राजाजी ॥ २८॥
धन थोड़ो तृष्णा घणी विप्र म्हालाजी २,
जेम नहीं आकाश को अंत म्हालाजी।
लोभी नर धापे नहीं विप्र म्हालाजी २,
अग्नि सिंधु को दृष्टान्त म्हालाजी ॥ २६॥
इण कारण तृष्णा घणी विप्र म्हालाजी २,
धार लियो संतोष म्हालाजी।
तप संयम धन साधु के विप्र म्हालाजी २,
पूरण भरिया कोष म्हालाजी ॥ ३०॥
यह यौवन वय आपकी नमिराजाजी २,
ले रया वैराग्य से योग राजाजी।
घर घर जावेगा गोचरी नमिराजाजी २,
देखोगा गृहस्थी का भोग राजाजी ॥ ३१॥
यह सुख राज संसार ने नमिराजाजी २,
छेदासो मन मांय राजाजी।
करजो काम विचार ने नमि राजाजी २,
फिर पश्चात्ताप न थाय राजाजी ॥ ३२॥
काम भोग छोडूं लोक में विप्र म्हालाजी २,
मैं जाणूं जहर समान म्हालाजी।
अभिलाषा भी जो करे विप्र म्हालाजी २,
पावे दुरगति स्थान म्हालाजी ॥ ३३॥
प्रश्न दस पूरा हुआ नमिराजाजी २,
इन्द्रा देख हर्षाय राजाजी।
प्रगट भयो सुर इन्द्र जी नमिराजाजी २,
ब्राह्मण रूप मिटाय राजाजी ॥ ३४॥
कर जोड़ी स्तुति करे नमिराजाजी २,
धन तुम नो वैराग्य राजाजी।

क्रोधादिक भले जीतिया नमिराजाजी रे,
आप गुणी महा भाग्य राजाजी॥ ३५ ॥
उत्तम श्रद्धा आपकी नमिराजाजी रे,
उत्तम बुद्धि निधान राजाजी।
शिव सुख पाजो साधु जी नमिराजाजी रे,
लोक में उत्तम स्थान राजाजी ॥ ३६ ॥
चरण नमी गुण गावतो नमिराजाजी रे,
इन्द्र गयो निज धाम राजाजी।
निर्मल संयम पालने नमिराजाजी रे,
पहुँचे मोक्ष मुक्काम राजाजी ॥ ३७ ॥
चौमासो करी आगरे नमिराजाजी रे,
आया दिल्ली शहेर राजाजी।
मेरे गुरु नन्दलालजी नमिराजाजी रे,
है मुझ उपर महेर राजाजी ॥ ३८ ॥

---

[६४]

अचम्भे का बच्चा

[दोहा]

प्रथम नमो गुरुदेव ने गुरु ज्ञान दातार।
गुरु चिन्तामणि सारखा, आपै सुख श्रीकार ॥ १ ॥
शील व्रत मोटो व्रत, भाख्यो सुगुरु दयाल।
सब गुण की रक्षा करे, ज्यूं सरवर जल पाल ॥ २ ॥

ढाल पहली

(तर्जः—बाल रे चन्देरीपति सूं कहे)

जम्बूद्वीप का भरत में, श्रीपुर नगर सुस्थान लालरे।
राज लीला सुख भोगवे, जित शत्रु राजान लालरे ॥ १ ॥
पर रमणी संग परहरो, जो सुख चाहो सेण लालरे।
मन्त्री राज्य धुरंधरु, सुबुद्धि नाम परधान लालरे ॥

निर्लोभी न्याई पणो, चारों बुद्धि निधान लालरे ॥ २ ॥
तिण नगरी मांही वसे, सागर सेठ विख्यात लालरे।
रिद्धिवन्त चगंजणो, सभी जन मानें बात लालरे ॥ ३ ॥
श्रीमती छे तस भारजा, पति भक्ता मति मान लालरे।
सुशीला चारुप्रेक्षिणी¹, लज्जावती गुणखान लालरे ॥ ४ ॥
एक दिवस वह श्रीमती, कर सघला सिणगार लालरे।
ऊंची चढ़ आवास पै, जोवे नगर बाजार लालरे ॥५॥
भूपति भी निज भवन में, बैठो गोख मंझार लालरे।
नगर छवी अवलोकतां, देखी सा सुन्दर नार लालरे ॥६॥
मन बिगड्यो महिपति तणों, पूछे मंत्री सु बात लालरे।
सो मुझ राह बतलाइए, रति पाऊं इण सात लालरे ॥७॥
मंत्री कहे महिपति सुणो, बुरो विचारयो काम लालरे।
इण एक सुख के कारणे, होसी तुम बदनाम लालरे ॥८॥
रावण राज गमाबियो, शास्तर को परमाण लालरे।
पर नारी चित चावतां, कीचक खोया प्राण लालरे ॥९॥
समझाता समझो नहीं, दीना बहु विध न्याय लालरे।
राजा हठ छोडी नहीं, दी मंत्री तब राय लालरे ॥१०॥
सागर सेठ बुलायने, दीजे हुक्म फरमाय लालरे।
जिहाँ मिले तिहां जायने, बचो अचम्मा को लाय लालरे ॥११॥
सेठ यहां से गया पछे, तुम मन चिंतित थाय लालरे।
ऐसी राह बतलावतों, खुशी हुवा महाराय लालरे ॥१२॥
सूत्र मुनि कहे सांभलो, यह हुई पहली ढाल लालरे।
तोत रचे अब नरपति, आलस चलगो टाल लालरे ॥१३॥

श्रोतागण मानव तुम्हें, सांभलजो चित लाय।
काम अन्ध हुवो थको, कपट रचे किम राय ॥१॥

ढाल दूसरी

(तर्ज:—जिन शासन नायक, सुगति जाने की तिवारी कीजिए)

तुम सम नहीं दूजो सेठ सिरोमणि, सिरीपुर के माँही ॥
निज अनुचर को भेज के सरे, तुरत सेठ बुलवाय।
आदर का आसण के ऊपर, सनमुख लियो बैठायजी ॥१॥

१ सुन्दर दृष्टि न रखी।

शेठ कहे कर जोड़ने सरे, केम बुलायो आज।
जो मुझ लायक काम हुवे सो, कहो गरीबनवाजजी ॥२॥
अन्तेवर इठ मांहियो सरे, वारंवार कहेवावे।
अचम्भा को बच्चो एक महेला में देखणो चहावेजी ॥३॥
हुकम कियो सब उमरावां पर, उत्तर दियो नहीं कोय।
मैं जाण्यों यो काम चतुर को होय उसी से होयजी ॥४॥
सुणो सेठजी मिले वहां से, आप जाय खुद लावो।
खरच पड़े जितना रुपैया, तुम चाहो जद ले जावोजी ॥५॥
छह महिना की अवधि आपी, करजो खूब तलास।
कारज सिद्ध हुवासे थाने, दूंगा फेर साबासजी ॥६॥
कहे शेठजी सुण महाराजा, घर में पूछी लेसूं।
जैसा राय होयगा वैसी, आय आप ने केसूंजी ॥७॥
सीख लेई घर आवियो सरे, निज नारी के पास।
क्योंकी त्यों सब मांडने सरे, कही बात प्रकाशजी ॥८॥
पशु और पक्षी पृथ्वी पर, कई तरह का होय।
अचम्भा को बच्चो आज तक, सुण्यो न देख्यो कोयजी ॥९॥
नारी कहे सुण नाथजी सरे, हग दृष्टी दो आप।
शील भंग सतियां को करवा, नृप विचारयो पापजी ॥१०॥
व्यभिचारी की होय खराबी, निडर रहो पतिराज।
परनारी फिर कभी न वंछे, ऐसो करां इलाजजी ॥११॥
कारीगर बुलवाय ने सरे, युगल होद बनवाया।
एक होद में कड़ तेल, दूजा में सेंत[1] भरायाजी ॥१२॥
एक बणायो पींजरो सरे, दई होद के पास।
लूण मुनि कहे दूजी ढाल में आगे रसिक समासजी ॥१३॥
अज्ञानी अन्धा जिसा, निज हित समझे नाय।
सिंह सरीखा सूरमा, पड्या पींजरा मांय ॥१॥

ढाल तीसरी

(तर्ज —चिन्तामणी पार्श्वनाथ दिया तो म्हारी चूड़लोजी पार्श्वनाथ)

नारी कहे सुण नाथ, विनवो राय ने, हो लाल, विनवो राय ने।
बच्चो अचम्भा को एक, लावसुं[2] लायने, हो लाल, लावसुं लायने ॥१॥

---

१ शिरा। २ लाकर।

कहिजो सहस्र पचास, खरच पड़सी सही, हो लाल, खरच पड़सी सही।
लागेला सट माम, या में संदेह नहीं, हो लाल, या में संदेह नहीं ॥२॥
इण विध बात बणाय, नृप ने खुश करो, हो लाल, नृप ने खुश करो।
नगर रुपैया गीणाय लाय घर में धरो, हो लाल, लाय घर में धरो ॥३॥
जासूं कस परदेश सभी से यह कहो, हो लाल, सभी से यह कहो।
पीछे हवेली के मझार, छाने सुं छिप रहो, हो लाल, छानेसुं छिप रहो ॥४॥
शेठ सागर सुण बात, जाय नृप ने कयो, हो लाल, जाय नृप ने कयो।
तिमहिज कर सब काम छानेसुं छिप रह्यो, हो लाल छानेसुं छिप रहो ॥
बीत्या दिन दो चार विचारयो रायने, हो लाल, विचारयो राय ने।
मध्य राते महिपाल पोशाक बणायने, हो लाल, पोशाक बणायने ॥५॥
सैर करण के काज आज जासूं सही, हो लाल, आज जासूं सही।
आऊं छूं पाछो सिताब राणी सूं इम कही, हो लाल, राणी सूं इम कही ॥
निकल्यो अकेलो राय पाप मन में वस्यो, हो लाल, पाप मन में वस्यो।
सागर सेठ के ठेठ भवन में आ घुस्यो, हो लाल, भवन में आ घुस्यो ॥८॥
आतो देख नरेन्द्र विनय कर श्रीमती, हो लाल, विनय कर श्रीमती।
विलमायो दे विश्वास शील राखण सती, हो लाल, शील राखण सती ॥
वस्त्र आभूषण खोल करो मज्जन सही, हो लाल, करो मज्जन सही।
मान्यो वचन नरेन्द्र कपट जाण्यो नहीं, हो लाल, कपट जाण्यो नहीं ॥
लज्जा ढांकण काज पेरयो पट राय ने, हो लाल, पेरयो पट राय ने।
करत स्नान तिवार बोल्यो सेठ आयने, हो लाल, बोल्यो सेठ आय ने ॥
खोलो शीघ्र कपाट कहै हेलो देयने, हो लाल, कहै हेलो देय ने।
बच्चो अचम्भा को एक आयो छूं लेय ने, हो लाल, आयो छुं लेयने ॥
यह हुई तीजी ढाल द्वार खोल्यो नहीं, हो लाल, द्वार खोल्यो नहीं।
'खूब' मुनि कहै नृप सती से सूं कहीं, हो लाल सती से सूं कही ॥१३॥

गरज बड़ी संसार में गरजे बणे गुलाम।
गरज थकी जन नीच ने ऊंचा करे प्रणाम ॥

ढाल चौथी

(तर्ज:—है गुरु म्हारा वे गुरु म्हारा मे कर जोडी बायरा)

कर जोड़ी कहै नरपति, मुज पर कर उपकार।
जब लग मैं जीवतो रहूँ, वंछू नहीं परनार ॥ १ ॥
पर रमणी पर रमणी को, संग कोई मत करो।

१ हल्ला करके—आवाज देकर।

कोप करी श्रीमती कहै, यह नहीं उत्तम रीत।
शील सत्यों को खण्डवा, ऐसी विचारी नीत॥ २॥
पर रमणी संग लागने, जे नर मान्यो सुख।
[1]पाने पड्या यम देव के, नरक में पावे छे दुःख॥ ३॥
माग भलो नृप थावरो, पहुंचो इणहिज स्थान।
अवर जगां ज्यों तू चूकतो,तो खोय बैठतो जान॥ ४॥
थोड़ा ही मैं छोड़ूं तुम्हें,छिप जावो इण घर मांय।
नृप मांही जातो पड्यो, सेत का होद के मांय॥ ५॥
तन खरड्यो लथपथ थयो, श्रीमती कहै महाराय।
इण में नहीं इण में नहीं, इण घर मांही जाय॥ ६॥
निकल्यो नृप व्याकुल थको,बीजा घर मांही जाय।
तिमहिज होद में जई पड्यो, रुई तन लिपटाय॥ ७॥
सिरीमती कहै सुण नरपति,निडर रहो मन मांय।
लघु बारी मांही नीकली, जाली में बैठो जाय॥ ८॥
बारी मांही तन सुकड़ ने, नीकल्यो नृप घबराय।
तिण पिंजर मांही जाई घुस्यो, कपट जाण्यो कछु नाय॥ ९॥
श्रीमती आय उतावली, तुरत फलक दियो डाल।
जोर कछू चाल्यो नहीं, कबजे हुवो महिपाल॥१०॥
द्वार खोल्यो पति आवियो, हँस हँस पूछे बात।
बच्चो अचम्भा को [2]फूटरो, मुशकिल आयो हाथ॥११॥
निश भर राखो मकान में, प्रगट हुवा परभात।
राज भवन में ले जावसां, अति उत्सव के सात॥१२॥
पिंजरे में विध[3] चिंतवी, बैठ रयो महिपाल।
दम्पति सुख से सो गया, 'खूब' कहे चौथी ढाल॥१३॥

गुरु ज्ञान वैराग्य को, असल चढावे रंग।
भूल चूक करजो मती, परनारी को संग॥

ढाल पांचमी

(तर्ज:—बीरा म्हारा गज थकी उतरो)

दिन उगो तब सेठजी, पहूँच्या राज भवन में रे।
मंत्री से मांग लवाजमो, लायो खुश होई मन में रे॥
यह गति होय कुशील थी, भविपण तुम सुण लीजो रे॥१॥

१ पाले पड़े। २ खूब सूरत। ३ भाग्य का विचार करके।

पिंजर काढ्यो बारणे, बाजितर रया बाजी रे।
यचो अचम्भा को देखने, लोक हुवा सब राजी रे ॥२॥
विविध मेंवा मांही फेंकता, कोई रया चमकाई रे।
कूदे फुदके उछले, नृप बोले कछु नाई रे ॥३॥
होता ग्यास बाजार में, पहुँचा महल मुंझारी रे।
राणी हुवा मय देखने, अन्तेवर परिवारो रे ॥४॥
तुरत देखाई महेल में, शेठ पीछो घर लायो रे।
पींजरथी काढ्यो बारणे, विधि से स्नान करायो रे ॥५॥
फिर पोषाक बगायने, नृप पायो चित चेनो रे।
निज मंदिर जातो थको, इण पर बोल्यो वेनो रे ॥६॥
धन धन तूं मोटी सती, चोखी करी चतुराई रे।
पत राखी थे म्हायरी, गुण भुलूं कमी नाई रे ॥७॥
बात किहां करजो मती, मैं सब माफी आपी रे।
ऐसी अनीति आज से, करसूं नाय कदापी रे ॥८॥
इम कही निज मंदिर गयो,सबको मन हुलसायो रे।
दिन भर सुन्दर बाग की, सहल करी इहाँ आयो रे ॥९॥
ते दिन थी नृप छोड़ियो, परनारी नो संगो रे।
श्रीमती पण मोटी सती, राख्यो शील सुचंगो रे ॥१०॥
इम सुण मानव जाणजो,पर रमणी निज माता रे।
इज्जत धन वणियो रहे, पावोला सुख साता रे ॥११॥
श्री श्री गुरु नन्दलालजी,ज्ञाननिधि जग मांही रे।
तस शिष्य लूप मुनि कहै,शील सदा सुखदायी रे ॥१२॥
गाँव लशाणी मेवाड में, उगणीसेअस्सी के सालो रे।
फाल्गुण शुदी दिन अष्टमी, पूरण करी पंच ढालो रे ॥१३॥

[६५]

सागर सेठ

(तर्ज:—वीरा म्हारा गज थकी उतरो)

मानव लोभ निवारिये, लोभ बुरो जग मांई रे ॥
जंबूद्वीप का भरत में, नगरी पदमपुरी मांई रे।
जितशत्रु तिहां राजवी, परजा में सुखदाई रे ॥१॥

सागर सेठ तिहां बसे, द्रव्य घणो[1] घर माई रे।
पुत्र सुचार सुहावणा, कुल दीपक गुणग्राही रे ॥२॥
बेटा नी बहुवां विनीत छे, बाजे धर्मण बाई रे।
अल्प आहारी अल्प भाषिणी,संप घणो माहो माई रे ॥३॥

सागर सेठ लोभी घणो,फाटो पहेरे लूखो खावे रे।
सुकृत में समझे नहीं, दान दिया पछतावे रे ॥४॥
आभूषण वस्तर नवा, पहेरण देवे नाई रे।
पहरे तो तुरत खोलाय ले, मेले मंजूष के माई रे ॥५॥

एक दिन फिरतो शहर में, द्वारे योगीश्वर आया रे।
भूखा था वे तीन दिवस का, भोजन तास जिमाया रे ॥६॥
प्रसन्न हुवो योगी तदा, दीनो मन्त्र सिखाई रे।
तीन दफे गुणियां थका, चाहे तिहां आवो जाई रे ॥७॥

इतने ससुरोजी आविया, जीमत देख्यो तेने रे।
कालो पीलो मन में थयो, देखो धरम सुमयो एने रे ॥८॥
योगी तब चलतो भयो, बहुवा ने ओलम्भो दीधो रे।
तिण दिन सागर सेठजी, एक दफे अन्न लीधो रे ॥९॥

बहुवां मिलने मतो कियो, कहो आपण सुं करवो रे।
खावण अरथे रुकवो नहीं, होसा थी हिवे[2] नहीं डरवो रे ॥१०॥
मोटो काष्ठ मगायने, साफ कराय सजावे रे।
मंत्र भणी उपर चढे, जावे तिहां मन भावे रे ॥११॥

वन वाड़ी पहाड़ां विषे, नदियां सिंधु निवाणे रे।
मन मानी मौजां करे, ससरोजी भेद न जाणे रे ॥१२॥
एक दिन ससरोजी देखियो, मर्म पड्यो मन माही रे।
बहुवां मिल किहां जाय छे, आवे तुरत चलाई रे ॥१३॥

काष्ठ पड्यो हुतो कोण में, लीनो तिण ने कोराई रे।
मांही सूतो लम्बो थको, डीगरी तास लगाई रे ॥१४॥
पहर निशा बाकी रही, चारों ही मिल कर आई रे।
ससरोजी जिहां सूता छसे, चुप चुप देवो चलाई रे ॥१५॥
विधि सांचव आरूढ हुई, पहुँची गगन मुझारी रे।
रत्न दीप मांही आयने, दीनो काष्ठ उतारी रे ॥१६॥

---

१ घणा । २ बुड्ढा । ३ कब ।

चारों ही मिल रामत करे, स्वाद लेवे फल मीठा रे।
डोसो निकल्यो धारणे, विविध रत्न तिण दीठा रे ॥१७॥
रत्न लिया मन मानिया, भरिया काष्ठ मझारे रे।
आप सुतो तन सुकड़ ने, हिवड़े हर्ष अपारे रे ॥१८॥
चारों ही आय उतावली, काष्ठ थई आरूढो रे।
देर इहाँ करवी नहीं, बूढ़ो छे अति मूढो रे ॥१९॥
विप्र द्विज निज घर चालतां, वेराएयां इम बोले रे।
भारी थयो दीसे [1]लाखड़ो, किम चाले होले होले रे ॥२०॥
एक कहे इम चालतां, [2]रखे [3]अवेलो [4]थासे रे।
सुसरा को डर राखवो, वकसे लोक सुणासे रे ॥२१॥
बीजी कहे कुल देखने, मात पिता परणाई रे।
सुसरोजी कृपण घणो, सुख देखण दे नाई रे ॥२२॥
तीजी कहे वक पानड़ा, पाका थइ थइ खरिया रे।
रवि ऊगी ऊग [5]आथम्यां, ससुराजी अजु नहीं मरिया रे ॥२३॥
दोष कोई ने देवो नहीं, चौथी इम समझावे रे।
कर्म शुभाशुभ जे करे, वे वैसा ही फल पावे रे ॥२४॥
पाट्यो व्योपारी की जहाजनो, टूट पड्यो जल मांई रे।
उदक हिलोल वहतो थको, आलो दियो दरशाई रे ॥२५॥
जेठाणी कहे इण काष्ठ ने, [6]मूको समुन्दर माई रे।
इण पाट्या का आधार थी, घर पहुँचा खण मांई रे ॥२६॥
डोसो कहे मूको मती, [7]हूँ छूं हूँ छूं इण मांही रे।
भय पामी चारों जणी, तुरत दियो छिटकाई रे ॥२७॥
सागर सेठ समुद्र में, मर कर नरक सिधायो रे।
घर में धन हूँतो घणो, कहो तेने काम सूं आयो रे ॥२८॥
तिण पाट्या पर बैठ ने, मंत्र थी तुरत चलायो रे।
बहुवां पहुँची निज घरे, मन मान्यो सुख पायो रे ॥२९॥
चारों ही पुत्र पिता भणी, जोयो न लाधो किहांई रे।
निज निज नारी ने पूछियो, ते कहे होसी इहांई रे ॥३०॥
जाती आवी कहे खात थी, सुझ थी काष्ठ कोरायो रे।
सायत तिण मांही होवसी, जोयो तो ते भी नहीं पायो रे ॥३१॥

---

१ लक्कड़। २ कदाचित्। ३ अवेरा–देरी। ४ होगा। ५ अस्त हो गया। ६ छोड़ो। ७ मैं हूं।

गया हुसी कोई देश में, इम धीरज मन धरियो रे।
वाट जोई दिन केतला, जाण्यो आखिर मरियो रे ॥३२॥
शोक मिट्या से चारों जणी, एक मतो कर लीनो रे।
वैराग्य भावे सतियाँ कने, संयम धारण कीनो रे ॥३३॥
पद्मपुरी का बाग में, विचरता मुनिवर आया रे।
सागर सेठ का डीकरा, वंदन काज सिधाया रे ॥३४॥
धर्म कथा सुण पूछियो, किहां वसे मुझ भ्राता रे।
अतिशय ज्ञानी जिम हुती, तिम मांड कही सब बातो रे ॥३५॥
क्रोध मान माया लोभ ये, चारों संसार बढावे रे।
इनका संग छोड्या थकां, भव भव में सुख पावे रे ॥३६॥
सागर सेठ की वारता, गुरु मुख से सुण पाई रे।
तिण अनुसारे उमंग से, जुगति जोड बनाई रे ॥३७॥
उगणीसे साठ तेवीस में, पोस विदि दिन पांचे रे।
'खूब' मुनि रतलाम में, ढाल जोडी एक सांचे रे ॥३८॥

[६६]

ऋषभ भवान्तरी

(तर्ज:—थाव थरी जिन वन्दिये)

ऋषभ जिनन्द भगवान् को, तेरा भवों को चरित्र सुणीजे ॥
जम्बूद्वीप के मध्य में, पश्चिम महाविदेह जान सुणीजे।
देवपुरी सम शोभतो, नगर [1]सुपईठ बखान सुणीजे ॥१॥
सुखदाई परजा तणो, प्रियंकर नामा राय सुणीजे।
अति धनवंतो तिहां वसे, धन्नो [2]सारथवाह सुणीजे ॥२॥
लाभ कमावण कारणे, थयो छे आप तइयार सुणीजे।
निज नगरी सूं निकल्यो, घणां व्योपारी छे [3]लार सुणीजे ॥३॥
मारग आता मानवी, करता जाय मुकाम सुणीजे।
शीतल छाया देखने, वन में कियो विश्राम सुणीजे ॥४॥

१ नगर। २ सुप्रतिष्ठ। ३ स

तिण वेला ते पड़ाव में, तपस्वी मोटा मुनिराय सुणीजे ।
चौमासी ने पारणे फिरतां आया तिण मांय सुणीजे ॥४॥
दूर थी आता देखने, सेठ को हर्ष्यो मन्न सुणीजे ।
सन्मुख जा वन्दन करी, आज [1]दिहाड़ी धन्न सुणीजे ॥५॥

और न वस्तु सूझती, सूं करीयें सन्मान, सुणीजे ।
ना न कहे मुनि जब लगे, देऊ घृतनो दान, सुणीजे ॥७॥
मुनिवर पातर माँडियो, सुर परीक्षा करी आन, सुणीजे ।
ना न कह्यो मुनि जब लगे, दीजे घृतनो दान, सुणीजे ॥८॥
पात्र से बाहिर निकली, जातो हुओ दर्शाय, सुणीजे ।
निश्चल मन चिन्ते सेठजी, घृत मुनिवर नो जाय, सुणीजे ॥९॥

या विधि पुण्य सचय करी, नगरी वसंतपुर आय, सुणीजे ।
क्रय विक्रय कीनो अति घणो, गहरी[2] टूटी अन्तराय, सुणीजे ॥१०॥
सेठ तिहाँ से पीछो फिरयो, घर आयो लाभ कमाय सुणीजे ।
पहलो भव थयो ऋषभ को, आनन्द में दिन जाय सुणीजे ॥११॥

दूजे भव जुगल्या हुआ, उत्तर कुरु अवतार, सुणीजे ।
तीजे भव हुआ देवता, पहिला स्वर्ग मुझार, सुणीजे ॥१२॥
विजय भली पुखलावती[3], पूर्व महाविदेह माँय, सुणीजे ।
न्याय निपुण जगा निधि, सतबल नामा राय, सुणीजे ॥१३॥

देव तणी स्थिति भोगने, अनुभव्या सुख अपार, सुणीजे ।
ते सुर चवी तेहनो सुत हुओ, महाबल नाम कुमार, सुणीजे ॥१४॥
बाल अवस्था नीकली, कल बल बुद्धि अनूप, सुणीजे ।
तात ने पाट कालान्तरे, हुओ महाबल भूप, सुणीजे ॥१५॥

रात दिवस रहे महल मे, राज काज तज दीन, सुणीजे ।
नाटक जोवे नव नवा, भोग मांही लवलीन, सुणीजे ॥१६॥
इतने आय उतावलो, मंत्री करे अरदास, सुणीजे ।
भोग तजी जोग आदरो, आयुष रह्यो एक मास, सुणीजे ॥१७॥

भूप पुछे व्याकुल थको, ते किम जाणी बात, सुणीजे ।
विद्याचारण मुनिवरू, मुझने कह्यो साक्षात, सुणीजे ॥१८॥
आयुष तो एक मास को, इनमें कहो क्या होय, सुणीजे ।
भोग मांही नित्य राचने, वक्त दियो सब खोय, सुणीजे ॥२०॥

---

१ दिन । २ बहुत नफा हुआ । ३ पुष्कलावती ।

मंत्री कहे एक दिवस को, पाले संजम भार, सुणीजे ।
तिण हिज दिन वैराग्य से, पचख दियो संथार[1], सुणीजे ॥२१॥
बावीस दिन दीक्षा पालने, काल करी मुनिराय, सुणीजे ।
हुआ ललितांग देवता, दूजा स्वर्ग के मांय, सुणीजे ॥२२॥
स्वयंप्रभा देवी तेहने, तिण सेती राग अपार सुणीजे ।
खिण भर जुदा नहीं रहे, व्यापक विषय विकार सुणीजे ॥२३॥
आयो तिहांहिज आपदा, इम बोले संसार सुणीजे ।
देवी चवी तब देवता, आरति करे है अपार सुणीजे ॥२४॥
मंत्री महाबल भूप को, ते भी हुओ तिहां देव सुणीजे ।
आयो ललितांग देव पैं, विनवे यों स्वयमेव सुणीजे ॥२५॥
इतनी सोच न कीजिये, देवी ते देसुं मिलाय सुणीजे ।
काम सरे उद्यम कियां, तेहनो है एक उपाय सुणीजे ॥२६॥
देवी चवी धात्रीखण्ड का, पूर्व महाविदेह मांय सुणीजे ।
पुत्री हुई छे सातमी, विप्र तणा घर जाय सुणीजे ॥२७॥
तात तेहनो नागल हतो, दुखियो है पाप प्रभाव सुणीजे ।
अन धन से निज कुटुम्ब को, कर सके नहीं निरभाव सुणीजे ॥२८॥
घबरायो इम चिन्तवे, जो अब पुत्री होय, सुणीजे ।
चल्यो जासूं परदेश में, घर में रहूं नहीं कोय, सुणीजे ॥२९॥
तब नारी हुई गर्भिणी, विप्र धरे अति द्वेष, सुणीजे ।
पुत्री हुई फिर सांभलीं, भाग गयो परदेश, सुणीजे ॥३०॥
प्रेम विना पाली पुत्रिका, नारा थी निज मांय, सुणीजे ।
रोष वसे निज पुत्री को, नाम दियो कुछ नांय, सुणीजे ॥३१॥
नाम निनामी लोगां दियो, दुःख मांही दिन जाय सुणीजे ।
करती वन[2] आजीविका, टक लावे टंक खाय, सुणीजे ॥३२॥
तिण वन में एक महामुनि, पाया है केवल ज्ञान, सुणीजे ।
महिमा करन मुनि वंदवा, मिलिया सुरासुर आन, सुणीजे ॥३३॥
देख उद्योत तिहां गई, सुणियो तब उपदेश, सुणीजे ।
व्रत धारी हुई श्राविका, हृदय हर्ष विशेष, सुणीजे ॥३४॥
मुनि वंदी गई निज घरे, रहे सतियों के पास, सुणीजे ।
सेवा करे बहु तप तपे, करती ज्ञान अभ्यास, सुणीजे ॥३५॥

१ समाधिमरण अङ्गीकार कर लिया । २ जंगल । ३ लकड़हारे का धन्धा ।

शीलवती बाई धर्मिणी, संघ मांही जस लीध, सुणीजे ।
आलोचना कर शुद्ध मने, आखिर अनशन कीध, सुणीजे ॥३६॥
इहां से जाय उतावला, श्री निहाणो कराय, सुणीजे ।
ललितांग सुर सुन सज थयो, पहुँचो तुरत तिहाँ जाय, सुणीजे ॥३७॥
बात कही मह मांहने, जिम तिम मन ललचाय, सुणीजे ।
ललितांग सुर निज स्थानके, गयो निहाणो कराय, सुणीजे ॥३८॥
ते मर फिर देवी हुई, सुर मन हर्ष अपार, सुणीजे ।
नाटक जोवे नव नवा, भोगवे भोग उदार, सुणीजे ॥३९॥
विजय भली पुखलावती, पूर्व महा विदेह मांय, सुणीजे ।
लोहागर नगर भलो, सुवर्ण जंग महाराय, सुणीजे ॥४०॥
तिण घर नीको नन्द हुश्रो, ललितांग सुर को जीव सुणीजे ।
लक्ष्मी राणी की कुख को, वज्रजंग नाम समीव सुणीजे ॥४१॥
वलि तिहां षट खण्ड को धणी, वज्रसेन नाम भूपाल सुणीजे ।
ते देवी मर तिण ने घरे, पुत्री हुई सुकमाल सुणीजे ॥४२॥
नाम दियो तस श्रीमती, घर में बहु सुख योग सुणीजे ।
रूप कला गुण सोहती, तिण हुई छे वरने योग सुणीजे ॥४३॥
चक्रवर्ती की जन्म गांठ पै, मिलीया है कई भूपाल सुणीजे ।
निज नन्दन लेई आवियो, सुवर्ण जंग भी चाल सुणीजे ॥४४॥
तिण वेलां ते श्रीमती, जातो देखी सुर विमाण सुणीजे ।
मन मांही चिंतित उपन्यो, जाति स्मरण ज्ञान सुणीजे ॥४५॥
ललितांग सुर तिहां उपनो, पायो मनुष्य अवतार सुणीजे ।
तेहीज पति शिर धारस्यूं, लीनो अभिग्रह धार सुणीजे ॥४६॥
निज चित्र लिखियो फलक पै, धरियो भवन के द्वार सुणीजे ।
देखी स्वयंप्रभा स्वयंप्रभा, कहसी ते मुझ भरतार सुणीजे ॥४७॥
ते वेला मंडप सुर रच्यो, मानो सुर विमाण सुणीजे ।
ते मांही निज आसणे, बैठा है भूपति आण सुणीजे ॥४८॥
चक्रवर्ती नजराणे ले रह्यो, दो रह्या अतर पान सुणीजे ।
वाजिन्तर वाजी रह्या, जाचक ने देता दान सुणीजे ॥४९॥
वर्षी उत्सव मनायने, जलुस जोड़ी नरनाथ सुणीजे ।
राजभवन मांही आवतां, वज्र जंग कुंवर भी साथ सुणीजे ॥५०॥
चित्र देख्यो ते कुंवरजी, हुश्रो जाति स्मरण वन्त सुणीजे ।
स्वयंप्रभा स्वयंप्रभा इम कयो,-कुंवरी जाणयो निज कंत सुणीजे ॥५१॥

तिणहिज अवसर भूपती, पुत्री ने पूछयो विचार सुणीजे।
तू कहे तो सगपण करों, नहीं तो स्वयंवर धार सुणीजे ॥५२॥
तव कुंवरी का कहन से, स्वयंवर मंडप कीध, सुणीजे।
कुंवरी वरयो तिण कुंवर ने, हुआ मनोरथ सिद्ध, सुणीजे ॥५३॥
तिण अवसर ते निधिपति, श्रीमती पुत्री प्रधान, सुणीजे।
तुरत व्याही तिण कुमर ने, महोत्सव कर महाण,'सुणीजे ॥५४॥
दायजो दीनो अति घणो, अन्त विदा कर दीध, सुणीजे।
पुत्री पहुँचाई सासरे, बहु विध शिक्षा दीध, सुणीजे ॥५५॥
निकल्यो लेई निज सायबी, सुवर्ण जग नरेश, सुणीजे।
रंग विनोद होतां थकां, आवीया आपणे देश, सुणीजे ॥५६॥
कुंवर ने राज देई करी, सुवर्ण जग महाराय, सुणीजे।
सयम ले कर्म काटने, मोक्ष विराज्या जाय, सुणीजे ॥५७॥
राज पाले वज्रजंग हिवे, श्रीमती छे पटनार, सुणीजे।
निश दिन रहे वैराग्य में, जाण्यो अनित्य ससार, सुणीजे ॥५८॥
मध्य रात्री राणी प्रत्ये, इम बोले महाराय, सुणीजे।
सुपना सरीसी साहबी, अवसर बीत्यो जाय, सुणीजे ॥५९॥
जो मन होवे थांयरो, प्रगट हुवा प्रभात, सुणीजे।
राज कुंवर ने स्थापने, सयम लेवा साथ, सुणीजे ॥६०॥
राणी कहे सुण रायजी, मुझ मन येही विचार, सुणीजे।
धर्म में ढील न कीजिए, निकलो तज ससार, सुणीजे ॥६१॥
इम विचारी ने सो गया, निद्रा में भरपूर, सुणीजे।
पलटो नियत निज पुत्र को, ध्यायो ध्यान करूर[1], सुणीजे ॥६२॥
जन्म लियो घर नृपति के, मिलियो सब सुख साज, सुणीजे।
तात परलोक हुवे कभी, कब मिलसी मुझ राज, सुणीजे ॥६३॥
तत्क्षण उठ आयो तिहां सोता छे बाप ने माय, सुणीजे।
लोभ वसे निर्दय थको, दीनी छे अगन लगाय, सुणीजे ॥६४॥
दुष्ट हणिया मा बाप ने, अनथ कीदो[2] अपार, सुणीजे।
दोऊ मरी जुगलया थया, उत्तर कुरु अवतार, सुणीजे ॥६५॥
देव थया भव आठ में, पहिला स्वर्ग मझार, सुणीजे।
पूर्व विदेह नवम भवे, उपनो वैद्य कुंवार, सुणीजे ॥६६॥

---
१ क्रूर-दुष्ट—२ किया।

नाम जीवानंद थापियो, करतो पर उपकार, सुणीजे।
राजादिक ना सुत भला, मित्री है तेहने च्यार, सुणीजे ॥६७॥
पांचमो मित्र है सेठ को, केशव नाम कुंवार, सुणीजे।
श्रीमती को जीव जाणजो, होसी श्रीयाँस कुंवार, सुणीजे ॥६८॥

इतने तो विचरत आईया, कीट सहित अणगार, सुणीजे।
मुनि तन मित्र देखने, उपनी करुणा अपार, सुणीजे ॥ ६९॥
पांचों मित्र कहे वैद्य ने, येह मुनि को दुःख टार, सुणीजे।
इससे मोटो फिर जगत में, और कैसो उपकार, सुणीजे ॥७०॥

ओषधी है सब मुझ कने[१], तीन वस्तु की चाय, सुणीजे।
तेल चन्दन ने कामली, देसूं रोग मिटाय, सुणीजे ॥७१॥
सेठ ने जाण्यो जायने, बात कही सब खोल, सुणीजे।
दीनी ते तुरत निकाल के, तीनों ही वस्तु अमोल, सुणीजे ॥७२॥

लक्ष औषधी तेल चोपड़यो, रतन कम्बल दीनी वींट, सुणीजे।
साधु ना सर्व शरीर थी, बाहिर निकल्या कीट, सुणीजे ॥७३॥
मुआ कलेवर मांयने, कीट सभी धर दीध, सुणीजे।
बावनो चन्दन चर्चीयो, तीन वक्त इम कीध, सुणीजे ॥७४॥

वैद जीवानंद मुनि तणो, कीधो निरोगो तन्न, सुणीजे।
मोटो लाभ कमावियो, लोग कहे धन्न धन्न, सुणीजे ॥७५॥
छहुँ मित्रों ने साथ में, लीनो संयम भार, सुणीजे।
दसमे भव हुवा देवता, बारमां स्वर्ग मुझार, सुणीजे ॥७६॥

विजय भली पुखलावती, पूर्व महाविदेह मांय, सुणीजे।
पुंडरीकिणी नगरी भली, वज्रसेण तिहां राय, सुणीजे ॥७७॥
तीर्थंकर पद सहित छे, धारिणी तस पटनार, सुणीजे।
ते सुर चवि तेहनी कुंख में, पुत्र पणे अवतार, सुणीजे ॥७८॥

वज्रनाभ, बाहु सुबाहु, पीठ महापीठ धीवन्त, सुणीजे।
ज्येष्ठ पुतर चक्रवर्त छे, होसी ऋषभ भगवन्त, सुणीजे ॥७९॥
श्रीमती को जीव स्वर्ग से, ते पिण नर अवतार, सुणीजे।
चक्रवर्त को हुवो सारथी, विलसे सुख संसार, सुणीजे ॥८०॥

वज्रसेण तीर्थंकरु, ज्येष्ठ पुत्र ने पट थाप, सुणीजे।
वर्षी दान देई करी, संयम लीनो आप सुणीजे ॥८१॥

१ पास।

वज्रनाभ पट रायहपति, निज माया माथे प्रेम, सुणीजे।
सम्पूरण रिद्ध भोगवे, निश दिन वरते खेम, सुणीजे ॥८२॥
विचरत आया तिण समे, वज्रसेन जिन राय, सुणीजे।
चक्रवर्त लेई निज साहबी, जिन पद वंदा आय, सुणीजे ॥८३॥
जिनवर धर्म सुणावियो, जाण्यो अनित्य संसार, सुणीजे।
चक्रवर्त संयम आदरयो, पांचों ही बंधव लार, सुणीजे ॥८४॥
सारथी पण माथे थयो, पाले गुरुजी की केण, सुणीजे।
महिमंडल मांहि विचरता, सकल जीवां की सेण, सुणीजे ॥८५॥
वज्रनाभ मुनिवर भणया, चवदा पूरव मन रग, सुणीजे।
उद्यम कर पांचो मुनि, भणिया इग्यारे अंग, सुणीजे ॥८६॥
प्रामाधिक मुनि विचरिया, करने धर्म उद्योत, सुणीजे।
दो दस बोल सेवन करी, बांध्यो तीर्थंकर गोत्र सुणीजे ॥८७॥
बाहु सुबाहु दोनो मुनि, आलस्य को तज दीन, सुणीजे।
पांच सौ मुनि तपस्वी तणी, तन मन व्यावच[2] कीन, सुणीजे ॥८८॥
रात दिवस करे वन्दगी, राजकुली अणगार सुणीजे।
चारों ही संघ स्तुति करे, सफल एहनो अवतार सुणीजे ॥८९॥
पीठ महापीठ मुनि वरू, गुण सुण सुण पावे खेद सुणीजे।
द्वेष भाव हिरदे घणो, बाध्यो स्त्री वेद सुणीजे ॥९०॥
सयम तप धन संचते, आखिर अनशन कीध सुणीजे।
काल करी ने छहूं मुनि, उपना सर्वार्थसिद्ध सुणीजे ॥९१॥
द्वादसमो भव यह हुवो, रचियो सरस सम्बन्ध सुणीजे।
हिवे कहेसुं भव तेरमो, सुणतां चित्त आनन्द सुणीजे ॥९२॥
जम्बू द्वीप का भरत में, कोशल नामा देश सुणीजे।
तीजे आरे उतरतां, कुलकर नाभि नरेश सुणीजे ॥९३॥
मरुदेवी [3]तस्य भार्या, परम सुखी पुण्यवन्त सुणीजे।
ते जननी की कूंख में, उपन्या श्री भगवन्त सुणीजे ॥९४॥
चौथ असाढ़ कृष्ण पखे, आया गर्भ मुझार सुणीजे।
चैत्र विदी दिन अष्टमी, आप लियो अवतार सुणीजे ॥९५॥
छपन कुंवारी देवी मिली, मिलिया इन्द्र तमाम सुणीजे।
मेरु गिरी महोत्सव कियो, दियो ऋषभ जी नाम सुणीजे ॥९६॥

१ बीस । २ सेवा । ३ तस्य—उसकी ।

लाख चौरासी पूर्व को, आयुष्य पाया आप सुणीजे।
तन कंचन सम सोहतो, पूरब पुण्य प्रताप सुणीजे।
इन्द्र आई नृप पद दियो, ऋषभ थयो महाराय सुणीजे।
सर्व विज्ञान सिखावियो, प्रजा के हित काज सुणीजे॥

प्रथम सुमङ्गला परणिया, दूजी सुनन्दा नार सुणीजे।
आदि राजा हुआ भरत में, विलसे सौख्य अपार सुणीजे॥
ते सुर चारों ही चव करी, ऋषभ घरे अवतार सुणीजे।
एक एक जनम्यो जोड़लो, बेहुं ऋषभ जी की नार सुणीजे॥१

भरत अने ब्राह्मी हुआ, दोनों भगिनी भ्रात सुणीजे।
बाहुबली अने सुन्दरी, सुनन्दा का अंगजात सुणीजे॥१०
सुमङ्गला फिर जनमिया, जोड़ला गुण पच्चास सुणीजे।
ऋषभ जी के दो बेटियाँ, सब सुत होय [1]पच्चास सुणीजे॥१०

बी दश लाख पूरब लगे, कंवर पदे रया आप सुणीजे।
त्रेसठ लाख पूरब लगे, भोगवियो राज प्रताप सुणीजे॥१०३
लाख पूरब बाकी रया, दियो भरत ने पाट सुणीजे।
बाकी निन्याणु पुत्र ने, राज दियो सब बाँट सुणीजे॥१०४

वर्षी दान देई करी, चार सहस्र परिवार सुणीजे।
चैत्र विदी नवमी दिने, लीनो संजम भार सुणीजे॥१०५
वर्ष दिवस ने पारणे, ऋषभ त्रिलोकी नाथ सुणीजे।
इक्षु रस को कियो पारणो, श्रीयाँस कुंवरजी के हाथ सुणीजे॥१०६॥

सहस्र वर्ष छद्मस्त रया, निश दिन निर्मल ध्यान सुणीजे।
फागुण वदि एकादशी, उपनो केवल ज्ञान सुणीजे॥१०७॥
केवल महिमा सुर करे, हो रया जय जयकार सुणीजे।
दो विधि धर्म बतावियो, थाप्या तीरथ चार सुणीजे॥१०८॥

चौरासी सहस्र मुनि हुआ, चौरासी हुवा गणधार सुणीजे।
तीन लाख हुई आरज्याँ, केवली बीस हजार सुणीजे॥१०९॥
तीन लाख श्रावक हुआ, ऊपर पाँच हजार सुणीजे।
पाँच लाख हुई श्राविका, ऊपर [2]चोष्ट हजार सुणीजे॥११०॥

चार सहस्र साढ़ा सात सौ, चवदा पूरब का धार सुणीजे।
बारा सहस्र छसौ पचास, वादी हुआ अणगार सुणीजे॥१११॥

---

[1] सौ। २ चौंसठ।

बीस सहस्र छ सौ ऊपरे, वैक्रिय लब्धि का धार सुणीजे।
बारा सहस्र छसौ पचास, विपुल मतीना धार सुणीजे ॥११२॥
बावीस सहस्र नव सौ मुनि, गया अनुत्तर विमान सुणीजे।
साठ सहस्र साधु साधवी, पहुँचा ते निर्वाण सुणीजे ॥११३॥
महि मंडल माँही विचरता, करता पर उपकार सुणीजे।
केईक मेल्या मोक्ष में, केईक स्वर्ग मुझार सुणीजे ॥११४॥
आदीश्वर आखिर समय, लाख पूरव संयम पार सुणीजे।
अष्टा पद गिरि ऊपरे, दस सहस्र मुनि परिवार सुणीजे ॥११५॥
पल्यकासण बैठा थका, छै दिन क उपवास सुणीजे।
माह वदि तेरस के दिने, मुक्ति में कीनो निवास सुणीजे ॥११६॥
पचास लाख क्रोड सागर लो,शासन स्वामी को जाण सुणीजे।
पाट असंख्य मुगति गया, सूत्र वचन प्रमाण सुणीजे ॥११७॥
दान दिया से सुपात्र ने, मिट जावे सब सब दु:ख सुणीजे।
आदीश्वरजी की परे, अधिक अधिक पावे सुक्ख सुणीजे ॥११८॥
साधु सतियाँदिक से करूँ, विनती बारम्बार सुणीजे।
ओछो अधिको जे हुवे, लीजो आप सुधार सुणीजे ॥११९॥
श्री श्री गुरु नन्दलालजी, खुश होकर मन माँय सुणीजे।
हुक्म दियो तब जावरे, कीनो चौमासो आय सुणीजे ॥१२०॥
उगणीसे साठ चौबीस में ऋषि पचमी गुरुवार सुणीजे।
जोड़ी ऋषभ भवन्तर[1], ऋषभ चरित्र अनुसार सुणीजे ॥१२१॥

---

[६७]

अमरसेन वीरसेन चरित्र

पार्श्वनाथ प्रणमूं सदा, वामा देवी नन्द।
नित्य स्मरण करतां थकां, पावे चित आनन्द ॥ १ ॥
शरणमही जिनराज का, कहूँ कथा विस्तार।
अमरसेन वीरसेनजी, किम पाया भव पार ॥ २ ॥

---

१ भवान्तर।

दो थे लड़के ग्वाल के, दुखिया दीन अनाथ।
हस्तिनापुर में आविया, दोनों भाई साथ॥ ३॥
उस नगरी के मायने, श्रावक था जिनदास।
दया भाव कर तेहने, राख्या दे विश्वास॥ ४॥

ढाल पहली

(तर्ज:—चन्द्रगुप्त राजा सुणो)

एक भाई वन के विषे, वाछरू लेई ने जावे रे।
साथे बाँधे सूंकड़ी, साँझ पड्या घर आवे रे॥ १॥
चतुर सनेही सांभलो॥ टेक॥

दूजो भाई घर रहे, करे [१]मोलायो कामो रे।
रात दिवस मन नी रली, सुखे रहे आठों यामो रे॥ २॥
श्रावक मात-पिता जैसो, निज गुण मांहे घमियो रे।
साधु तणी सेवा करे, जिनवाणी को रसियो रे॥ ३॥
कोइक दिन के आतरे, हस्तिनापुर के मांही रे।
साधु सुपात्र पधारिया, भद्रिक भाव सहाई रे॥ ४॥
श्रावक सुन मन हुलसियो, वंदन काज सिधावे रे।
दोनों लड़के ग्वाल के, साथ लायो चित चावे रे॥ ५॥
मुनिवर दीनी देशना, भाख्यो तप अधिकार रे।
तपस्या से कर्म क्षय हुवे, विपत नसावन हार रे॥ ६॥
श्रावक सुण उपदेशना, हिवडे हर्ष भरायो रे।
वंदना कर मुनिराज ने, सेठ निज घर आयो रे॥ ७॥
दोनों भाई बैठा रया, मन में एम [१]विमासो रे।
इन्द्र-धनुष तरु-पान ज्यों, है इस तनको तमासो रे॥ ८॥
कर जोडी उभा हुवा, आया मुनिवर पास रे।
गुरु मुख से भावे करी, पचक्ख लियो उपवास रे॥ ९॥
श्रावक कहे अरे [२]बालूड़ा, बहुत लगाई देर रे।
भोजन यह लीमो तुम्हे, हुई अब क्यों अबेर रे॥१०॥
आज हम हैं उपवासिया, तब सेठ कहे शुद्धभावे रे।
दान दीजो निज हाथ सूं, जो मुनिवर यहां आवे रे॥११॥

---

१ सौंपा हुआ। १ विमर्श—विचार। २ बच्चो।

घाट जोवे दोनों जणा, तिण अवसर मुनिराया रे।
मास खमण के पारणे, फिरता यहां ही आया रे ॥१२॥
एक स्थाने आई मिलया, चित, वित, पात्र, तीनों रे।
मुनिवर के चाहे जैसा, दान भावे करी दीनों रे ॥१३॥
पड़त संसारी दोनों हुवे, दीनी दुरगत टाल रे।
'खूब' मुनि कहे सांभलो, यह हुई पहेली ढाल रे ॥१४॥

ढाल दूसरी

(तर्ज:—रे जाया तुम बिन घड़ी रे छह मास)

तिण काले ने तिण समेजी, कंपिलपुर के माय।
परजा पालक गुण निलोजी, जयसेण नामे राय ॥ १ ॥
चतुर नर करजो साधु की सेव ॥ टेक ॥

पटराणी तस प्रेमलाजी, निसदिन करे रे विलाप।
पुत्र नहीं एक म्हारे जी, कांई बांध्यो पाप ॥ २ ॥
दुमण महारानी हुई जी, भूपति पूछे जी एम।
कौन वचन तुम लोपियोजी, आरति आई केम ॥ ३ ॥

बात कही सब मांडने जी, तब नृप करेजी उपाय।
नेमित्तिक बुलायने जी, पूछे तब महाराय ॥ ४ ॥
निमितियो कहे सांभलोजी, पुत्र होसे जी दोय।
विछड़ी पड़से मातनोजी, परदेशां सुख होय ॥ ५ ॥

साधु की सुण उपदेशनाजी, होसे महा मुनिराय।
तप संयम शुद्ध पालनेजी, जासे मुक्ति माय ॥ ६ ॥
वे दोनो बालक मरीजी, प्रेमला के कूंखे आय।
पूरे महिना जनमियाजी, महोत्सव कीनो राय ॥ ७ ॥

पांच वर्ष का बाल हुआजी, माता कीनो काल।
सौतेली माता करेजी, दोनों का प्रतिपाल ॥ ८ ॥
अनुक्रमे मोटो हुवेजी, दोनों भाई की जोड़।
करे किलोलां शहर में जी, इच्छा हो तिण ठौड़ ॥ ९ ॥

यौवन वय में आवियाजी, राज कुंवर सुखमाल।
यश महिमा अति विस्तरीजी, चाले कुल की चाल ॥ १० ॥
पटरानी महिपाल की जी, मन में करे रे विचार।
राज मिले जो पहने जी, कुण पूछे मुझ सार ॥ ११ ॥

विष, शस्त्र, मंत्र, करीजी, मैं मारूं देई त्रास ।
पाप लगे पहिलो सहीजी, होय नरक-में वास ॥ १२ ॥
चरित्र रचूं कोई एहवोजी, दूं इनके सिर दोष ।
परधारो पापी करेजी, पूरे मुझ मन होंस ॥ १३ ॥
'खूब' मुनि कहे सांभलोजी, या हुई दूजी ढाल ।
बात जँचावे राय ने जी,कुंवर का पुराय विशाल ॥ १४ ॥

ढाल तीसरी

(तर्ज —यो भव रत्न चिन्तामणि सरीखो)

चरिताली निज पति भरमावण, साड़ी फाड़ी खरड की धारे ।
निज हाँता थी अँग विलूरयो, गहेणा विखेरी दीधा रे ॥१॥
देखो करम गत दोनों कुंवर की ॥
मस्तक का फिर खोलया लटुरया, चूड़यां चकचूरां रे ।
एकांत जाय पलंग पर पोढ़ी, चरित्र रच्यो इण पूरो रे ॥२॥
तिण दिन नृपति हर्ष धरीने, महेला मांही आयो रे ।
पटराणी साम्हो नहीं जोवे, चिन्ते तब महारायो रे ॥३॥
राय कहे किण कारण राणी,आरति तुम्हें दिल छाई रे ।
बिना कहे मालुम किम होवे, दीजे चौड़े दरसाई रे ॥४॥
टपक टपक तेहना आंख थी आंसु, वर्षे जिम जलधारा रे ।
गद्गद् बोले छाती भरावे, रोवे अति विकरारा रे ॥५॥
परमेश्वर म्हारी पत राखी, होत कौन विचार रे ।
कुल ने कलंक न लाग्यो सो चोखो,देवी करी मुझ सार रे ॥६॥
दोनों कर माथे धर लीना, कपड़ा से पूछे आंसू रे ।
थरथर गात्र धूजे अति कंपे, नृपति देख विमासू रे ॥७॥
भिन्न भिन्न कारण नरपति पूछे,होवे सो कहो मुझ साँची रे ।
शंको मन में भूल न राखो, होवेगा सब आछी रे ॥८॥
ऐसा वचन सुणी महाराणी, कहवे भूपति आगे रे ।
साँच कह्या लज्जा मुझ आवे, बात आछी नहीं लागे रे ॥९॥
शपथ दिलाई आपणी राजा, तब राणी इम भाखे रे ।
मेलवणी सागे कर दीधी, सब सांचो कर दाखे रे ॥१०॥
प्रेमला राणी की कुक्षि का जाया, अमरसेन वीरसेनो रे ।
यौवन में वो कछु ही सूझे, विषय अंध सु केणो रे ॥११॥

दोनों श्वान ज्यों तोड़ी ने आया,तत्क्षण विलखा थाई रे ।
तब में कूक करी अति गाढ़ी, कौन सुने महेल मांही रे ॥१२॥
शरण न आई माता केरी, दूजा से किम चूके रे ।
इण ने राख्या शोभा नहीं होवे, कुल मर्यादा मूके रे ॥१३॥
एहवी वातां हुई अणजुगती, मूंढो कैसे बताऊँ रे ।
पृथ्वी फटे तो सुणो हो साहब, मांही ऊतर जाऊँ रे ॥१४॥
तिण वेला सावधान न होती, तो होती मुझ ख्वारी रे ।
मरण भलो पर शील न खण्डू, एहवी दृढ़ता धारी रे ॥१५॥
इणरो तो महेलां मांही रेणो, यह माता फिर होसी रे ।
तो मुजने जीणो नहीं जुगतो, भलो मरण हित होसी रे ॥१६॥
भूपति वातां सुणी अति कोप्या, कीजे कौन उपायो रे । .
इण कुंवरा को अब कांई करसो,सो मुझ राह बताओ रे ॥१७॥
जो इच्छा हो वही करो साहब,टालो चाहे एह ने पालो रे ।
'खूब' मुनि कहै पुण्य कुंवर का, या हुई तीजी ढालो रे ॥१८॥

ढाल चौथी

(तर्जः—चेतन मोरा रे)

कोप करी ने आवियो रे, राज सभा में भूपाल, चेतन मोरा रे ।
चाकर पुरुष पठायने रे, तुरत बुलायो चण्डाल, चेतन मोरा रे ॥ १ ॥
पुण्य सहाय करे तेहनी रे ॥ टेक ॥
निरणो न कीधो नरपति रे, ना कुछ सोची वात चेतन मोरा रे ।
हुक्म दियो चण्डाल ने रे, छाई अन्धेरी रात चेतन मोरा रे ॥ २ ॥
अमरसेन वीरसेन ने रे, ले जाओ विपन मझार चेतन मोरा रे ।
मर्म पड़े नहीं तेहने रे, दया न आणो लगार चेतन मोरा रे ॥ ३ ॥
दोनों का शीष उतार ने रे, लाओ हमारे पास चेतन मोरा रे ।
देखूं नजर पसार ने रे, तब मुझ हो विश्वास चेतन मोरा रे ॥ ४ ॥
वात सुणी चण्डाल नी रे, थर थर कम्पी काय चेतन मोरा रे ।
निर्णय किया विन नरपति रे, कैसो करे अन्याय चेतन मोरा रे ॥ ५ ॥
भूपति आज्ञा जाण ने रे, कियो वचन प्रमाण चेतन मोरा रे ।
अमरसेन वीरसेन ने रे, तुरत लिया वाको ताण चेतन मोरा रे ॥ ६ ॥
कुंवर कहे कारण कहो रे, करो भाई तुम वात चेतन मोरा रे ।
कहां ले जाओ हम भणी रे, कैसे ग्रह्यो मुझ हाथ चेतन मोरा रे ॥ ७ ॥

श्वपच कहै कुंवार ने रे, नहीं छे मारो दोष चेतन मोरा रे।
हुए जाणे कारण किसो रे, राजा कियो है रोष चेतन मोरा रे॥ ८॥
संघाताए करता थका रे, ले गया वन के मांय चेतन मोरा रे।
कुंवर कहै मांरा तातजी रे,होये यह कैसा अन्याय चेतन मोरा रे॥ ६॥
कुंवर कहै चण्डालने रे,तुम बनो जीतव्य दातार चेतन मोरा रे।
हुकम बजावांगा थांयरो रे, भूलां नहीं उपकार चेतन मोरा रे॥ १०॥
आंसू पड़े तेहनी आंख थीरे, उपजी दया की रेस चेतन मोरा रे।
जीवता राखूं तुम भणी रे,जाना पड़े तुम्हें परदेश चेतन मोरा रे॥११॥
धीरज दीनी तेहने रे, मत करो सोच लगार चेतन मोरा रे।
बालूडां कहै कर जोड़ने रे,नया जन्मका तुम दातार चेतन मोरा रे॥१२॥
दिनकर ने रजनी पतिनारे,शपथ दिलाई स्वयमेव चेतन मोरा रे।
कोल वचन गाड़ो कियो रे, घर लायो तत्खेव चेतन मोरा रे॥१३॥
तिण वेलां माटी तणा रे, शीष बणाया दोय चेतन मोरा रे।
'खूब' कहे चौथी ढाल में रे, नृप ने पठाया सोय चेतन मोरा रे॥१४॥

ढाल पांचवीं

(तर्ज:—राजविया ने राज पियारो)

एक सरीखा मस्तक नीका, ऊपर रङ्ग लगायो रे।
रासड़ी पोई ने कर मांही लीना, श्वपच निशा में लायो रे॥ १॥
देखो करम गति दोनों कुंवर की॥ टेक॥
रात समय नृप बैठा झरोखे, दोनों मस्तक लाई रे।
चन्द्र प्रकाश में ऊभो रह कर, नजरे दीना दिखाई रे॥ २॥
मस्तक देखी नृप विशेखी, पूछे बात जबानी रे।
जाय कही सब पटराणी आगे, खुशी हुई महाराणी रे॥ ३॥
महेतर पाछो निज घर आयो, दोनों कुंवर के पास रे।
पहरनिशा रही दोनों ने काढ्या,दीनो अति विश्वास रे॥ ४॥
कम्पिलपुर थी दोनों चाल्या, वन खण्ड जोता जावे रे।
साथे और कोई नहीं दूजो, हिवड़ो भर भर आवे रे॥ ५॥
दोनों भाई आपणा मन में, करता जाय विचारो रे।
कहां जावां ने कौन पिछाणे, कोण करेगा सारो रे॥ ६॥
वीरसेन कहे अमरसेन ने, भाई तू मत रोवे रे।
कर्म कमाया भोग्यां छूटे, होनहार सो ही होवे रे॥ ७॥

हेतु जुगत कर गाद पधारो, चिन्ता न करणी भाई रे।
सुख न रह्या तो दुख किम रहसी, सोचो तुम मन माई रे ॥ ८ ॥
इम करता वन मांही जाता, आव्यो देवल भारी रे।
विश्रामो लेवण ने काजे, दोनो भ्रात विचारी रे ॥ ९ ॥
अम्बतले दोनों भाई बैठा, मनसबो एम विचारी रे।
बारी बारी को पहेरो देता, रात वितावां सारी रे ॥ १० ॥
वीरसेन जी पहेला सूता, अमरसेन जी जागे रे।
आप सूतो ने भाई जगायो, दूजो पहर जब लागे रे ॥ ११ ॥
वीरसेनजी पहरा देता, मन में एम विचारयो रे।
तातजी हुकम दियो मारण को, कीनो नहीं निरतारो रे ॥ १२ ॥
कौन गति होसे अब आगे, परदेशां के मांई रे।
अमरसेन की करे रखवाली, अरति तस मन मांई रे ॥ १३ ॥
तिण दरखत पर पक्षी बैठो, तम छायो अर्ध रेनी रे।
'लूब' मुनि कहे पचमी ढाले, इच्छा पूरण हो तेहनी रे ॥ १४ ॥

ढाल छठी

(तर्ज.—धन धन तपसीजी हो मुनिवर धर्मरुचि अणगार)

अम्ब [1]कोचर में सुवो सुवटी, हो के भवियण बोले पहवी बात।
परदेशी ये वापड़ा, होके भवियण रया विपिन में रात के ॥ १ ॥
सुख की सम्पत्ति होके भवियण सुवटे दीनी लाय।
इनके मन चिंता घणी, होके भवियण तेहनी कौन विचार।
सुवो कहे सुण एहना, होके भवियण दुख नो छेह न पार के ॥ २ ॥
तोती कहे अब एहनो होके भवियण दुख को दूर निवार।
पंखी को भव पाय के, होके भवियण सफल करो अवतार के ॥ ३ ॥
सुवो सुण उठ कर गयो, होके भवियण तिणहिज वन के मांय।
गुठली दो तरुवर तणी, होके भवियण लायो तरतण जाय के ॥ ४ ॥
सुवटे गुठली प्रेम से, होके भवियण दी वीरसेन ने आय।
एक एक गुठली दोनों जणा, होके, भवियण लीजो उर गट काय के ॥ ५ ॥
गुण है यह पहली तणो, होके भवियण, लहे दिन सात में राज।
प्रत्यक्ष गुण दूजी तणो, होके भवियण, सुधरे मन के काज के ॥६॥

---

[1] खोतर।

सूर्योदय मुंह धोवतां, होके भवियण, कुल्लो करे तिणवार।
जब देवें तब पांचसौ, होके भवियण, प्रगटे सुवर्ण दिनार के ॥७॥
गुठली ले सुवटा थकी, होके भवियण, राखी अपने पास।
तुरत जगायो भ्रात ने, होके भवियण, हुवो अति प्रकाश के ॥८॥
भाई ये गुठली भली, होके भवियण, सुवटे दी मुफ्त लाय।
प्रत्यक्ष गुण है यह थकी, होके भवियण, इण में संशय नाय के ॥९॥
एक एक गुठली निगलने, होके भवियण, मारग की सुध नाय।
अटवी गहन उजाड़ थी, होके भवियण, निकल्या बाहिर जाय के ॥१०॥
भ्रात कहे हुं थाकियो, होके भवियण, कीजे कौन उपाय।
विश्रामो लेवा भणी, होके भवियण बैठा मारग माय के ॥११॥
रवि आयो मध्य भाग में, होके भवियण, तृपा भूख अपार।
कोमल मुख कुमलावियो, होके भवियण, जोवे दृष्टि पसार के ॥१२॥
क्षेत्रपाल सुर तेहने, होके भवियण, लीना तुरत उठाय।
सिंगलपुर की सीमा में,होके भवियण,मेल्या गम कछु नाय के ॥१३॥
नगरी का तरु देखिया, होके भवियण, देखा तलाव विशाल।
'खूब' मुनि कहै पूर्ण हुई, होके भवियण, छट्ठी साल रसाल के ॥१४॥

ढाल सातवीं

(तर्जः—धन धन मेतारज मुनि)

अमर सेन वीरसेनजी, बैठा सरवर-पाल।
भाई भूख लागी घणी, करिये भोजन थाल ॥१॥
भाई थे भक्ति करो ॥
वीरसेन मुख धोवता, कीधो कुल्लो तिवार।
ढेर पड्यो मुख आगले, गीणी पाँचसौ दिनार ॥२॥
प्रत्यक्ष परिचय देखियो, सुण सुण बंधव आज।
आज. थकी, फिर. आप. यें., निश्चय सिरसीजी. राज. ॥३॥
जल्दी जावो शहर में, लावो भोजन पाक।
पेठा पकौड़ी पूड़ियां, चोखी ताजीजी शाक ॥४॥
चौकस कर कर शहर में, लावो ताजाजी माल।
बिन मौके विलमो मती, आवो फिर तत्काल ॥५॥
वीरसेन इम सांभली, लीनी हाथ में दाम।
जाल्यो आप सिताप सुं, भाई रयो तिण ठाम ॥६॥

नगरी माँहि पेसता, मिली एक वेश्या नार।
परदेशी नर देखने, किनो मन में विचार ॥७॥
इण ने लेजाऊं निज घरे, विलसुं सुख अपार।
विनती कर धीरसेण ने, मोह लियो तत्कार ॥८॥
यह मन्दिर यह मालिया, तुम छो मुझ भरतार।
शरम न राखो साहिबा, मैं हूँ तुम घर नार ॥९॥
महेर करो मुझ ऊपरे, मानो दासी की अरदास।
घर मंडन शोभा घरणी, रखलो दृढ़ विश्वास ॥१०॥
पीगल्यो मन धीरसेणनो, लेइ चाली आवास।
गठड़ी देखी पास में, बोली ऐसे विमास ॥११॥
कपट करी मंदोरां सहु, लीनी अपने पास।
अपनो घन बधावियो, उपजाव्यो विश्वास ॥१२॥
कुरलो करता पांचसो, प्रगटे पूंज दिनार।
वेश्या ने सौंपे सहु, मांगे जब दरबार ॥१३॥
वेश्या विचारे नर भलो, कल्प वृक्ष समान।
'खूब' कहे ढाल सातमी, पावे बहु सन्मान ॥१४॥

ढाल आठवीं

(तर्जः—रे जीवा जिन धर्म कीजिये)

अमरसेन तीर ऊपरे, बैठो करत विचार।
भाई किम आयो नहीं, क्यों लागी अवार ॥१॥
मोह बड़ो रे संसार में ॥टेर॥
के तो मारग भूलियो, के कोई उपनो काम।
के कोई संधी मिल गयो, के कोई खोयो दाम ॥२॥
सिंगलपुर इण शहर में, कांई देखतो होय।
कहाँ मिले मैं ढूंढूं, कहां, चहुं दिशि रयो छे जोय ॥३॥
मात पिता वैरी हुवा, रचा की थी चंडाल।
आज भाई वैरी हुओ, अब होसी कांई हाल ॥४॥
छाती भर भर रोवतो, आंसु बहे परनाल।
आरति मन में अति घणी, फिरे सरवर पाल ॥५॥

---

१ परिचित।

इम करतां संझा पड़ी, ओई बाट अथाग।
रात गई तब केतली, आयो नृप के बाग ॥६॥
समन कियो तिण बाग में, सूर्य आयो ले भाल।
उठ कर शीघ्र सिधाविये, आयो सरवर पाल ॥७॥
फल खाई दिन काढिया, बीत्या इम दिन सात।
राज मीले इण अवसरे, सुणजो अजरज बात ॥८॥
सिंगलपुर को नरपति, राज भोगवे सार।
कर्म योगे गाढी वेदना, व्यापी अंग मझार ॥९॥
वेदना दूर निवारवा, आव्या वेद्य अनूप।
कोई दवा लागी नहीं मृत्यु पायो भूप ॥१०॥
भूप बेटे भेला हुवा, किण ने दीजिये राज।
सब ही चहावे संपति, मीके कहो किम काज ॥११॥
सब ही मिल मतो कियो, मतगज मज तत्काल।
कुम्भ कलश मस्तक ठव्यो, सूंड मही पुष्प माल ॥१२॥
वाजित्र बहु बाजता, लोक हुआ बहु लार।
सिंगलपुर में होता थका, आया बाग मझार ॥१३॥
गज आयो अति मलपतो, सूतो कुंवर ते ठाम।
सूंड करीने जगावियो, देखे खलक तमाम ॥१४॥
कुंवर जागी लागो भागवा, लोकां महो तत्काल।
राज देवां में तुम भणी, गला में डाली पुष्पमाल ॥१५॥
महोत्सव कर मंडाण थी, दीनो कुंवर ने राज।
'खूब' कहे ढाल आठमीं, सीधा वंछित काज ॥१६॥

ढाल नौवीं

(तर्जः—हरषी हरषी हरषो प्रभुजी का दर्शन मिलसी जी)

अमरसेन तो राज भोगवे, वीरसेन मोहो रागी।
दोनों भाई एक शहर में, चिंता गई सहु भागी ॥ १ ॥
गणिका अर्ज करे छे एम, मोसु प्रयञ्च राखो केम।
वेश्या एक दिन वीरसेन ने, बोले अमृत वाणी ॥
परमेश्वर मुझ महेर करी सो, मिलिया उत्तम प्राणी ॥ २ ॥
साहिब मुझ ने सांच कहो तो, बात पूछूं एक थाने।
जब मांगू तब महोर पांचसो, किहां थकी तुम आने ॥ ३ ॥

बात न दूजी थांके मांके, गुपत पणो किम राखो ।
सुणवा की अभिलासा मुजने,जिम होवे तिम भाखो ॥ ४ ॥
वीरसेन तो भोलो ढालो, भेद कछु नहीं पायो ।
इणने तो जिमही तिम कहेग्यो सुख पायो चित चायो ॥ ५ ॥
वीरसेन वेश्या से बोले, कहूँ बात सब थाने ।
वन में एक पक्षी कृपा कर, गुठली दीनी म्हाने ॥ ६ ॥
तिण गुठली पर भाव करीने, मुख से महोरां पड़ती ।
जब लग गुठली रहे पेट में, तब लग बाजी चढती ॥ ७ ॥
गणिका बोली सुण हो प्रीतम,बात कही मुज सारी ।
इ बातां मत कहीजो किण ने, कपट भरी छे नारी ॥ ८ ॥
वेश्या मन में एम विचारे, यह गुठली मुझे लेणी ।
आस सहू मन वंछीत पूरी, मीख अणी ने देणी ॥ ९ ॥
दुष्ट भाव वेश्या मन आण्यो, वीरसेन सूं बोली ।
स्वान पीठ को प्यालो भरने, पायो शक्कर घोली ॥१०॥
वीरसेन ने वमन हुवो तब, गुठली निकली बार ।
तत्क्षण गुठली लीनी वेश्या, ते कहो केम निहारे ॥११॥
वेश्या बोली सुण हो साहिबा, फिकर लग्यो अब मुज ने ।
कौन दुष्ट की नजर लगी सो, वमन हुवो छे तुमने ॥१२॥
चूरण गोली अजमो लाकर, दियो खूब संतोषी ।
मनको भर्म मिट्यो नहीं सायत,करामात और होसी ॥१४॥
अहो निश राखया मालुम पड़से, हिवड़ा मीख न दीजे ।
'खूब' मुनि कहे नवमीं ढाले, यत्न पहना कीजे ॥१४॥

ढाल दसवीं

(तर्ज:—जिनन्द माय दीठा श्री स्वप्ना सार)

दिन उगा मुख धोवता जी, प्रगटी नहीं दिनार ।
आज जरूरत है घणी जी, बोली वेश्या नार ॥ १ ॥
चतुर नर वेश्या को, संग निवार ॥ टेक ॥
कुंवर कहे अब कांई करूंजी,गुठली नहीं उर मांय ।
छेय न दीजे मुज भणीजी,सरण पड्यो तुज आय ॥ २ ॥
वेश्या टटकीने इम कहेजी, नहीं हमारे काम ।
मांगू तब आपो सदा तो, बैठा रहो इण ठाम ॥ ३ ॥

दया न आणी दुष्टणीजी, दीनो बाहर निकाल।
आंसु झरे जिम बादलीजी, आयो सरवर पाल ॥४॥
रे चंचल तूं किहां गयो रे, कांई होसी मुझ सूल।
बेरया मोह्यो मुझ भणीजी, तुझने गयो मैं भूल ॥५॥
इम चिंता करता थकाजी, गई है आधी रात।
मन धारणा फिर किम हुवेजी,सुणजो भविषण बात ॥६॥
च्यार चोर तिण समयजी, लाया चोरी माल।
बेचन काजे आवियाजी, तिण सरवर नी पाल ॥७॥
कंथा लुटकने पावड्यांजी, मिल कर खोली गाँठ।
चार वस्तु जो होवतीजी, एक एक लेता बांट ॥८॥
कलह करे चारों झणांजी, शब्द पड्या तस कान।
वीरसेन झट ऊठनेजी, शामिल होगया आन ॥९॥
कलह निवारण थावरोजी, भाख्यो छूं तत्खेव।
कैसी वस्तु है तुम कनेजी, समझाऊं स्वयमेव ॥१०॥
कंथा[1] लकुट[2] ने पावड्यांजी,[3] तीन्हों ही चीज अमोल।
दीनी सुर ऋषिराजनेजी, लाया झोरी खोल ॥११॥
तस्कर पूछे तू कौन छे जी, साँच कहो मुझ बात।
परदेशी हूं मानवीजी, निर्धन दीन अनाथ ॥१२॥
क्या गुण है वस्तु माँहीजी,तस्कर कहे कर गरूर।
कंथा थकी महोरा झरेजी, लकुट थी अरिजन दूर ॥१३॥
पावडियां पग पहेरनेजी, जाय गगन तत्काल।
'लूण' कहे लक्ष्मी मिलेजी, यह हुई दशमी ढाल ॥१४॥

ढाल इग्यारवीं

(तर्ज:—हुं रे अनाथी निर्ग्रंथ)

वीरसेन इम विनवे रे, चतुराई से चूंप।
भेष करूं तुम निरख थारे, कैसो खुले मुझ रूप ॥१॥
चतुर नर पायो वस्तु अमोल ॥
चोर कहे सुन मानवी रे, मन में राखे केम।
वस्तु दीनी तेहने रे, नहीं जाययो कछु पहेम ॥२॥

१ गुदडी। २ लकुट-लकड़ी। ३ क

कंथा ओढ़ी अंग पै रे, घोटो लीनो हाथ।
पावड़ियां पग पहेरने रे, उड़ियो गगन में तात ॥३॥
चोर मन में चिंतवे रे, खोई वस्तु अमोल।
माग बिना ठहरे नहीं रे, ले गयो शिर पंपोल ॥४॥
वीरसेन नीचे उतरयो रे, चोर गया निज ठाम।
आयो सिंगलपुर शहर में रे,जहां वेश्या को मुकाम ॥५॥
वेश्या देखी चिंतवे रे, कांइक ईं इण वीर।
पास आय ने विनवे रे, फलियो मुझ तकदीर ॥६॥
कहां गया तुम साहिबा रे, मैं देखी तुम वाट।
मन्दिर सूनो तुम बिना रे, भोगवो पुण्य का ठाट ॥७॥
वीरसेन मन चिंतवे रे, या कपटण है नार।
नीची नजर लगायने रे, बोल्यो नहीं लगार ॥८॥
भर्म तुम्हारे मन में जो है, सो दाखुं सुण पीव।
मदिरा पीधी तेहथी रे, छकियो नशा में जीव ॥९॥
मुझ ने तो कछु गम नहीं रे, जो कोई आणो दोष।
माफ करो सब मुझ भणी रे,मत आणो मन रीस ॥१०॥
वीरसेन मन चिन्तवे, सांची बात को सार।
वेश्या कहे सो सत्य है, दोष न इणरो लगार ॥११॥
तत्क्षण उठने चालियो रे, हुवो चित वेश्या में लीन।
पंचेन्द्रिय सुख भोगवे रे, ज्यों वारि में मीन ॥१२॥
महोरां मांगे वेश्या जद, यहला देवे तत्खेव।
गणिका पूछे बालिमा रे, कहां से आणो स्वयमेव ॥१३॥
पावड़िया पग पहेरने रे, उड़ जाऊं असमान।
'खूब' कहे ढाल ग्यारमी रे, सौंपूं तुझ ने ध्यान ॥१४॥

ढाल बारहवीं

(तर्ज:—चन्देरी पति सूं कहे)

एक दिन गणिका इम कहे, सुण हो प्रीतम बात पियड़ा।
आप गया मुझ छोड़ ने, तिण रो सुण अवदात पियड़ा ॥ १
वेग चालो करो मानता ॥टेक॥
समुद्र में देवी पूरणा, जिनको बड़ो प्रभाव पियड़ा।
बहु जन आवे जातरी, केइ रङ्क केई राव पियड़ा ॥ २

मैं भी कीनी मानता, जो मुझ मिल आवे कन्त पिउड़ा।
तो इन दोनों आय ने, करांला पूजा हरषंत पिउड़ा ॥ ३ ॥
प्रत्यक्ष परिचय देहली, इन कारण मैं आय पिउड़ा।
शीघ्र यहां से चालिये, पावड़ियां प्रताप पिउड़ा ॥ ४ ॥
वीरसेन इम बोलियो, इण कामे नहीं देर पिउड़ा।
दिन ऊगा चालो सही, थनी रहे सब सैर पिउड़ा ॥ ५ ॥
वीरसेन वेश्या दोनों, चालिया समुद्र मांय पिउड़ा।
पूरण देवी के मन्दिर में, उतरे दोनों आय पिउड़ा ॥ ६ ॥
वेश्या कहे सुनो बालमा, निमल मन वच काय पिउड़ा।
इन देवी ने पूज लो, जिया मेटे नाथ पिउड़ा ॥ ७ ॥
वीरसेन खोल पावड़ी, गयो मन्दिर के मांय पिउड़ा।
पूरणा देवी के सामने, नमो शीष नमाय पिउड़ा ॥ ८ ॥
सविधि पूजा करी देहनी, धूप दयो है खेव पिउड़ा।
हाथ जोड़ ने इम कहे, तू देवी स्वयमेव पिउड़ा ॥ ९ ॥
शीष नमायो तिण समय, वेश्या देख्यो रङ्ग पिउड़ा।
पहेर पावड़ियां पांव में, पर आई समुद्र उलंग पिउड़ा ॥ १० ॥
पूजा कर देवी तणी, चरणे शीश नमाय पिउड़ा।
वीरसेण आयो बारणे, वेश्या ने देखे नाय पिउड़ा ॥ ११ ॥
पावड़ियाँ भी दीसे नहीं, कदाचित कीनी [1]रोल पिउड़ा।
हेलो पुकारे वेह नें, कहाँ गया तुम बोल पिउड़ा ॥ १२ ॥
ढूंढी पण पाई नहीं, कुंवर हुवो दिलगीर पिउड़ा।
रे दुष्टन यह काई कियो, नेणा छूटो नीर पिउड़ा ॥ १३ ॥
इतने विद्याधर एक आवियो, आयसे पूरण प्रेम पिउड़ा।
ढाल हुई यह द्वादसमी, 'खूब' मुनि कहे ऐम पिउड़ा ॥ १४ ॥

ढाल तेरहवीं

(तर्जः—भाव धरी जिन वन्दिए)

विद्याधर विमान में, बैठा है सुखदाई रे।
ऊपर होकर निकल्यो, जातो महाविदेह मांई रे ॥ १ ॥
श्री मन्दिर स्वामी वन्दिए ॥टेक॥

---

१ हंसी।

कुंवर का कष्ट प्रभाव से, विमाण थम्यो गगन मे रे।
तत्क्षण नीचे उतरयो, प्रभुजी बसे तेहना मन में रे ॥ २ ॥
कुंवर से मिलिने आय ने, पूछया सहु समाचारो रे।
वीरसेन सब दाखियो, कर्म को दोष हमारो रे।
दुःख से काढो स्वामीजी, कर मुझ पर उपकारो रे।
गुण नहीं भूलूं थाहरो, नया जन्म दातारो रे।
विद्याधर इम बोलियो, विदेह क्षेत्र में जासुं रे।
मन में धीरज धारजे, पन्द्रह दिन में आशुं रे।
वीरसेन इम वीनवे, बात कहो मुझ सागे रे।
जावो हो दर्शन कारणे, इतना दिन किम लागे रे।
श्री मन्दिर स्वामी पास मे, यशोधर नृप नन्दो रे।
सहस्र पुरुष संग आदरे, संयम भार उमंगो रे।
जो मन होवे थाहरो, चाल हमारे संग रे।
जिनवाणी प्रभु दर्शन से, होवे, पवित्र अंग रे।
कुंवर कहे आऊं नहीं, जोऊंगा वाट तुम्हारी रे।
आय के वेग संभालजो, मत ना जाओ विसारी रे।
विद्याधर यों कह गयो, इन तरु नीचे मत जाजो रे।
उन तरु का फल खावजो, आर्त ध्यान मिटाजो रे
शीघ्र विद्याधर आइयो, महा विदेह क्षेत्र के मांई रे।
जिनवर को कर वन्दना, बैठा परिषद में जाई रे
पन्द्रह दिन महोत्सव देखने, विद्याधर पाछो चलियो रे।
तिण दिन द्वीप में आयके, वीरसेन कुंवर से मिलियो रे
दिन दस लों मेला रया, जावण की हुई त्यारी रे।
इतने वीरसेन पूछियो, देवो इस तरु की संका निवारी रे
इणने सूंघ्यां खर हुवे, मैं बरजा इण काजा रे।
इण तरुना फल सूंघता, पीछो नर होवे ताजा रे
दोनों ही फूल ले साथ मे, तुरत विमान चलायो रे।
'सूय' कहे ढाल तेरमी, कुंवर सिंगलपुर आयो रे

ढाल चौदहवीं

(तर्ज:—हरषी हरषी हरषी रे प्रभुजी का दर्शन निरखी र

विद्याधर तो बाग में मेली, पाछो तुरत सिधायो
वीरसेन तत्क्षण उठी ने, सिंगलपुर में आयो ॥ १ ॥

वेश्या अर्ज करे है ऐम, मांसु मौन करी छे केम ॥टेक॥
एक वणिक की हाटे बैठो, [1]चऊ दिश कानी नाहरे।
इतने काम तणे प्रयोगे, वेश्या निकली बाहरे ॥२॥
वेश्या देखी मन विचारे, यहां कैसे यह आया।
मैं तो छोड़ आई समुद्र में, है यह आश्चर्य सवाया ॥३॥
इसके पास कोई जड़ी हुवेगा, जाय करूं नरमाई।
वीरसेन के सन्मुख आकर, ऊभी शीष नमाई ॥४॥
पिऊजी मांसू मुखड़े बोलो, कैसे बने हो रोसी।
मैं तो निश दिन याद करती, तो भी समझो मुजको दोसी ॥५॥
अन्न पाणी अंगे नहीं लागो, चित म्हारो तुम माई।
फूल समान या कोमल काया, तुम बिन रही कुम्हलाई ॥६॥
घूंघट काढ कुंवर मुख आगल, नेणा आंसू नाखे।
सांची बात अब कह दो साहिब, मन में भर्म काई थांके ॥७॥
सायब थे इम जाणता [2]होलां, पावडिया ले आई।
मस्तक उपर राम विराजे, करूं केम कपटाई ॥८॥
आप गया देवी पूजन को, मैं ऊभी थी एक किनारे।
इतने एक विद्याधर आयो, पावड़ियां पर दृष्टि डारे ॥९॥
मैं जाणयो शायद ले जासी, कीनी कर सु आगां।
तदपि कपटी ने यह भागो, मैं तस केड़े लागी ॥१०॥
शीघ्र चाल समुदर में उड़ीयो, मैं पण हिम्मत राखी।
सिंगलपुर ऊपर होई जाता, पापी मुजने नाखी ॥११॥
तुम बिन मंदिर सूना लागे, जिम बिन दीवे बाती।
पंखी जिम पांखा होती तो, तुरत उडीने आती ॥१२॥
इण कारण ये सांची साहिब, झूठ रती मत जाणो।
इण बाता में झूठ होवे तो, सोगन मुझ ने खाणो ॥१३॥
उठो चालो महेल आपणे, वीरसेण तब हरख्यो।
'खूब' मुनि कहे ढाल चवदमीं, वेश्या भर में राख्यो ॥१४

ढाल पन्दरवीं

(तर्ज.—चन्देरी पति सुं कहे)

दिन कितना एक निकल्या, एक दिन वेश्या नार, भवियण।
देखी वस्त्र की गांठड़ी, कीनो मनहिं विचार, भवियण ॥१॥
पिऊजी प्रीत निभाइये॥

१ चारों दिशाओं में-इधर उधर निहारता है। २ होंगे।

वीरसेन को पूछियो, साहिब चतुर सुजान, भवियण।
मैं प्रछन्न राखूं नहीं, आप कपट की खान, भवियण ॥२॥
गांठ बंधी छे वस्त्र की, मुझको बताई नाय, भवियण।
कांई वस्तु है इण गांठ, सांच कहो मुझ वाय, भवियण ॥३॥
वनिता उतावल मत करो,लायो छुं तुम काज,भवियण।
इतना दिन भूली गयो, पीछे बताऊं आज, भवियण ॥४॥
फूल बतायो खर तणो, वेश्या प्रसन्न भई देख, भवियण।
क्या गुण है इस पुष्प में,मुझ ने बताओ विशेष, भवियण ॥५॥
वीरसेन इम बोलियो,इण में बहु गुण दर्शाय, भवियण।
जरा कभी आवे नहीं, नित्य यौवन वय रहाय, भवियण ॥६॥
इण ने सूंघूं साहवा, भली करी मुझ महेर, भवियण।
सूंघो एकांत जायने, मती लगाजो देर, भवियण ॥७॥
वेश्या सूंघ्यो फूल ने, खरी बनी तत्काल, भवियण।
लेकर घोटो हाथ में, कुंवर आयो तिहां चाल, भवियण ॥८॥
दे दे मार काढी बाहरणे,लायो खास बजार, भवियण।
कौतूहल देखन कारणे, भेला हुवा नर नार, भवियण ॥९॥
निर्दय यह कुण मानवी, कूटे छे इण ठोड़, भवियण।
दूजी वेश्या मिल दरबार में,अर्ज करी कर जोड़,भवियण ॥१०॥
परदेशी कोई मानवी, कीनो जबर अन्याय, भवियण।
मुझ मालिका हुई रासभी, घौड़े कूट्या जाय, भवियण ॥११॥
भूप कहे कोतवाल ने, कौन पुरुष यहो आज, भवियण।
राज सभा में लावजो, दुष्ट करे छे अकाज, भवियण ॥१२॥
कोतवाल चल आवियो, लोक करे बहु सोर, भवियण।
घोटा थी दूर खड़ो रयो, काई न चल्यो जोर, भवियण ॥१३॥
कोतवाल पाछो गयो, कह्यो भूप ने जाय, भवियण।
ढाल पन्नरमीं यह हुई 'खूब' कहे, दर्शाय भवियण ॥१४॥

ढाल सोलहवीं

(तर्जः—चन्देरी पति सुं कहे)

अमरसेन नृप इम कहे, तूं नाम को हुवो कोतवाल, भवियण।
तिण ने जाय पकड़यो नहीं,मैं लाऊं जंजीर डाल, भवियण ॥१॥
विछड़िया म्हांला मिल्या ॥

भूप उठी चलियो सही, आयो मध्य बाजार, भवियण ।
रोप धरीने आकरो, साथे बहु नर नार, भवियण ॥२॥
दूर से देखा नैन से, सुभ बंधव वीरसेन, भवियण ।
वीरसेन भी ओळख्यो, चित में पायो चैन, भवियण ॥३॥
तत्क्षण छोड़ी रासभी, मिल्यो बांह पसार, भवियण ।
हर्ष न मावे अंग में, देख रया नर नार, भवियण ॥४॥
यो कांई लागे भूप के, दुनिया करे बहु बात, भवियण ।
तुरत मंगाई पालखी, बैठा दोनों भ्रात, भवियण ॥५॥
छत्र चंवर होता हुवा, फहराता ऊंचा निशाण, भवियण ।
घर घर हर्ष बधावणां, जाचक पाता दान भवियण ॥६॥
नजराणे आगे बहू, ठौर ठौर अतर पान भवियण ।
आज भलो दिन उगियो, भाई मिलियो आन भवियण ॥७॥
इतने वेश्या सब मिली, अर्ज करी कर जोड़ भवियण ।
कृपा कर मुझ नाथजी, करो मनुष्यणी इण ठोड़ भवियण ॥८॥
अमरसेन की कहेन से, सुंघायो दूजो फूल भवियण ।
रासभी मिट वेश्या बनी, तब करी मंजूर सब भूल भवियण ॥९॥
पावड़ियाँ गुठली दोनों, तुरत मंगाई भूप भवियण ।
जीवन प्यारो जगत में, वेश्या दीनी सौंप भवियण ॥१०॥
पुर में पसरी वारता, पूरे, मन के कोड़ भवियण ।
सुख सम्पति अति विलसे, दोनों भाई की जोड़ भवियण ॥११॥
अमरसेन नृप एकदा, भाई से करियो विचार भवियण ।
माता पिता ने बुलावणा, उनका है उपकार भवियण ॥१२॥
पत्र लिख्यो कर ओपमा, जयसेन राजा का पूत भवियण ।
पत्र देकर भेजियो, तुरत सिधायो दूत भवियण ॥१३॥
कंपिलपुर आयो चली, पत्र दियो नृप हाथ भवियण ।
'खूब' कहे ढाल सोलवीं, हर्ष थयो नृप गात भवियण ॥१४॥

ढाल सत्तरहवीं

(तर्जः—त्रिशला माय दीठा हो सुपना सार)

दी बधाई दूत ने जी, विदा किया महिपाल ।
पत्रमा रे लिख दियोजी, आवां सिंगलपुर चाल ॥ १ ॥
चतुर नर सफल हुवा

दूत आयो सिंगापुरी जी, पत्र दियो नृप हाथ।
समाचार जो पिता लिख्याजी, बांच्या पृथ्वीनाथ ॥ २ ॥
शुभ मुहूर्त्त देख्यो खरोजी, जयसेन नामे राय।
चतुरंगी सेन्या सजी जी, मारग जोता जाय ॥ ३ ॥

दिन लाग्या बहु चालता जी, आया सिंगापुर सीम।
पुत्र दोनों सन्मुख आविया जी, ध्यासो सरवर जीम ॥ ४ ॥
माता पिता से आई मिल्याजी, चरण नमायो शीश।
आज भलो दिन उगियोजी, पूरी मन की जगीश ॥ ५ ॥

दोनुं पुत्र माता पिताजी, वारण हो असवार।
छत्र चंवर होता हुआजी, होता मध्य बजार ॥ ६ ॥
राज भवन आईयाजी मात पिता पुत्र दोय।
पंचेन्द्रिय सुख भोगवेजी, मिली पुन्य की सोय ॥ ७ ॥

एक दिन भूपति इम कहेजी, दोनो पुत्र ने बात।
लाल दोष नहीं माहरोजी, कर्म कमाया तुम मात ॥ ८ ॥
पुत्र कहे यों तात से जी, भलो दियो मुझ साज।
जो कारण मिलतो नहींजी, कैसे पातो राज ॥ ९ ॥

मात पिता चंडाल का जी, भलो हुवो पृथ्वीनाथ।
भलो हुयो पद्मीनणी जी, गुठली दी मध्य रात ॥ १० ॥
समोसरया तिण अवसरेजी, सुमति सागर अणगार।
वंदना कारण निकल्याजी, राजादिक नर नार ॥ ११ ॥

मुनिवर दीनी देशनाजी, सब जीवां सुखदाय।
वाणी सुण परिषदा गईजी, आर्ल कर दोनों भाय ॥ १२ ॥
कर जोड़ी इम वीनवेजी, सुनो हो गरीब निवाज।
संयम लेवा तुम कनेजी, पूछ मात पिता ने आज ॥ १३ ॥

मुनिवर कहे जिम सुख होवेजी, करिये नहीं परमाद।
आज्ञा ले पितु मात की जी, हुवे दोनों भाई साथ ॥ १४ ॥
मुनि धरम शुद्ध पालने, तपस्या करी भरपूर।
केवल पाया निर्मलीजी, घन घातिक कर्म किया दूर ॥ १५ ॥
महि मण्डल में विचरतेजी, घणो कियो उपकार।
मास संथारो कर मुनिवरोजी, पहुँचा मोक्ष मुकार ॥ १६ ॥

१ हाथी।

उगणीसे पचास के जी, ऊपर छः के साल।
मालव देश मन्दसोर में जी, चौमासो सुखे गाल ॥ १७ ॥
मुनि नन्दलालजी दीपताजी, गुरुजी महा गुणवन्त।
हुक्म दियो तब शहर में जी, सुखे रया तीन संत ॥ १८ ॥
'खूब' कहे तुम सांभलोजी, ये हुई सतरा ढाल।
सुणे सुणावे प्रेमसे जी, वरते मंगल माल ॥ १९ ॥

[६८]

मनुष्य जन्म की दुर्लभता पर दस दृष्टान्त

(तर्ज:—धरयक मुनिवर चाल्या गोचरी)

दस दृष्टांते रे नर भव [1]दोहिलो, ऐसो जिन फरमायो रे।
दस दृष्टांते रे नर भव दोहिलो ॥
कम्पिलपुर में रे ब्रह्म नरेश नो, चूलणी को अंग जातो रे।
बारमो चक्री रे राज करे तिहां, ब्रह्मदत्त नाम विख्यातो रे ॥१॥
पिता तेहना रे मुओ उस समें, ब्रह्मदत्त छोटो सो बालो रे।
चारी थापी ने चार महिपति, करता राज संभालो रे ॥२॥
चूलणी राची रे दग नरेश से, पुत्र लख रोष भरायो रे।
काक मराली रे उनके पास में, वे नृप को समझायो रे ॥३॥
जाणी जननी ने सुत चाह्यो मारवा, काष्ठ को महल बनायो रे।
कपट करी ने सुत वधु दोनों को, महल में सयन करायो रे ॥४॥
निर्दय होई ने आधि रात में, अगन पलीतो लगायो रे।
पहिले मन्त्रीश्वर सुरंग बनावियो, तिण में हो कुंवर सिधायो रे ॥५॥
मंत्री अपनो रे सुत साथे दियो, अश्व पे आरूढ होई रे।
कुंवर सिधायो रे दूर देशान्तरे, मिल जुल रेहवे दोई रे ॥६॥
फिरता वन में रे कष्ट उठावता, एक दिन प्यास सतायो रे।
व्याकुल देखी ने कोइक विप्र ने, शीतल नीर पिलायो रे ॥७॥
जब मैं होउं कम्पिलपुर पति, तू आजे मुझ पासो रे।
जो मुख मांगेगा सो तुझे देव सुं, दीनो वचन हुलासो रे ॥८॥

[1] दुर्लभ।

चक्री हुओ रे कुंवर कालान्तरे, कम्पिलपुर नो पद नामो रे।
स्वर्ग सरीखो रे भोगे साहिबी, दस दिश हुओ विख्यातो रे॥ ६ ॥
वचन दियो थो रे वन में विप्र ने, मुसीबत वक्त के मायो रे।
आश धरी ने रे नरपति पास में, विप्र तुरन्त चल आयो रे॥१०॥
महिपति तूठो रे सब तिण मांगियो, और न मुझ दरकारो रे।
तुम घर सेती रे जीमुं घर घरे, एक एक भेट दीनारो रे॥११॥
हुकम हुआ से रे जीमे घर घरे, ब्राह्मण मन में विमासे रे।
फिर कब जीमु रे चक्रवरत घरे, एहवो दिन कब आसे रे॥१२॥
सायत लेतो रे भोजन मिल सके, संशय नहीं लिगारो रे।
मनुष्य जमारो रे हारयो नहीं मिले, काल अनन्त मझारो रे॥१३॥

[२]

चाणक मन्त्री रे थो एक भूप के, भर सोनैया को थालो रे।
एक एक सोनैयो मेले हाथ पै, फिर यह पासो डालो रे॥१४॥
तीनों बेला रे मानव सांभलो, वही जो आवेलो अंको रे।
यह सब मोहरे मैं दूंगा तुम भणी, राजा हो चाहे रङ्को रे॥१५॥
जो नर आवे सो लावे हारने, कठियारो एक आयो रे।
दाव लगायो रे पिण हारियो, मन में बहु पछतायो रे॥१६॥
सायत लेतो रे मोहरे वह मिल सके, संशय नहीं लिगारो रे।
मनुष्य जमारो हारयो नहीं मिले, काल अनन्त मझारो रे॥१७॥

[३]

देवता कोई रे जम्बूद्वीप नो, जौ आदिक सब धानो रे।
भलो करने रे सब हिल मिल करे, ढेर करी एक स्थानो रे॥१८॥
बुढिया मेली रे अस्सी वर्ष नी, करदे सूप सुजानो रे।
इण भव मांही रे कहो किम कर सके, प्रथक २ सब धानो रे॥१९॥
सायत लेतो रे भिन्न २ कर सके, संशय नहीं लिगारो रे।
मनुष्य जमारो रे हारयो नहीं मिले, काल अनन्त मझारो रे॥२०॥

[४]

कोई नृप के रे सुत अरि हो रहे, रायनो चाय ले धातो रे।
महिपत जाणी रे सुत सहु तेड़िया, राय कहै इम वातो रे॥२१॥
राज सभा में हैं खंभे इतने, इक सत ने वली आठो रे।
खंभे २ रे धारा जाणजो, अड़तालीस और साठो रे॥२२॥
यह लो पासा रे बेटा हाथ में, जिण नो आवेला दावो रे।
नृप पद देऊंगा मैं खुद छेहने, निज निज होश बतावो रे॥२३॥

फिर फिर आवे रे तेहीज आंकड़ो, एक मय आठ वारो रे।
थंभे थंभे रे इम हीज जाणजो, यह है कौल करारो रे ॥२४॥
सायत लेतो रे डाव मोलि सके, संशय नहीं लिगारो रे।
मनुष्य जमारो रे हारयो नहीं मिले, काल अनन्त मझारो रे ॥२५॥

[५]

एक वणिक के रे मेंहगा मोलना, रतन घणा घर माही रे।
दाब जमी में रे तिण ने ऊपर, सोवे पलंग बिछाई रे ॥२६॥
भेद न देवे रे कोई पुत्र ने, अविश्वास है पूरो रे।
सब जन बोले रे बिन व्योपार के, मनुष्य जनम तुम धूरो रे ॥२७॥
कागज आयो रे गांव सगा तणो, चलियो साज सजाई रे।
जाय भरोसो रे छोटा पुत्र ने, दीना रतन बताई रे ॥२८॥
सुत घर आई ने सब ही भ्रात ने, भेद बताई दीयो रे।
खोद जमी को रे रतन निकालिया, काम हुओ सहु लीधो रे ॥२९॥
मारग चलतो रे तिण हीज शहर में, आयो जहि वणजारो रे।
रतन देई ने रे माल खरीदियो, कीनो हाट पसारो रे ॥३०॥
तात पीछो घर आयो गांव से, रतन तिहां नहीं पावे रे।
सुत ने पूछयो रे भेद सहु कह्यो, खण खण ते पछतावे रे ॥३१॥
सायत लेतो रे रतन मिली सके, संशय नहीं लिगारो रे।
मनुष्य जमारो रे हारयो नहीं मिले, काल अनन्त मझारो रे ॥३२॥

[६]

पाटलीपुर नो रे राजा जित शत्रु, तिण नो एक कुमारो रे।
नित्य द्रव्य हारे रे जुआ खेल में, लोपी निज कुल कारो रे ॥३३॥
भूपति सुत ने रे पास बुलाय ने, समझावे बहु भांती रे।
कोमल करड़ा रे वचन कई कह्या, नहीं मानी एक वातो रे ॥३४॥
कोपित नृप होय सुत ने काढियो, रोवत तुरन्त सिधायो रे।
भूखे मरतो कष्ट उठावतो, नगर वेनातट आयो रे ॥३५॥
बैठा सोचे रे देवल स्थान में, पूरब बात चितारो रे।
वणीमग सूतो रे उनके पास में, दोनों निद्रा मझारो रे ॥३६॥
सुपनो देख्यो रे मिश्रित नींद में, निर्मल पूनम चन्दो रे।
तत्क्षण जागिया दोनों साथ में, पावे अति आनन्दो रे ॥३७॥
वणीमग बैठो रे निज मन सेती, स्वप्न अरथ इम कीधो रे।
रोटी मिलसी रे घी में गचागची, वैसे ही फल लीधो रे ॥३८॥

कुमर सिधायो रे पण्डित ने घर, पूछयो शीश नमाई रे।
पुन्यवन्त जाणी ने ज्योतिषी ध्यान में, निज पुत्री परणाई रे ॥३६॥
लाग जंवाई रे हुओ तदु पीछे, कह्यो अरथ हुलासो रे।
सात दिवस में रे तुम इण नगर नो, निश्चे ही भूपति थासो रे ॥४०॥
भूप अपुत्रियो मरण ते पामियो, इम बोले उमरावो रे।
गज गल माला रे डाले जेहने, अपनो नाथ बनावो रे ॥४१॥
सब हाँ कीधो रे तिण हीज कुमर ने, माला गल बीच ठाई रे।
बाजा बाजे रे बहु आडम्बरे, दीनो राज बिठाई रे ॥४२॥
पणीगग देखियो ते सुख भूपनो, मन में तब पछतावे रे।
मैं पिण पाऊं रे एहवी साहवी, फिर सुपनो कब आवे रे ॥४३॥
सायत तेहो रे सुपनो ले सके, संशय नहीं लिगारो रे।
मनुष्य जमारो हारयो नहीं मिले, काल अनन्त मझारो रे ॥४४॥

[७]

मथुरा नगरी र राज करे तिहां, जित शत्रु राजानो रे।
है एक पुत्री रे सुगुणी तेहने, वल्लभ प्राण समानो रे ॥४५॥
प्रेम धरी ने नरवर पूछियो, बाई कहे इण वारो रे।
कहे तो मैं देखि सगपण करूं, या स्वयंवर धारो रे ॥४६॥
जो मुझ व्याहे रे क्षत्री वंशनो, साधे राधावेधो रे।
नहीं तो रहसुं मैं ब्रह्मचारिणी, मुझ मन यही उम्मीदो रे ॥४७॥
लिख लिख भेजी रे कुमकुम् पत्रिका, सब राजन सरदारो रे।
स्वयंवर मंडप है मुझ बाई नो, कृपा करके पधारो रे ॥४८॥
जो जो राजन आये तेहने, बहु विध कर सन्मानो रे।
बनायो मंडप एक मनोहर, जैसे स्वर्ग विमानो रे ॥४६॥
शुभ दिन मुहूर्त आदि देखने, तेड़ीया सब राजानो रे।
मंडप मांही रे भीलिया भूपति, बैठा निज निज स्थानो रे ॥५०॥
मज्जन करने रे कुंवरी महल में, सजके सब शृंगारो रे।
निकली महल से रे सखियां साथ में, बाजीन्तर धुन्कारो रे ॥५१॥
मंडप मांही रे कुँवरी आय ने, बीच में स्तम्भ रोपायो रे।
उपर स्थापी रे काष्ठ की पुतली, बीच में चक्र चलायो रे ॥५२॥
लोह कढ़ाई रे नीचे ऊकले, तेल भरी भरपूरो रे।
विनय करी ने रे, कुंवरी विनवे, है कोई राजन शूरो रे ॥५३॥
रजमो धारी ने आवे उठने, तेल मे नजर लगावो रे।
बाण चलावो रे भेदी चक्र ने, ते पुतली तक जावे रे ॥५४॥

फिर पुतली के रे यात्रा नेत्र ने, बीन्धे जे नर कोई रे।
जननी जायो रे जग में सूरमो, ब्याहेगा सुके पोंही रे ॥५५॥
जे जे आवे रे भूपति देखने, मान करी स्वयमेवो रे।
ते विध करने रे सर मधि गह्या, हाथ मिले नहीं पहवो रे ॥५६॥
सायत ते तो रे हाथ मिल सके, संशय नहीं लिगारो रे।
मनुष्य जमारो रे हारयो नहीं मिले, काल अनन्त ममारो रे ॥५७॥

[८]

धोद्रक द्रह मे रे कच्छ मच्छ है घणा, निर्मल भरियो है नीरो रे।
पट्ट अष्ट छाया रे हरित सेवालना, चौकोना सम तीरो रे ॥५८॥
तरु फल तूटि रे द्रह भीतर पड्यो, छिद्र हुयो तिण वारो रे।
कछुओ निकल्यो रे देख्यो चन्द्रमा, विस्मय पायो अपारो रे ॥५९॥
कछुओ पहुच्यो रे कही निज कुटुम्ब ने, चरित्र बतावण लावे रे।
आयो जितने रे वह छिद्र ढक्क गयो, चन्द्र दरश कब पावे रे ॥६०॥
सायत तेतो रे दरशन मिल सके, सशय नहीं लिगारो रे।
मनुष्य जमारो रे, हारयो नहीं मिले, काल अनन्त मकारो रे ॥६१॥

[९]

सुवर्ण स्तभो रतन जडाव को, कोई सुर खंड खड कीधो रे।
चूरण करी ने मेरु गिरी सेती, सर्व फ्डाई ते दीधो रे ॥६५॥
ते परमाणु रे सब भेला करे, फर्क रखे कछु नाहीं रे।
मुश्किल एहवो रे जग में मानवी, देवे स्थभ बनाई रे ॥६६॥
सायत तेतो स्थभ बनी सके, सशय नहीं लिगारो रे।
मनुष्य जमारो रे हारयो नहीं मिले, काल अनन्त मकारो रे ॥६७॥

[१०]

पृथ्वी पाणी रे तेउ वायु में, वसियो काल असंखो रे।
काल अनन्तो रे तरुगण में रयो, शास्त्र वचन निसंखो रे ॥६८॥
एक एक लोक प्रदेश के ऊपरे, अनन्त अनन्त भव कीधा रे।
परवस प्राणी रे जनम मरण किया, विश्व सहु भर दीधा रे ॥६९॥
अशुभ कर्म गये शुद्ध हुई आतमा, जोग भलो वरतायो रे।
भद्र आदि यह शुभ गुण सेविया, मनुष्य जनम जब पायो रे ॥७०॥
नित्य गुरु मुख से रे शास्त्र सामलो, श्रद्धा शुद्ध आराधो रे।
प्राकर्म करजो रे सयम धर्म में, यह शुभ अवसर लाधो रे ॥७१॥

कोइक मोटो रे नगर सुहामणो, तिण ने एक ही द्वारो रे।
कोपित सुर होई अग्नी लगायदी,जनता निकसे है बहारो रे ॥७२॥
बणीगत अंधो रे फिरतो शहर में, ते बोल्यो तत्कारो रे।
प्रथम निकालो रे मुजने बाहिरे, जाणी पर उपकारो रे ॥७३॥
एक दयालु रे नगर दीनार के, दीनो अंध लगाई रे।
इणरे सहारे तू जा निकलजे, तिण दरवाजा के मांई रे ॥७४॥
बणीमग चाल्यो रे द्वार ते आवियो, तत्क्षण छोड़ी दीवारो रे।
खाज को खणतो रे आगे निकल्यो,फिर कब आवे ते द्वारो रे ॥७५॥
नगर सरीसो रे यह संसार है, जन्म मरण की है आगो रे।
नुष्य जमारो रे द्वार है मोक्ष नो,इम भाख्यो वीतरागो रे ॥७६॥
ग सहु जाणो रे स्वार्थ नो सगो, उपकारी शुद्ध साधो रे।
ुख से डरने सेवो धर्म ने, मत करज्यो परमादो रे ॥७७॥
यो हलु कर्मी रे चाहु मोक्षना, सुण जो ध्यान लगाई रे।
ांचो शरणो रे लीज्यो धर्म नो, भव भव में सुखदाई रे ॥७८॥
ी जिन आगम उत्तराध्येन में, तीजा अध्ययन मझारो रे।
ेस कथा से रे यह कविता करी, अल्प बुद्धि अनुसारो रे ॥७९॥
ाखवेसारे गुरु नन्दलालजी, है स्थविर भगवन्तो रे।
रम दयालु रे दाता बोधना, रवि जिम तेज दिपन्तो रे ॥८०॥
ंवत दससो रे नवसो उपरे,साल सतंतर सारो रे (१९८४)।
चना कीनी रे खूब मुनि आवरे, मालव देस विख्यातो रे ॥८१॥

४

विविध विषय
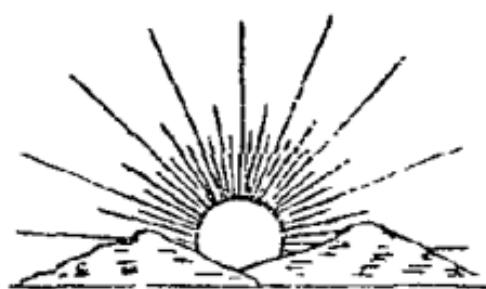
[१]

दोहा

अरिहन्त सिद्ध आचार्यजी, उपाध्याय अणगार।
'खूब' कहे सुमरो सदा, हो जावो भव पार ॥ १ ॥
'खूब' गुरु उपदेश से, हो अज्ञान का नाश।
रहे अंधेरा जिम नहीं, सविता[1] केर प्रकाश ॥ २ ॥
सत्य शील निर्लोभता, दया क्षमा भरपूर।
'खूब' कहे उस सन्त की, सेवा करो जरूर ॥ ३ ॥
गुरु वैद्य माता पिता, और भूप के पास।
'खूब' कहे पूछे तभी, दीजे साफ प्रकाश ॥ ४ ॥
शूर पुरुष देखे नहीं, सकुन योग तिथि वार।
'खूब' सदा ही निडरता, ताकू कहा विचार ॥ ५ ॥
सिर मुण्डाय साधु हुवे, काम दाम तज धाम।
'खूब' कहे उस संत को, कहा दाम से काम ॥ ६ ॥
साधु सेठ और वैद्य के, अवश्य[2] मुलामी होय।
'खूब' कहे इन तीन की, शोभा करे सब कोय ॥ ७ ॥
दुनिया में दाता घणा, आशा हित दे दान।
'खूब' मोक्ष के हेत दे, वे विरला नर जान ॥ ८ ॥
खूब साज दीयो वक्त पै, आखिर अपनो जान।
नुगरो ते गुण भूल के, निकल्यो डांस समान ॥ ९ ॥
'खूब' दाम चौड़े करे, अपनी महिमा काज।
टुकड़ा भी देवे नहीं, द्वार खड़ा मोहताज ॥ १० ॥
दुखी वियोगी बावरो, क्रोधी शठ इन्सान।
'खूब' बोलतां पांच को, रहे नहीं कुछ भान ॥ ११ ॥

१ सूरज। २ नरमाई।

पक्ष नहीं पैसो नहीं, खाली जणावे जोर ।
'खूब' कहै वो मानवी, सींग पूंछ बिन ढोर ॥ १२ ॥
उद्यम कबहुँ न छोड़िये, यद्यपि कष्ट पड़ंत ।
'खूब' कहे उद्यम किया, कीड़ी शिखर चढ़ंत ॥ १३ ॥

पर उपकारी ना हुवो, बड़ो होय जग मांय ।
'खूब' कहे किस काम का, जैसे तरु बिन छांय ॥ १४ ॥
'खूब' कभी ना कीजिए, [1]लापर वचन प्रमान ।
जहां नीर भरियो बहै, मिलै न कीच निशान ॥ १५ ॥

माता से अड़तो रहे, परणी को करे पक्ष ।
खूब कहे या पुरुष को, कोई कहे न दक्ष ॥ १६ ॥
आम वृक्ष को छोड़ के, जाय एरण्ड के पास ।
'खूब' कहे या पुरुष की, कैसे सफल हो आस ॥ १७ ॥

'खूब' वस्तु जैसी हुवे, वैसी श्रद्धे कोय ।
मुंह से भी वैसी कहे, जे समदृष्टि होय ॥ १८ ॥
यौवन माया जो समय, बहता पानी जाय ।
'खूब' कहै ये चार ही, मुड़ कर आवे नाय ॥ १९ ॥

भाई भाई के देखिया, जहाँ तहाँ कुसम्प ।
'खूब' कहे कोइक जगह सायत होगा सम्प ॥ २० ॥
कवि वैद्य तपसी मुनि, [2]भेदु भूप [3]भटियार ।
'खूब' कहे इन सात से, नहीं करना तकरार ॥ २१ ॥

वैद्य और राजा मुनि, मुखिया पंच कहाय ।
ये चारों [4]जूना भला, 'खूब' कहे समझाय ॥ २२ ॥
मूर्ख वैद्य लोभी गुरु, न्यायहीन सरकार ।
'खूब' कहे इन तीन से, कभी न होय सुधार ॥ २३ ॥

मूंजी धन कण कीड़िया, संचय कर मर जाय ।
'खूब' कहे दोनों कभी, नाहीं खरचे खाय ॥ २४ ॥
पापी जन की जगत में, 'खूब' कहे पहिचान ।
दया दान भक्ति नहीं, अंगे अति अभिमान ॥ २५ ॥

'खूब' कहे पुन्यवान की, जग में यह पहिचान ।
दया दान भक्ति बसे, अंगे नहिं अभिमान ॥ २६ ॥

---

१ लाफर-उचक्का । २ गुप्त बातें जानने वाला । ३ रसोइया । ४ पुराने,

मेघ मुनि नृप देवता, दाता होय दयाल।
'खूब' मुदित पांचों हुवे, छिन में करे निहाल॥ २७॥
पाप [1]थकी पीछो रहे, धर्म मांह अगवान।
'खूब' कहे वह मानवी, सद्गति का महमान॥ २८॥
धर्म थकी पीछो रहे, पाप मांहि अगवान।
'खूब' कहे वह मानवी, दुर्गति का महमान॥ २९॥
लज्जा को गिरवे धरी, लोपी कुल की कार।
'खूब' कहे मोटा थई; डोले सरे बाजार॥ ३०॥
सुनी बात माने सही, निर्णय काढ़े नांय।
'खूब' कहे या जगत में, लोग भेड [2]परवाय॥ ३१॥
हाकिम रिश्वत खात हैं, साधु सत्य के बहार।
'खूब' कहे कानून से, दोनों ही गुन्हेगार॥ ३२॥
ओछा नर के साथ में, लट पट होना नाय।
[3]दब से काम निकालनो, 'खूब' कहे समझाय॥ ३३॥
सुसरा की लज्जा करे, पितु ने देवे गाल।
कलियुग खाता देखिया, ऐसे [4]निवड़े माल॥ ३४॥
बालक [5]येड़ो बान्दरो, राजा श्वान भुजंग।
'खूब' कहे इन छहों को, अति भलो नहीं संग॥ ३५॥
'खूब' कैंची दो दो करे, ते भरती टकराय।
सुई करावे एकता, चढ़े शीश पर जाय॥ ३६॥
'खूब' पाय सुख सम्पदा, तज दीजे अभिमान।
सदा वक्त नहीं एक सा, मान मान नर मान॥ ३७॥
हो तो गुणी के गुण करो, अवगुण तज दो यार।
'खूब' नहीं तो चुप रहो, यही समझ को सार॥ ३८॥
ऊथो दुंग्यो गिर पड्यो, चोर जुंआरी पांच।
'खूब' पूछता तुरत ही, कभी न बोले सांच॥ ३९॥
'खूब' कहे साधु सती, बिन टाइम बिन काम।
फिरे डोलता घर घरे, क्यों न होय बदनाम॥ ४०॥
एक इन्द्रिय के वश पड़े, प्राण तजे तत्काल।
'खूब' पांच के वश पड़े, उनका कौन हवाल॥ ४१॥

१ से। २ प्रवाह। ३ तरकीब से। ४ हुए। ५ पागल।

'खूब' कहे जो मानवी, कर्म किया अति नीच।
भोग चलावे ऑंगुली, घिग जीव्यो जग बीच ॥ ४२ ॥
'खूब' ऊँच के संग से, बधे तेज परताप।
नीचे की संगत किया, उल्टी आवे आप ॥ ४३ ॥
'खूब' देख पर-सम्पदा, दुष्ट भाव मत लाय।
जो जैसी करणी करे, वैसा ही फल पाय ॥ ४४ ॥
स्वारथ को संसार है, विन स्वारथ नहीं कोय।
ज्यों पण्डित की पत्रिका, वर्ष लग आदर होय ॥ ४५ ॥
तन बुद्धि मुंह प्रकृति, अरु भाषा भाग्य विचार।
'खूब' कहे सब मनुष्य में, मिले नहीं इक सार ॥ ४६ ॥
अधो वाय खांसी हंसी, छींक उबासी डकार।
'खूब' कहे सब मनुष्य में, मिलती है इकसार ॥ ४७ ॥
'खूब' मीन सज्जन मुनि, ना किसको कुछ देत।
तांको बिन अपराध ही, दुर्जन जन दुःख देत ॥ ४८ ॥
'खूब' योग्य नर जाए के, शरण लई कोई आय।
आप निभावे जन्म भर, पिछले को कह जाय ॥ ४६ ॥
नारी नारी एक है, सकल जगत भरपूर।
भगनी भार्या सोच कर, चतुर पुरुष रहे दूर ॥ ५० ॥
'खूब, पात्र अन्न वस्त्र के, पग ठोकर दे जेय।
मैं तो बड़ों के मुंह सुनी, अशुभ जानजे ऐव ॥ ५१ ॥
मिष्ट बोल कर जो लहे, हर्षित खूब अपार।
जब वो आवे मांगवा, लड़वा हो तैयार ॥ ५२ ॥
बिना काम बिन पूंछिया, रे मानव मत बोल।
'खूब' मौन कर रीजिये, तजिए हंसी किलोल ॥ ५३ ॥
'खूब' देख कुछ जाति का, कर लेते उनमान।
अब तो हुवे बहु रूपीया, होती नहीं पहिचान ॥ ५४ ॥
भाषण देवे जोश का, मिस्टर बाबू सहाय।
'खूब' लोग माने नहीं, उनके ढंग खराब ॥ ५५ ॥
'खूब' पेट में कपट है, दीखत के नर नेक।
नारङ्गी फल सारिखा, भीतर फांक अनेक ॥ ५६ ॥
'खूब' तुरत समझे सभी, ते खरबूज समान।
दीखत फांक अनेक है, भीतर एक ही जान ॥ ५७ ॥

'खूब' मान जग में बुरो, मान बड़ो अपमान।
न्याय दशारण भूप को, लीजो समझ सुजान ॥ ५८ ॥
मास्टर दुर्व्यसनी हुवे, उनकी संगति मांय।
बिगड़े क्यों न विद्यार्थी, 'खूब' कहै समझाय ॥ ५६ ॥

दो विभाग एक खेत के, बोयो बीज दोई बीर।
'खूब' साख का निपजना, है अपनी तकदीर ॥ ६० ॥
'खूब' बात देखी सुनी, कहन योग नहि होय।
राखो पूर्ण गम्भीरता, प्रकट करो मत कोय ॥ ६१ ॥

चूक देख शिक्षा करे, कठिन शब्द में कोय।
'खूब' कहै हित मानिये, आगे पर गुण होय ॥ ६२ ॥
सेवा तपस्या सरलता, सूत्र पठन वैराग।
इन बातों पै अब कहां, 'खूब' पूर्ण अनुराग ॥ ६३ ॥

'खूब' बड़ों की प्रेम से, करे सेव नर कोय।
गुणी बने ज्ञानी बने, सर्व कार्य सिद्ध होय ॥ ६४ ॥
मेवाड़ का मानी घणा, अधिक मांन को धींग।
जोखम मोखम जीमणो, बड़ो हुकम ने सींग ॥ ६५ ॥

चित्तहरणी घरणी मिली, भृत्यक चतुरङ्ग सेन।
राजविभव सुत मित्र है, जब लग खुले दो नैन ॥ ६६ ॥
सुसरा के घर नित को रेणो, मांग परायो पहिरे गेणो।
छतो पईसो राखे देणो, इन तीनों को मूरख केणो ॥६७॥

खुशी मनाई राख्यो बेटो, थोड़ा दिनां में माड्यो खेटो।
पर को फूट फजीतो कीदो, बेची नींद ओजको लीदो ॥६८॥
जोड़ी प्रीत पेट में आँट्या, मेरा खाय गोट में बाट्याँ।
निर्लज होय लड़े क्यों हाऱ्यां, दे धिक्कार पड़ोसी डाऱ्यां ॥६६॥

घणी दया से बिगड़े तन, परधन देखी बिगड़े मन।
बिना भावतो खावे अन्न, ये तीनों ही मूरख जन्न ॥७०॥

दशार्ण राजा—तीर्थंकर भगवान के आगमन पर राजा दशार्णभद्र ने बहुत तैयारियाँ की। अपनी समस्त सेना सुन्दर ढंग से सजाई। सम्पूर्ण वैभव के साथ वह दर्शनार्थ चला। मगर उसे अभिमान आगया कि आज तक किसी भी राजा ने ऐसी तैयारी नहीं की होगी, जैसी मैंने की है। इन्द्र ने राजा के इस अभिमान को दूर करने के लिए उसकी अपेक्षा और अधिक वैभव प्रदर्शित किया। इन्द्र के वैभव के सामने राजा का वैभव फीका पड़ गया।

गली बीच की तीन आना, बारह आना बजार की।
चुगल खोर के मुँह ऊपर, पन्द्रह लाख पेजार की ॥७१॥
औंधा खुला लँगड़ा परणे, धोला चमके केसां में।
'खूब' कहे बहिरा भी परणे, करामात है पैसां में ॥७२॥
घणों पटेलां बिगड़े गाम, घणों जोगां से उठे धाम।
पत्या कचेरी सुख्या धाम, पूत कपूतां उठ्यो नाम ॥७३॥
बिना काम को परघर जाणो, बिना भूख को भोजन खाणो।
बिना अवसर को गायन गाणो, बिना लाभ को खर्च बढाणो ॥
इन चारों को मूरख जाणो ॥७४॥

नीची नजर मयूर सी चोखी, कर में रहे स्मरणी।
बाहिर संत सरीखा दर्शे, भीतर बहे कतरणी ॥
खूब मुनि कहे जो नर ऐसा, उनसे बचते रहो हमेशा ॥७५॥
कोई ऊंघे कोई पोथी पढ़े बात करे धन धाम की।
कोई चित चंचल दूरा बैठा, कोई माला फेरे प्रभु नाम की ॥
'खूब' कहे ऐसा श्रोता के सामने, कथा करी कहीं काम की ॥७६॥

पहेलियां

प्रश्न—एक ऋषि डंडे पर डटा, खूब शीश पर लम्बी जटा।
निलाम्बरी माला नहीं फेरे वृद्ध होय जब धोला पहिरे ॥१॥
उ० भुट्टा ॥

प्र० लम्ब पयोधर पसली काय, उगो कमल नाभि के मांय।
खून मांस तन उपर नाय, खूब नशा चौडे दरशाय ॥२॥
उ० तराजू (तकड़ी)

प्र० पांव बिना डुँगर चढ़े, बिना मुखे खज खाय।
खूब पसरे वायु लगे, जल पायां मर जाय ॥३॥
उ० अग्नि (आग)

प्र० पय पायां पीवे घणो, जरे नहीं नर मांय।
नर पूठे सूती रहे, खूब बिछात बिछाय ॥४॥
उ० मशक

प्र० खूब नार पग पांच की, तीन नैत्र से नाले।
एक पांव ऊंचो रक्खे, चार पांव से चाले ॥५॥
उ० मोटर

प्र० पाप कर्म करते "रहो" जो सुख चाहो सेण ।
'खूब' कहे मानो सही ये सत गुरु के वेण ॥६॥
उ० ठहरो

प्र० सुता मात सासु बहु, ननंद भोजाई भाय ।
खूब कहे छे पुडियां, कितनी ? खाय ॥७॥
उ० २-२ माता, बहु, बेटी, ये तीन थी

प्र० पिता पुत्र सालो बहनोई, मामो भाणेज और नहीं कोई ।
खूब कहे नव घेवर लाये, कितने ? सबने खाये ॥८॥
उ० ३-३-पिता, पुत्र, साला, तीन थे

प्र० रहे पयोधर लटकता, पतलो तास शरीर ।
खूब उठाया नर फिरे, के घर के जल तीर ॥६॥
उ० कावड़

प्र० वन में देखी "कोकिला"थे, शिर, पर, दो पांय ।
खूब कहे मानो सही,इण मे सशय नाय ॥१०॥
उ० पदच्छेद करके पढो

प्र० नो से "कागज" लावजो, भूपति आज्ञा दीन ।
खूब कहे एक पाद के, अर्थ होत है तीन ॥११॥
उ० कागज, कागज लावजो, गज लावजो

प्र० जो मिलिया सो दोय में, एक मे मिले न कोय ।
जो एक में जा मिले, दो में मिले न कोय ॥१२॥
उ० जगम, स्थावर-सिद्ध मे,

कुछ तुक्कें

रास्ता को आम १ फायदा को काम २ ।
जागीरी को गाम ३ घर बैठा दाम ४ मुफ्त में नाम ५ ॥१॥
खर लडे लातां से १ मूर्ख लडे हाथां से २ ।
पण्डित लडे बातां से ३ श्वान लडे दांतां से ४ ॥२॥
मिलणो चीरा को १ व्यापार हीरां को २ ।
जीमणो सीरा को ३ बगार जीरा को ४ ॥३॥
एको नार्यों को १ वैर भार्यों को २ ।
गायो बार्यों को ३ दूध गार्यां को ४ ॥४॥
भोजन में राद १ रास्ता में खाड २ नदी में झाड ३ ॥५॥

किवाड़ की कील १ जंगल में भील २।
आकाश में चील ३ राज में वकील ४॥६॥
बैल बिना गाड़ी १ लाड़ बिना लाड़ी २।
फूल बिना वाड़ी ३ जंगल बिना झाड़ी ४
रंग बिना साड़ी ५ भैंस बिना पाड़ी ६ ॥७॥
सोना सेजों का १ बैठना मेजों का २ मरना हेलों का ३ ॥८॥
कर्मों के लिहाज नहीं १ नागा के लाज नहीं २।
रंक के राज नहीं ३ मन के पाज नहीं ४ ॥६॥
कुचद कांणां री १ ममक स्याणां की २ करामात नाणां की ३ ॥१०॥
राड़ हाट्यों की १ गोट बाट्यों की २ लड़ाई लाट्यों की ३ ॥११॥
गद्धा के ज्ञान नहीं १ दातरा के ध्यान नहीं २ वेश्या के शान नहीं ३ ॥
सभा सोहे राजा से १ ब्याह सोहे बाजा से २ महल सोहे छाजा से ३।
जल में कभी न लागे आग १ आग में कभी न लागे बाग २
गूंगो कभी न गावे राग ३ धोया उज्वल होवे न काग ४
ऐसा होय सो मोटा भाग ५ ॥
हाकमी गर्म की १ साहूकारी भर्म की २ बहू बेटी शर्म की ३
दुकानदारी नर्म की ४ ॥१५॥
गाड़ी को भय टूटण को १ काया को भय छूटण को २ माया को भय
लुटण को ३ बुढ़ा को भय उठण को ४ साधु को भय रूंठण को ५ ॥१६॥
करजे लड़ाई तो बोलजे आड़ो १ करजे खेती को राखजे गाडो २
राखजे भैंस तो बान्धजे बाड़ो ३ ॥१७॥
वांण में टेकी १ धर्म में दृष्टि २ जोबन में शेखी ३ ॥१८॥
पंच राणा १ पंच स्याणा २ पंच कांणा ३
पंच धूल खाणा ४ पंच खेंचा ताणा ५ ॥१९॥
देवाणं भंडाणं १ सेठाणं गंधाणं २ राजाणं हुकमाणं ३
गोलाणं गप्पाणं . ४ ॥२०॥
करे सो भरे १ फूटा सो झरे २ झूंठा सो डरे३ पाका सो खरे४
जन्मे सो मरे ५ ॥२१॥
कुत्ता बिना गांम कहा १ गुण बिना नाम कहा २
पाणी बिना कूप कहा ३ न्याय बिना भूप कहा ४ ॥२२॥
आवाज आन्धा की १ मरोड़ बान्दा की २ लड़ाई चाड़ां की ३
वास कारां की ४ हाय मांदा की ५ ॥२३॥
झूंठ १ फूट २ लूट ३ माया छूट ४ ॥२४॥

अरिहन्त स्तुति

—कवित्त—

पहले पद अर्हन्त, चारों कर्म किया अन्त,
लिया है मुगति पंथ, केवल के धारी हैं।
चौंतीस [1]अतिशै पुन, मोटा है द्वादश गुण,
तीन लोक मांही प्रभु कीरति पसारी है ॥
अनंत बली हैं जांके, नहीं है गुणों को पार,
सूत्र विस्तार, प्रभु घोर ब्रह्मचारी हैं।
'खूबचन्द' कहै कर जोड़ के नमाऊं शीश,
ऐसे अरिहन्त ताको वन्दना हमारी है ॥ १ ॥

सिद्ध स्तुति

दूजे पद सिरी सिद्ध हुआ है पन्दरा भेद,
मैंने भी उम्मीद तोरे दर्शनों की धारी है।
आठों ही करम ठेल, पाया है मुगति महल,
अनंत सुखों की टहल, जान रहा सारी है ॥
रंग रूप कर्म काया, मोहने ममता माया,
दुःख ने दरिद्र रोग सोग सेन्या टारी है।
'खूबचन्द' कहै कर जोड़ के नमाऊं शीश,
ऐसे सिद्ध राज ताको वन्दना हमारी है ॥ २ ॥

आचार्य स्तुति

आचारज तीजे पद, छांड दिया आठ मद,
करत करम रद, बहु गुणधारी है।
छत्तीस गुण सोहन्त, शरीर स्वरूप कन्त,
संघ में सोहन्त, तेतो पर उपकारी है ॥
छः काया के प्रतिपाल, ऐसा है दयाल,
जिन वचन रसाल, जामे चित रम्यो भारी है।
'खूबचन्द' कहे कर जोड़ के नमाऊं शीश,
ऐसे आचारज ताको वन्दना हमारी है ॥ ३ ॥

---

१ विशिष्टताएं।

उपाध्याय स्तुति

चौथे पद उवझाय, पच्चीस गुणों के थाय,
नमूं निज पांय, आगे प्रणम्या पमारी है।
चौदह पुरव अंग, इग्यारह उपांग बारह,
आगे ते भणावें आप ऐसा उपकारी है॥
ज्ञान है नगन, ज्ञान ध्यान में मगन,
शिवपुर की लगन, लग रही अति भारी है।
'खूबचन्द' कहे कर जोड़ के नमाऊं शीश,
ऐसे उपाध्याय, ताको वन्दना हमारी है॥ ४॥

साधु स्तुति

सुन के जिनन्द वाणी, अन्तर वैराग्य आणी,
संसार अनित्य जाणी हुआ व्रतधारी है।
गुण हैं अठारे सत्र, बोलत मधुर रस,
सुधारे मनुष्य भव, सुमति विचारी है॥
दिपावे श्री जिन धर्म, तोड़े आठों कर्म,
पद पावे है परम, सदा जांकी बलिहारी है।
खूबचन्द कहे कर जोड़ के नमाऊँ शीष,
ऐसे मुनिराज ताको, वन्दना हमारी है॥५॥

परमेष्ठी गुण

अरिहन्त देवजी विराज मान बारे गुण,
सिद्धजी विराजमान अष्ट गुणधारी है।
आचारज श्री अठारह[1] गुणों से विराजमान,
दश आठ सात[2] से उपाध्याय शुद्धाधारी है॥
सत्ताविश गुणां करी साधुजी विराजमान,
मोक्ष अभिलाषी जग जाल को निवारी है।
खूबचन्द कहे कर जोड़ के नमाऊँ शीष,
ऐसे पाँचों पद ताको वन्दना हमारी है॥६॥

गुरु प्रशंसा

राजा जो प्रसन्न होय गामादि बक्सीश करे,
सेठजी प्रसन्न होय नौकरी चढाय दे।

१ छत्तीस। २ दस आठ सात अर्थात् पच्चीस।

मा पितु प्रसन्न होय बतावे गुपत वित्त,
पति जो प्रसन्न होय जेवर घड़ाय दे ॥
देवता प्रसन्न होय पुत्र और धन देत,
उस्ताद प्रसन्न होय इलम पढ़ाय दे।
'खूबचन्द' कहे गुरु देव जो प्रसन्न होय,
जनम मरण भव दुःख से छुड़ाय दे ॥ ७ ॥

गुरु की अप्रसन्नता

राजा जो कुपित होय फाँसी शूली कैद करे,
सेठजी कुपित होय घर से निकास दे।
मा पितु कुपित होय धन से निराश करे,
पति जो कुपित होय मार ताड़ त्रास दे।
देवता कुपित होय पुत्र और धन हरे,
शिक्षक कुपित होय पद बदमाश दे।
'खूबचन्द' कहे गुरुदेव जो कुपित होय,
आग नाग बाघ जैसे छिन में विनाश दे ॥ ८ ॥

गुण विना नाम

नाम तो शीतलदास छेड्या सेती क्रोध करे,
नैनचन्द नाम पण जनम को अन्ध है।
दयाचन्द नाम दिल दया की रहस्य नांही,
ज्ञानचन्द नाम नित करे खोटा धन्ध है ॥
नाम तो अमरचन्द जीव्यो है अलप काल,
सदासुख नाम पण दुःख को सम्बन्ध है।
'खूबचन्द' कहे अणी दृष्टांत सुजान नर,
गुण विना नाम जैसे श्वान पै सुगन्ध है ॥ ९ ॥
नाम तो लक्ष्मीबाई छाणा विणे वन मांही,
रूपाबाई नाम रूप काग से सवायो है।
दयाबाई नाम पण जूंआ लीखां मारे नित,
स्याणीबाई नाम जन्म रार में गँवायो है ॥
नाम तो जड़ावबाई ताबे को न तार पास,
राजीबाई नाम राखे होवड़ो चढ़ायो है।
'खूबचन्द' कहे ऐसे गुण बिना नाम जैसे,
मोतियों का हार मानो भैंस ने पहिनायो है ॥१०॥

रुचि विना

रुचि विना ज्ञान ध्यान रुचि बिना दान मान,
रुचि बिना स्नान पान कैसे मन आवे रे।
रुचि विना दया सत्य शील ने सन्तोष बलि,
रुचि बिना वणज व्योपार नहीं थावे रे॥
रुचि बिना जप तप रुचि बिना करे व्रत,
रुचि बिना धर्म कथा कान न सुहावे रे।
'खूबचन्द' कहे 'थणी दृष्टांत सुजान नर,
अन्तर की रुचि हुवे फेर कांई चावे रे॥११॥

पाप को घड़ो

सेर की हांडी में मूढ दोय सेर घालन लागो,
ज्ञानी कहे देख भाई एतो न समायगो।
दो दिन को प्यासो भूखो नीठकर मिली खीचड़ी,
भूख तो घणी छे ऐती खीचड़ी न खायगो॥
मूरख न मानी सांच लगाई अगनी आंच,
ढकण ढक्यो छे पण पीछे पछतायगो।
'खूबचन्द' कहे अणी दृष्टांत सुजान नर,
पाप को घड़ो तो कोई दिन फूट जायगो॥१२॥

लालची कुत्ता

श्वान एक अति भूखो, जाको बासी लूखो सूको,
नीठकर मिल्यो टूको, मूढ नहीं खावे रे।
मुँह में लेइने [1]हाल्यो,नदी के किनारे चाल्यो,
आपको आकार जल मांही दरशावे रे॥
दूसरो रोटी को टूको, जाणी ने लेवण [3]टूको,
मूल ही को खोयो, पीछो नजर न आवे रे।
'खूबचन्द' कहे अणी दृष्टांत सुजान नर,
लालच करे सो निज गांठ को गमावे रे॥१३॥

---

१ इस। २ रवाना हुआ। ३ चला।

बिल्लियों का न्याय

दो बिल्ली को एक रोटी, मिली तब सलाह घोटी,
बन्दर के पास जाय, हिसाब करावे रे।
छोटा मोटा टूक करी, तराजू के मांही धरी,
नमे जिसे कपि रोटी, ज्यादा तोड़ी खावे रे॥
सूंपी थें तो रोटी म्हारी न्याय न करावो मैं तो,
कपि सब खा गयो तब बिल्ल्यां पछतावे रे।
'खूबचन्द' कहे श्रणी दृष्टांत सुजान नर,
कपटी के पास जाय न्याय क्यों करावे रे॥१४॥

बन्दर की मूर्खता

तरखान नदी के तीर, लकड़ रह्यो तो चीर,
अधूरो छोड़ी ने फांदो घाली घर आयो है।
इतने तुरत तिहां बन्दर आई ने बैठो,
दोनों चीर बीच निज पूंछ ने फंसायो है॥
चंचल स्वभावी फांदो, पकड़ हिलायो तब,
निकल गयो छे मांही पूंछ पकड़ायो है।
'खूबचन्द' कहे श्रणी, दृष्टान्त सुजान नर,
परको बिगाड़्यो काज ते ही दुःख पायो है॥१५॥

भेड़ का न्याय

मीठी दाख तणी बेल, ऊंची गई जमी को ठेल,
तरु पै रही थी फैल, तिहां वन मांही रे।
भेड़ों चरे चार कोडी, तिण में से एक मोडी,
हौंस कर दौड़ी पण मुंह पूगो नांही रे॥
मोड़ी पीछी फिरी [1]तद, दूजी भेड्यां पूछो [2]जद,
मुंह को बिगाड़ बेल, कड़वी बताई रे।
'खूबचन्द' कहे इतो स्वारथ न पूगे जब,
अवगुण बतावे मूढ गुणीजन मांई रे॥१६॥

१ तब। २ जब।

बिया और बन्दर का न्याय

बियो कहै बन्दर [1]भणी, मौसम बरसात तणी,
उद्यम करे नी मूढ़, बैठो रेवे काई रे।
मानुष सी देह धारे, दुःख में क्यों दिन गारे,
[2]रेवण के काज घर लेवे नी बणाई रे॥
हितकारी देता सीख, क्रोध में हुयो अधिक,
बन्दर बियो को घर, तोड़ नाख्यो आई रे।
'खूबचन्द' कहै अणी दृष्टांत सुजान नर,
ऐसे मूढ़ जन ताको सीख दीजे नाई रे॥१७॥

काग हंस का न्याय

काग हंस अष्ट पहेर, दोनों जणा रहे लेर,
कागलो कुबुद्धि लायो हंस ने उडाय रे।
नृप घबराय वन मांही सूतो तरु छाँह,
तेहनी डाल उपर बैठा दोनों आय रे॥
काग हड्डी लायो उठ मुंह थकी गई छूट,
भूपति पै गिरी काग भागी दूर जाय रे।
'खूबचन्द' कहै ऐती नीच की संगति सेती,
नृप मारयो बाण दियो हंस ने पोढाय रे॥१८॥

काग सुवा का न्याय

काग सुवा दोनों मिल बाग मांही रहे नित,
फल फूल खावे तिहां माने अति सुख रे।
काग कहै सुण सुवा अठे घणा दिन हुआ,
चालो म्हारे वन बिलां खायां भागे भूख रे॥
तारे आयो सुवो बिला देखी ने चकित हुओ,
खाता भागी चोंच तब करे अति कूक रे।
'खूबचन्द' कहै अणी दृष्टांत सुजान नर,
मूढ़ की संगत मत कीजे भूल चूक रे॥१९॥

१ से। २ रहने।

रंक का न्याय

रङ्क एक वन मांही सूतो तब नींद आई,
सुपना में हुओ जैसे पृथिवी को नाथ रे।
छतर धरावे शीश उमराव सोला वत्तीस,
खमा २ करे केई जोड़ी दोनों हाथ रे॥
याचकां ने देवे दान धुरे है निशान वलि,
रतन सिंहासन वैठो हुकम चलात रे।
'खूबचन्द' कहै श्रणी दृष्टांत सुजान नर,
सुपना सी सम्पति में क्यों राचे दिनरात रे॥२०॥

वजाज का न्याय

लालोजी वजाज, परदेश में कमावा काज,
चाल्यो कर मिजाज, प्रिया कहै झट आवजो।
कमाई हुवा मे म्हारे, बींदी बीछया बाजू केता,
हार माला नव चूंप घड़ाई ने लावजो॥
ओढ़न के काज एक, लावजो रेशमी चीर,
नव ही रकम आप भूल मत जावजो।
'खूबचन्द' नारी धुतारी यूं बोली नाहीं,
आगरा को पेचो एक थांके लेता आवजो॥२१॥

सप्त व्यसन का न्याय

प्रथम व्यसन सद्गुरु की करीजे सेव,
दुजो यो व्यसन जीव दया नित कीजिये।
तीजो यो व्यसन सत्य वचन धारण कर,
चोथो यो व्यसन तूं शील में दृढ रीजिये॥
पांचमो व्यसन नित्य नियम धारण कर,
छटो यो व्यसन तूं सुपात्र दान दीजिये।
सातमो व्यसन मन सन्तोष धारण कर,
खूब मुनी कहे इम शिवपुर लीजिये॥२२॥

कुछ काम नहीं आवे

सोनारां के पामणो आवे तो घड़े सोनो चांदी,
कुम्मार के आवे तासुं हांडला घड़ावे रे।

दरजी के आवे तासु वस्त्र सिवावे और,
छींपा के आवे तासु चुंदडी वंधावे रे ॥
खाती के आवे तासु लक्कड़ घड़ावे और,
किसान के आवे तासु हल ने हकावे रे।
'खूबचन्द' कहे संत सुनो हो विवेकवंत,
वाणिया का पांवणा न काम कुछ आवे रे ॥२३॥

पिता पुत्र का न्याय

पिता ले पुत्र के तांई, व्याहन आयो चलाई,
सगो रूस गयो तब रुपैया गिणावे रे।
एते नींद आई नींद पिता कहे सिघ्र आई,
उठ बेटा फेरा ले ले, सगो परणावे रे ॥
जान्या है बहुत लेरां जाने तूं देई दे फेरा,
मीठी मीठी नींद आवे मोने क्यों जगावे रे।
'खूबचन्द' कहे अणी दृष्टांत सुजाण नर,
धम में प्रमाद कियां पार किम पावे रे ॥२४॥

झूंठा बोला नर

धनवन्त नर जोंके झूंठ को नहीं है डर,
हांसी में कहत, धावो धावो चोर आया है।
तुरत सुणी ने कई सुभट दौड़ी ने आवे,
ताको कहे मैं तो यूंही बचन सुनाया है ॥
ऐसे ही करत ताके एक दिन चोर आया,
दौड़ो दौड़ो कहे पण कोई न सिधाया है।
'खूबचन्द' कहे सत, प्रतीत उठावो मत,
प्रतीत उठाई जाने प्राण ही गमाया है ॥२५॥

कौन काम की

राज महाराज पायो,घोड़ा गज राज पायो,
खजाना अखूट फिरे आण निज नाम की।
कुटुम्ब संयोग पायो, उत्तम सुभोग पायो,
शरीर निरोग है, अगन्त छवि चाम की ॥
ऊंचा सा आवास पायो, दासी अने दास पायो,
बुद्धि को प्रकाश निगरानी सब काम की।

'खूबचन्द' कहे भाई, सब ही संपति पाई,
दया धर्म बिना जिन्दगानी कौन काम की ॥२६॥

गूजरी मेवाड़ की

नन्दजी के लाल, थारो नाम गऊपाल,
तूं तो गऊआँ चरावे,बैठो रहे छाया झाड़ की।
दौड़यो २ आवे नेड़े,म्हांके क्यों लग्यो हे केड़े,
गरीबां ने छेड़े थारी फूटी हिया नाड़ की ॥
इच्छा व्हे तो मान कान, दूध ने दही को दान,
दांता थने आवे जद मौसम असाढ़ की।
'खूबचन्द' कहे कानो देखत ही रह गयो,
जबाब देई ने गई गूजरी मेवाड़ की ॥२७॥

मारवाड़ी साधुओं का कहना

मेवाड़ मालवा मांही माँकण घणां छे भाई,
धटका भरे छे पूरी नींद नहीं आवे रे।
मच्छर मकोड़ा घटे घणां पाड़े फोड़ा,
और डॉस मॉस सभी खटा चट खटकावे रे ॥
उत्तराध्येन सूत्र का दूसरा अध्येन मांही,
पांचमो परीसो सहवां दोहिलो बतावे रे ॥
'खूबचन्द' कहे हम बोले मारवाड़ी साधु,
मेवाड़ मालवा मांही किण विध आवे रे ॥२८॥

बिना चतुराई-वाली औरत

माथा ऊपर टाट ठाठ, जुंआँ को छटके,
गूंगा भरिया नाक,आंख में कीचड़ लटके ॥
सेड़ां[2] निकले बाहर, लार मुंडा से पटके,।
'खूब' सूंगली नार, देख माहजी सटके ॥२६॥

चौमासो करावनो

चारों ही मास वखाण करे, सम भाव से सूत्र सुणावणो है।
चौथी रसीली हो कंठ कला,मालु राग मल्हार को गावणो है।

१ दंगी । २ रेंट, नाक का श्लेष्म ।

कोड़ी को खर्च भी नांय पड़े, बस धर्म की उद्योत दिपावणो है।
खूब कहे ऐसे संत मिले तब, क्योंनी चोमासो करावणो है ॥३०॥

खुशी है

गाज आवाज मयूर सुनी खुश, चन्द्र को देख चकोर खुशी है।
मात को देख के पुत्र खुशी,और ज्यूं चकवो रवि देख खुशी है॥
फूल सुगंधित देख अली[1] खुश, चातक मेघ को देख खुशी है।
या विध 'खूब' कहे निशिवासर,धर्मी को देख के धर्मी खुशी है ॥३१॥

सुधारे

ज्यों दरजी पट सार अमोलक, वेंत करी कटका कर डारे।
ज्यों तरखान[2] करौत वसूले से,काष्ठ को फाड़ के छोड़ उतारे॥
ज्यों कुम्भकार मिटीधर भाजन, लेकर थापक थापक मारे।
या विध 'खूब' कहे गुरु देव भी सची सुनाय के जन्म सुधारे ॥३२॥

पंजाब की बोल चाल की भाषा

असी[3]-असी तुसी[4]-तुसी साडे[5]-साडे सानु[6]-सानु,
काली[7]-काली कोल[8]-कोल कुड़ी[9]-कुड़ी काम में।
जेड़ा[10]-जेड़ा केड़ा[11]-केड़ा लोड़[12]-लोड़ चंगा[13]-चंगा,
सिमि[14]-तिमि रोला[15]-रोला गल[16]-गल गाम में।
चुक[17]-चुक टुरो[18]-टुरो काकी[19]-काकी काको[20]-काको,
आखो[21]-आखो मुंडो[22]-मुंडो नीको[23]-नीको नाम में।
'खूबचन्द' कहे स्याणा, झूठी होवो पूछ लेणा,
सुणी-सुणी कहूं ऐसी बोली है पंजाब में॥

पहेलियां

एक बगीचे में पुत्र पिता अरु, तीजो सालो अने[24] चौथा बहनोई।
पांचमो मामो ने छट्टो भाणेज है,यों के सिवा बस और न कोई॥
दो दो लड्डू लेके एक ही थाल में, जीम लिये बस शामिल होई।
'खूब' कहे लड्डू ये कितने, जो जोड़ बतावे सो पंडित सोई ॥३४॥
(उ०—लड्डू ६ थे जीमने वाले पुत्र, पिता, और साला, ये तीन थे)

१ भौंरा। २ बढ़ई। ३ हम। ४ तुम। ५ हमारे। ६ मुझे। ७ जल्दी। ८ नजदीक। ९ लड़की। १० कौन सा। ११ कौन सा। १२ चाह। १३ अच्छा। १४ औरतें। १५ शोर। १६ बात। १७ उठा लो। १८ चलो। १९ छोटी लड़की। २० छोटा लड़का। २१ कहो। २२ बड़ा लड़का। २३ छोटा लड़का। २४ और।

उत्तम कुलना तो राजा थाजसी, करसी केई खोटा २ न्याय।
जेहना तो घर में जोड़ो लाधसी, ते धनवन्त कहे वाय ॥९॥
इत्यादिक केही कारण जाणजो, भाख्यो श्री वीर जिनन्द।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य धर्म से पावे ला अधिक आनन्द ॥१०॥